सत्य की झलक
मेरे प्रिय आत्मन,
एक राजकुमार था बचपन से ही सुन रहा था कि पृथ्वी पर एक ऐसा नगर भी है ज हां कि सभी लोग धार्मिक हैं। बहुत बार उस धर्म नगर की चर्चा, बहुत बार उस ध र्म नगर की प्रशंसा उसके कानों में पड़ी थी। जब वह युवा हुआ और राजगद्दी का म ालिक बना तो सबसे पहला काम उसने यही किया कि कुछ मित्रों को लेकर, यह उ स धर्म नगरी की खोज में निकल पड़ा। उसकी बड़ी आकांक्षा थी, उस नगर को देख लेने की, जहां कि सभी लोग धार्मिक हों। बड़ा असंभव मालूम पड़ता था यह।बहुत दिन की खोज, बहुत दिन की यात्रा के बाद, वह एक नगर में पहुंचा, जो बड़ा अनू ठा था। नगर में प्रवेश करते ही उसे दिखायी पड़े ऐसे लोग, जिन्हें देखकर वह चकि त हो गया और उसे विश्वास भी न आया कि ऐसे लोग भी कहीं हो सकते हैं। उस नगर का एक खास नियम था, उसके ही परिणाम स्वरूप यह सारे लोग अपंग हो ग ए हैं। देखो, द्वार पर लिखा है, कि अगर तेरा बांया हाथ पाप करने को संलग्न हो तो उचित है कि तू अपना बाया हाथ काट देना, बजाय कि पाप करे। देखो, लिखा है, द्वार पर कि अगर तेरी एक आंख तुझे गलत मार्ग पर ले जाए तो अच्छा है कि उसे तू निकाल फेंकना, बजाय इसके कि तू गलत रास्ते पर जाए। इन्हीं वचनों का पालन करके यह गांव अपंग हो गया है। छोटे-छोटे बच्चे, जो अभी द्वार पर लिखे इ न अक्षरों को नहीं पढ़ सकते हैं, उन्हें छोड़ दें तो इस नगर में एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं है जो धर्म का पालन करता हो और अपंग न हो गया हो।
वह राजकुमार उस द्वार के भीतर प्रविष्ट नहीं हुआ, क्योंकि वह छोटा बच्चा नहीं थ ा और द्वार पर लिखे अक्षरों को पढ़ सकता था। उसने घोड़े वापस कर लिए और उ सने अपने मित्रों को कहा, हम वापस लौट चलें, अपने अधर्म के नगरों को, कम से कम आदमी वहां पूरा तो है!
इस कहानी से इसलिए मैं अपनी बात शुरू करना चाहता हूं कि सारी जमीन पर ध र्मों के तथाकथित रूप ने आदमी को अपंग किया है। उसके जीवन को स्वस्थ और पू र्ण नहीं बनाया बल्कि उसके जीवन को खंडित, उसके जीवन को अवस्था, पंगु और कुंठित किया है। उसके परिणाम स्वरूप सारी दुनिया में, जिनके भीतर भी थोड़ा वि चार है, जिनके भीतर भी थोड़ा विवेक है, जो थोड़ा सोचते हैं और समझते हैं, उन सब के मन में धर्म के प्रति एक विद्रोह की तीव्र भावना पैदा हुई है। यह स्वाभावि क भी है कि यह भावना पैदा हो। क्योंकि धर्म ने, तथाकथित धर्म ने जो कुछ किया है, उससे मनुष्य आनंद को तो उपलब्ध नहीं हुआ, वरन उदास, और चिंतित और दुखी हो गया है।
निश्चित ही, मेरे देखे, मनुष्य को कुंठित और पंगु करने वाले धर्म को धर्म नहीं कह ता हूं। मैं तो यही कहता हूं कि अभी तक धर्म का जन्म नहीं हो सका है। धर्म के नाम से जो कुछ प्रचलित है, धर्म के नाम से जो मंदिर और मस्जिद और ग्रंथ और शास्त्र गुरु है, धर्म के नाम पर पृथ्वी पर जो इतनी दुकानें है, उन सबसे धर्म का को

ई भी संबंध नहीं है। और यदि हम ठीक-ठीक धर्म को जन्म न दे सके तो इसका ए
क ही परिणाम होगा कि आदमी अधार्मिक होने को मजबूर हो जाएगी।
आदमी विवशता में अधर्म की और गया है धर्म ने आकर्षण नहीं दिया, बल्कि विक
र्षण पैदा किया है। धर्म ने बुलाया नहीं, बल्कि दूर किया है। और अगर, इसी तरह
के धर्म का प्रचलन भविष्य में भी रहा, तो हो सकता है कि मनुष्य के वचन की को
, संभावना भी न रह जाए। धर्मों ने ही धर्म को जन्म लेने से रोक दिया है, और उ
नके रोकने का जो बुनियादी कारण है, वह यही है कि अब तक हमने, मनुष्य जाति
ने मनुष्य को उसकी परिपूर्णता में स्वीकार करने का साहस नहीं दिखलाया। मनुष्य
के कुछ अंगों को खंडित करके ही हम मनुष्य को स्वीकार करने की बात सोचते र
हे। समग्र मनुष्य को, टोटल मनुष्य को विचार में लेने की अब तक हमने हिम्मत नह
ीं दिखायी है। मनुष्य को काट कर, छांट कर, ढांचे में ढालने की हमने कोशिश की
है। उसके परिणाम में, मनुष्य तो पंगु हो गया और जिनमें थोड़ा भी विचार है, वे उ
न ढांचों से दूर रहने के लिए मजबूर हो गए।
मैंने सुना है, एक नगर के द्वार पर एक राक्षस का निवास था। और बड़ी अजीब उ
सकी आदत थी। वह जिन लोगों को भी द्वार पर पकड़ लेता, उनसे कहता कि मेरे
पास एक बिस्तर है, अगर तुम ठीक-ठीक उस बिस्तर पर सो सके तो मैं तुम्हें छोड़
दूंगा। अगर तुम बिस्तर पर छोड़े साबित हुए तो मैं। तुम्हें खींचकर बिस्तर के बराब
र करने की कोशिश करूंगा। उसमें अक्सर लोग मर जाते हैं, तुम भी मर सकते हो,
और अगर तुम बड़े साबित हुए तो तुम्हारे हाथ पैर काट करके बिस्तर के बराबर
करने की कोशिश करूंगा और उसमें भी अक्सर लोग मर जाते हैं! और मैं तुम्हें बत
ाए देता हूं, अब तक एक भी मनुष्य उस बिस्तर से वापस नहीं लौट पाया, फिर मैं
उसका भोजन कर लेता हूं।
उस बिस्तर के बराबर आदमी खोजना मुश्किल था। या तो आदमी थोड़ा छोटा पड़
जाता, या थोड़ा बड़ा, और उसकी हत्या सुनिश्चित हो जाती।
धर्मों ने भी मनुष्य को बनाने के ढांचे कर रखे हैं। आदमी या तो उनसे छोटा पड़ ज
ाता है या बड़ा। और तब पंगु होने के अतिरिक्त अंग भंग हो जाने के अतिरिक्त को
ई मार्ग नहीं रह जाता है। ऐसे पंगु करने वाले धर्मों ने जितना नुकसान किया है उत
ना जिन्हें हम नास्तिक कहें, अधार्मिक कहें, उन लोगों ने भी नहीं किया है। मनुष्य
को सब तरह से जैसे पकड़ दिया गया है जंजीरों में। बात मुक्ति की और स्वतंत्रता
की है। लेकिन स्वतंत्रता और मुक्ति की बात करने वाले लोग ही कारागृह को खड़ा
करनेवाले लोग भी हों, तो बड़ी कठिनाई हो जाती है।
जीवन की धारा को सब तरह से बांधकर एक सरोवर बनाने की कोशिश की जाती
है, जब कि सरोवर बनते ही सरिता के प्राण सूखने लगते हैं, उसकी मृत्यु होनी शुरू
हो जाती है। सरिता का जीवन है अबाध बहे जाने में—नए-नए रास्तों पर, नवीन-न
वीन मार्गों पर, अज्ञात की दिशा में खोज करने में सरिता की जीवंतता है, उसकी ि
लविंगनेस है और उसी अज्ञात के पथ पर, कभी उसका मिलन उस सागर से भी हो

ता है, जिसके लिए उसके प्राण तड़पते हैं। कभी उस प्रेमी से उसका मिलना हो जा
ता है। सरोवर है सब तरफ से बंद, दीवालें खड़े करके हर जाता है, फिर उसके प्रा
ण सूखते तो जरूर हैं, कचरा उसमें इकट्ठा भी होता है, गंदगी उसमें भरती है, की
चड़ होती है। पानी तो धीरे-धीरे उड़ जाता है, धीरे-धीरे कीचड़ का धर ही वहां शे
ष रह जाता है। और उस सरोवर को, सागर से मिलने की सारी संभावनाएं फिर स
माप्त हो जाती है।

जो लोग भी अपने आस-पास कृत्रिम ढांचों की, आर्टिफीशियल पैटर्न की दीवालें खड़ी
कर लेते हैं और सोचते हैं कि वे धार्मिक हैं वे भूल में हैं। धर्म का ढांचों से संबंध
नहीं। धर्म का तो सहज जीवन के प्रवाह से संबंध है। धर्म सरोवर बनाने को नहीं,
एक गतिमान, अबाध गति से बहती हुई स्वतंत्र सरिता बनाने को है, तभी कभी सा
गर से मिलने हो सकता है।

प्रत्येक मनुष्य की जीवन धारा किसी अनंत सागर की खोज में निरंतर प्यासी है। उ
से हम परमात्मा कहें, उसे हम कोई और नाम दें, उसे हम कुछ और शब्द दें, दूसर
ी बात है। लेकिन हर जीवन की धारा किसी प्रीतम के सागर को पाने को जैसे व्या
कुल है और भागी जाना चाहती है। इसे हम जितना बांध लेंगे, जितना सब तरफ से
दीवालें खड़ी करके कारागृह में बंद कर देंगे, उतनी ही कठिन यह यात्रा हो जाएगी
और असंभव। धर्मों ने अब तक यही कि या है, मनुष्य को स्वतंत्र नहीं किया बल्कि
बांधा, मनुष्य को मुक्त नहीं किया, बल्कि जंजीरें और कारागृह बनाए। और हजारों
वर्ष से यह क्रम चला। हजारों वर्ष की प्रचारित बातें धीरे-धीरे फिर हमें सत्य भी
प्रतीत होने लगती हैं, क्योंकि सामान्य जन प्रचारित असत्य को सत्य मान लेने को
सहज ही राजी हो जाता है।

एडाल्फ हिटलर ने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि मैंने सत्य और असत्य में एक
ही फर्क पाया। ठीक से प्रचारित असत्य सत्य मालूम होने लगता है। और उसे लिखा
कि मैं अपने अनुभव से कहता हूं कि कैसे भी असत्य को ढंग से प्रचारित किया जा
ए, थोड़े दिन में लोग उसे सत्य मान लेने को राजी हो जाते हैं। तो हजारों वर्ष तक
अगर कोई एक असत्य प्रचारित किया जाए तो वह हमें सत्य जैसा दिखायी पड़ने
लगता है।

तो जो हमारे बंधन हैं, वे भी हमें ऐसे प्रतीत हो सकते हैं, जैसे हमारी मुक्ति हों।
जो हमें रोकते हैं पहुंचने से, प्रतीत हो सकते हैं कि हमारी सीढ़ियां हैं और हमें ले
जा सकते हैं।

मैंने सुना है, एक पहाड़ी सराय पर एक युवक एक रात मेहमान हुआ। जब वह पहा.
डी में प्रवेश करता था तो घाटियां उसने किसी बड़ी अदभुत और मार्मिक आवाज से
गूंजती हुई सुनी। घाटियां में कोई बड़े मार्मिक, बड़े आंसू भरे, बहुत प्राणों की पूर
ी ताकत से रोता और चिल्लाता था। यह आवाज गूंज रही थी घाटियों में स्वतंत्रता,
स्वतंत्रता। वह हैरान हुआ कि कौन स्वतंत्रता का प्रेमी इन घाटियों में इतने जोर से
आवाज करता होगा। लेकिन जब वह सराय के निकट पहुंचा तो आवाज और निक

ट सुनाई पड़ने लगी, शायद सराय से ही आवाज उठती थी। शायद कोई वहां बंदी था। उसने अपने घोड़े की रफ्तार आर तेज कर ली। वह सराय पर पहुंचा तो हैरान हो गया।यह किसी मनुष्य की आवाज न थी। सराय के द्वार पर पिंजड़े में एक तोत ा बंद था और जोर से स्वतंत्रता-स्वतंत्रता चिल्ला रहा था। उस युवक को बड़ी दया आयी उस तोते पर। वह युवक भी अपने देश की आजादी की लड़ाइयों में बंद रहा था, कारागृहों में और वहां उसने अनुभव किया था, परतंत्रता का दुख। वहां उसने आकांक्षा अनुभव की थी, मुक्त आकाश की। वहां उसकी आकांक्षा ने, वहां उसके स्वप्नों ने स्वतंत्रता के जाल गूंथे थे। आज उसे तोते की आवाज में अपनी उस सारी पीड़ा से कराहती हुई आत्मा का अनुभव हुआ, और सराय का मालिक अभी जागता था। सोचा उसने रात में इस तोते को स्वतंत्र कर दूं।

राज जब सराय का मालिक सो गया, वह युवक उठा। उसने जाकर पिंजड़े का द्वार खोला। सोचा था स्वतंत्रता का प्रेमी तोता उड़ जाएगा, लेकिन द्वार खोलते ही तोते ने सींखचे पकड़ लिए पैरों से और जोर से चिल्लाने लगा—स्वतंत्रता, स्वतंत्रता, स्वतंत्रता। वह युवक हैरान हुआ। द्वार खुले थे, उड़ जाना चाहिए था, न उड़ जाने की कोई बात न थी। लेकिन शायद उसने सोचा, मुझसे भयभीत हो, इसलिए उसने हाथ भीतर डाला लेकिन तोते ने उसके हाथ पर चोट की। पिंजड़े के सीखचों को और जोर से पकड़ लिया। युवक ने यह सोचकर कि कहीं उसका मालिक न जाग जाए, चोट भी सही और किसी तरह बमुश्किल उस तोते को निकाल कर आकाश में उड़ा दिया।

वह युवक बड़ी शांति से सो गया, एक आत्मा को स्वतंत्र करने का आनंद उसे अनुभव हुआ था। लेकिन सुबह, जब उसकी नींद खुली तो उसने देखा, तोता वापस अपने पिंजड़े में आकर बैठ गया है। द्वार खुला पड़ा था, और तोता चिल्ला रहा है स्वतंत्रता, स्वतंत्रता, स्वतंत्रता। वह बहुत हैरान हुआ, वह बहुत ही मुश्किल में पड़ गया। यह आवाज कैसी, यह प्यास कैसी, यह आकांक्षा कैसी! यह तोता पागल तो नहीं है। वह तोते के पिंजड़े के पास खड़े होकर यही सोचता था कि सराय का मालिक वहां से निकला, और उसने कहा, बड़ा अजीब है तुम्हारा तोता। मैंने इसे मुक्त कर दिया था, लेकिन यह तो वापस लौट आया। उस सराय के मालिक ने कहा, तुम पहले आदमी नहीं हो, जिसने इसे मुक्त किया हो। जो भी यात्री यहां ठहरता है, उसकी आवाज के धोखे में आ जाता है। रात इसे मुक्त करने की कोशिश करता है। सुबह खुद ही हैरानी में पड़ जाता है, तोता वापस लौट आता है। उसने कहा, बड़ी अजीब तोता है तुम्हारा। उस बूढ़े मालिक ने कहा, तोता ही नहीं, हर आदमी इसी तरह अजीब है। जीवन भर चिल्लाता है, मुक्ति चाहिए, स्वतंत्रता चाहिए और उन्हीं सींखचों को पकड़े बैठा रहता है, जो उसके बंधन हैं और उसके कारागृह हैं।

मैंने जब यह बात सुनी तो मैं भी बहुत हैरान हुआ। फिर मैंने आदमी को बहुत गौर से देखने की कोशिश की, तो मैंने पाया कि जरूर यह बात सच है। आदमी का पिंजड़ा दिखायी नहीं पड़ता, यह दूसरी बात है, लेकिन हर आदमी उन पिंजड़े के सींख

चों को पकड़े हुए हैं, यह भी बहुत ऊपर से दिखायी नहीं पड़ता, क्योंकि तोते का ि पजड़ा बहुत स्थूल है, आदमी का पिंजड़ा बहुत सूक्ष्म है। आंख एकदम से उसे नहीं दे ख पाती। लेकिन थोड़े ही गौर से देखने पर यह दिखायी पड़ जाती है कि हम एक ही साथ दोनों काम कर रहे हैं कि आकांक्षा कर रहे हैं मुक्ति की, आकांक्षा कर रहे हैं किसी विराट के मिलन की, और क्षुद्र सींखचों को इतने जोर से पकड़े हुए हैं कि हम उन्हें छोड़ने का नाम भी नहीं लेते। और कुछ लोग हैं, जो हमारे इस विरोधाभ ास का हमारे इस कंट्राडेक्शन का, हमारे जीवन की इस बहुत अदभुत उलझन का फायदा उठा रहे हैं। तोते के ही मालिक नहीं होते, आदमी के भी मालिक हैं, और वे मालिक भली भांति जानते हैं कि आदमी जब तक पिंजड़े के भीतर बंद हैं, तभी तक उसका शोषण हो सकता है। तभी तक उसका एक्सप्लाइटेशन हो सकता है। जि स दिन वह पिंजड़े के बाहर हैं, उस दिन शोषण की कोई दीवाल, किसी भांति का शोषण संभव नहीं रह जाएगा। और सबसे गहरा शोषण जो आदमी का हो सकता है , वह उसकी बुद्धि के और उसके विचार का शोषण, उसकी आत्मा का शोषण है। दुनिया में उन लोगों ने, जिन्होंने आदमी के शरीर को कारागृह में डाला हो, उनका अनाचार बहुत बड़ा नहीं है। जिन्होंने आदमी के आसपास दीवालें खड़ी की हों, उन्हों ने कोई बहुत बड़ी परतंत्रता पैदा नहीं की। क्योंकि एक आदमी की देह भी बंद हो सकती है, कारागृह में और फिर भी हो सकता है कि वह आदमी बंदी न हो। उसक ी आत्मा, दीवाली के बाहर उड़ान भरे, उसकी आत्मा सूरज के दूर पंथों पर यात्रा करें, उसके सपने दीवालों को अतिक्रमण कर जाए। देह बंद हो सकती है, और हो कसता है, भीतर जो बैठा हो, वह बंद न हो। जिन लोगों ने मनुष्य के शरीर के लि ए कारागृह उत्पन्न किए, वे बहुत बड़े जेलर नहीं थे। लेकिन जिन्होंने मनुष्य की आत मा के लिए सूक्ष्म कारागृह बनाए हैं, वे मनुष्य के बहुत गहरे में शोषक, मनुष्य के जीवन पर आने वाली चिंताओं, दुखों का बोझ डालने वाले, सबसे बड़े जिम्मेदार, वे ही लोग हैं। और वे लोग कौन है? जिन लोगों ने भी धर्म के नाम पर धर्मों को नि र्मित किया है, वे सभी लोग, जिन लोगों ने परमात्मा के नाम पर छोटे-छोटे मंदिर खड़े किए हैं और मस्जिद, और चर्च वे सभी लोग। जिन लोगों ने भी धर्म के नाम पर शास्त्र निर्मित किए हैं और दावा किया है, उन शास्त्रों में परमात्मा की वाणी होने को, वे सभी लोग। वे सभी लोग, उन्होंने मनुष्य के अंतस चित्त को बांध लेने की बड़ी सूक्ष्म ईजादें की हैं, वे सभी लोग।

वे कौन सी सूक्ष्मतम जंजीरें हैं, जो आदमी को बांध रखती हैं? उस संबंध में अभी कहूंगा। तीन चर्चाएं यहां मुझे देनी हैं, तीन चर्चाओं में कोशिश करूंगा कि बंधन सम झ में आ सकें, हम क्यों बंधन में बंधे हैं, यह समझ में आ सके और हम कैसे बंध से मुक्त हो सकते हैं, यह समझ में आ सके। कौन से बंधन मनुष्य को घेर लिए हैं, इतनी सूक्ष्मता से? शायद खयाल में भी न आए। खयाल में आएगा भी नहीं। उस तोते को भी खयाल में नहीं आ सकता था कि मैं क्या चिल्ला रहा हूं और क्या पक. डे हुए हूं?

पहला बंधन जो मनुष्य के आसपास कारागृह को खड़ा किया है, वह है श्रद्धा का, ि
वश्वास का, बिलीफ का। हजारों वर्षों से यह समझाया जा रहा है, विश्वास करो। य
ह जहर हम बच्चे को उसके पैदा होने के साथ ही पिलाना शुरू कर देते हैं। दूध शा
यद बाद में पिलाते हैं, यह जहर पहले पिला देते हैं--विश्वास करो। और जो आदमी
 विश्वास करने को राजी हो जाता है, उसके भीतर विचार की क्षमता हमेशा के लि
ए पंगु हो जाती है। उसके भीतर विचार के हाथ पैर टूट जाते हैं, विचार की आंखें
फूट जाती हैं, क्योंकि विश्वास, या विचार, दोनों एक साथ संभव नहीं है। क्योंकि वि
श्वास की पहली शर्त है, संदेह मत करो, और विचार की पहली शर्त है, संदेह करो
, ठीक ठीक सदेह करो। विश्वास कहता है, शक मत करो, मान लो। विचार कहता
 है, मानने की जल्दी मत करना, हेजीटेट करना, थोड़े ठहरना, थोड़े रुकना, थोड़े स
ोचना। विश्वास कहता है, एक क्षण रुकने की जरूरत नहीं है। विचार कहता है, चा
हे पूरा जीवन ही क्यों न रुकना पड़े, लेकिन प्रतीक्षा करना, जल्दी मत करना। सोच
ना, खोजना, चिंतन करना, मनन करना, और तभी शायद, जो सत्य है, उसकी झ
लक उपलब्ध हो सके।

लेकिन विश्वास बड़ा सस्ता नुस्खा है, बहुत शार्ट कट है। बहुत सीधा सा दिखाई पड़
ता है। हमें कुछ भी नहीं करना है, कोई हमसे कहता है, विश्वास कर लो, परमात्म
ा है। कोई हमसे कहता है विश्वास कर लो, परमात्मा नहीं है। कोई हमसे कहता है
 विश्वास कर लो, आत्मा है। कोई हमसे कहता है, विश्वास कर लो स्वर्ग है, मोक्ष
है। दुनिया के ये इतने धर्म--कोई तीन सौ धर्म जमीन पर हैं, इन सबमें आपस में ि
वरोध है। ये एक दूसरे की बात से राजी नहीं हैं। ये एक दूसरे के शत्रु हैं। लेकिन ए
क बात पर ये सब सहमत हैं कि विश्वास करो। इस जहर को पिलाने में इनका को
ई विरोध नहीं है। यह इन सबकी बुनियाद है।

तो आप चाहे हिंदू हों, चाहे मुसलमान, चाहे ईसाई। अगर आप विश्वास करते हैं, इ
समें कोई फर्क नहीं पड़ता है कि आपने आंख पर किस रंग की पट्टियां बांध रखी हैं।
 वे हरी हैं कि लाल कि सफेद, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। आंख पर पट्टियां हैं, ब
स इतना काफी है। आपके जीवन में विचार का जन्म नहीं हो सकेगा। और हनीं चा
हते हैं समाज के न्यस्त स्वार्थ कि मनुष्य में विचार पैदा हो। क्योंकि विचार आधारभू
त रूप से विद्रोह है। विचार में रिवेलियन छिपा है, विचार में रिव्योलूशन छिपी है।
वहां क्रांति का बीज है, जो विचार करेगा, वह आज नहीं कल, खुद तो क्रांति से गु
जरेगा ही, उसके आसपास भी वह क्रांति की हवाएं फेंकेगा। क्योंकि विचार झुकने क
ो राजी नहीं होता, विचार अंधा होने को राजी नहीं होता, विचार आंख बंद कर ले
ने को राजी नहीं होता।

मैंने सुना है, एक गांव में एक विचारक तेली के घर तेल खरीदने गया। देखकर, उ
से वहां बड़ी हैरानी हुई। तीली तो तेल तौलने लगा। उसके ही पीछे कोल्हू का बैल
कोल्हू को चलाए जाता था, बिना किसी चलाने वाले के। कोई चलाने वाला न था।
उस विचारक ने उस तेली से पूछा, मेरे मित्र, बड़ा अदभुत है यह बैल। बड़ा धार्मिक

, बड़ा विश्वासी मालूम होता है। कोई चलाने वाला नहीं है और चल रहा है? उस तेली ने कहा, थोड़ा गौर से देखो, देखते नहीं, आंखें मैंने उसकी बांध रखी हैं। आंखें बंधी हैं, उसे दिखाई नहीं पड़ता कि कोई चला रहा है कि नहीं चला रहा है। चल ता जाता है। इस खयाल में है कि कोई चला रहा है। उस विचार ने कहा, लेकिन यह रुककर जांच भी तो कर सकता है कि कोई चलाता है या नहीं उस तेली ने क हा, फिर भी तुम ठीक नहीं देखते। मैंने उसके गले में घंटी बांध रखी है। जब तक चलता है, घंटी बजती रहती है। जब रुक जाता है, घंटी बंद हो जाती है, मैं फौरन उसे जाकर फिर से हांक देता हूं, ताकि उसे यह भ्रम बना रहता है कि कोई पीछे मौजूद है।

उस विचारक ने कहा, और यह भी तो हो सकता है कि वह खड़ा हो जाए और सि र हिलाता रहे ताकि घंटी बजे। उस तेली ने कहा, महाराज, मैं आपके हाथ जोड़ता हूं, आप जल्दी यहां से चले जाएं, कहीं मेरा बैल आपकी बात न सुन ले। आपकी बातें खतरनाक हो सकती है। बैल विद्रोही हो सकता है। आप कृपा करें, यहां से जा एं और आगे से कोई और दुकान से तेल खरीद लिया करें। यहां आने की जरूरत न हीं है। मेरी दुकान भली भांति चलती है, मुफ्त मुसीबत खड़ी हो सकती है।

आदमी के शोषण पर भी धर्म के नाम पर बहुत दुकानें हैं। जिन्हें हम परमात्मा के मंदिर कहते हैं, जरा भी वे परमात्मा के मंदिर नहीं हैं, दुकानें हैं, पुरोहित की ईजा द है। परमात्मा का भी कोई मंदिर हो सकता है, जो आदमी बनाए? परमात्मा के ि लए भी मंदिर की व्यवस्था आदमी को करनी पड़ेगी क्या? कैसी छोटी, छोटी अजीब बात है बनाएंगे उसके लिए मंदिर? उसके निवास की व्यवस्था हम करेंगे? और ह मारे छोटे-छोटे मकानों में वह विराट समझ सकेगा? प्रवेश पा सकेगा?

नहीं, यह तो संभव नहीं है। और इसीलिए जमीन पर कितने मंदिर हैं, कितने चर्च, कितनी मस्जिद, कितने गिरजे, कितने शिवालय, कितने गुरुद्वारे--लेकिन धर्म कहां है, परमात्मा कहां है? इस ज्यादा धार्मिक और कोई स्थिति हो सकती है, जो हमार ी है? और यह मंदिर ही और मस्जिद ही और मस्जिद ही रोज अधर्म के अड्डे बन जाते हैं हत्या के, आगजनी के, बलात्कार के। इनके भीतर से ही आवाजें उठती हैं, जो मनुष्य-मनुष्य को टुकड़ों-टुकड़ों में तोड़ देती हैं। इनके भीतर से ही वे नारे आ ते हैं, जो आदमी के जीवन में हजार-हजार तरह के विद्वेष, घृणा फैला जाते हैं। हिं सा पैदा कर जाते हैं।

अगर किसी दिन, किसी आदमी ने यह मेहनत उठानी पसंद की और यह हिसाब ल गाया कि मंदिर और मस्जिदों के नाम पर कितना खून बहा है, तो आप हैरान हो जाएंगे, और किसी बात पर इतना खून कभी भी नहीं बहा है। और आप हैरान हो जाएंगे कि आदमी के जीवन में जितना दुख, जितनी पीड़ा इनके कारण पैदा हुई है और किसी के कारण पैदा नहीं हुई है। और आदमी-आदमी के बीच जो प्रेम हो सक ता था, वह असंभव हो गया है, क्योंकि आदमी-आदमी के बीच चर्च और मंदिर बड़ ी मजबूत दीवाल की तरह आ जाते हैं। और क्या कभी हम सोचते है, कि जो दीवा

लें आदमी को आदमी से अलग कर देती हों, वे दीवालें आदमी को परमात्मा से मि लाने का सेतु बन सकते हैं, मार्ग बन सकती हैं? जो आदमी को ही आदमी से नहीं मिला पातीं, वह आदमी को परमात्मा से कैसे मिला पाएंगे?

नहीं, यह मस्जिद और मंदिर कोई भी परमात्मा के मंदिर नहीं हैं। परमात्मा का मंदिर तो तब सब जगह मौजूद है, क्योंकि जहां परमात्मा मौजूद है, वहां उसका मंदिर भी मौजूद है। आकाश के तारों में और जमीन के आसपास में और वृक्षों में, और मनुष्य की और पशुओं की आंखों में और सब तरफ और सब जगह कौन मौजूद है? किसका मंदिर मौजूद है? इतने बड़े मंदिर को, इतने विराट मंदिर को जो नहीं देख पाते, वे छोटे-छोटे मंदिर में उसे देख पाएंगे? खुद उसके ही बनाए हुए भवन में जो उसे नहीं खोज पाते, वे क्या आदमी के द्वार बनायी गयी ईंट चूने के मकानों में उसे खोज पाएंगे? जिनकी आंखें इतने बड़े को भी नहीं देख पातीं, जो इतने ओबियस है, जो इतना प्रकट है और चारों तरफ मौजूद है, चेतना के इस सागर को भी जिनका जीवन स्पर्श नहीं कर पाता, वह आदमी के बनाए हुए ईंटों की दीवालों, कारागृहों में, बंद मूर्तियों में उसे खोज पाएगा? नासमझी है, निपट नासमझी है। जो इतने विराट मंदिर में नहीं देख पाता, वह उसे और कहीं भी देखने में समर्थ नहीं हो सकता।

लेकिन, यह हमने खड़े किए, और हमने दावा किया कि यह परमात्मा के मंदिर हैं। और हमने लोगों से कहा, विश्वास करो, और हमने दावा किया कि आदमियों की लिखी हुई किताबें परमात्मा के वचन है, और हमने लोगों को कहा, विश्वास करा, और हमने जो भी ठीक समझा, वह कहां, और लोगों से कहा विश्वास करो असंदिग्ध, संदेह करना। संदेह भटका देता है संदेह भ्रम में ले जाएगा। संदेह का परिणाम नर्क होगा। हमने भयभीत किया मनुष्य को, डर दिखलाया दंड का। प्रलोभन दिखलाया स्वर्ग का कि मान लोगे तो स्वर्ग है, न मानोगे तो नर्क है और ऐसे, हमने मनुष्य के लोभ और भय को उत्प्रेरित किया और हजार-हजार वर्षों से एक शिक्षा ही दी, विश्वास कर लेने की। और विश्वास में फिर हम बड़े होते गए, और परिणाम यह है, कितने लोग हैं, जिन्हें जीवन में परमात्मा की किरण बोध हो पाता है!

पांच हजार या दस हजार साल विश्वास की शिक्षा कितने लोगों को ईश्वर के निकट ले गयी? कहां हैं वे लोग? वे तो खोजे से भी दिखायी नहीं पड़ते। क्या दस हजार साल का यह परीक्षण, काफी लंबा परीक्षण नहीं हो गया? क्या यह काफी मौका नहीं था कि विश्वास के द्वार जीवन बदल जाता? और अगर दस हजार वर्षों में यह नहीं हुआ तो यह कब होगा?

मैं आपसे निवेदन करूंगा, विश्वास असफल हो गया हो, पूरी तरह असफल हो गया है। बहुत समय हम दे चुके उसके लिए। उससे कुछ भी नहीं हुआ है, सिवाय इसके कि आदमी और अंधा हुआ हो, आदमी और नीचे गिरा हो, आदमी ने और आत्म बल खो दिया हो। आदमी के जीवन में कोई आनंद की लहर न तो पैदा हुई, न कोई अमृत का दर्शन हुआ, न किसी परमात्मा की संन्निधि मिली।

मैं निवेदन करना चाहता हूं, विश्वास पिंजड़े का सीखचा है। क्योंकि जब भी हम कि सी बिना जाने किसी बात को मान लेते हैं तो हम अपने को अंधा करने को तैयार होते हैं। जब भी हम बिना अनुभव किए किसी बात को स्वीकार कर लेते हैं, तब ह म अपने भीतर जो विवेक की ऊर्जा थी, उसकी हत्या कर देते हैं, और यह सवाल नहीं है कि हम क्या मानने को राजी हो जाए। अगर हिंदुस्तान में आप पैदा हुए हैं तो आप मान लेंगे कि ईश्वर है और असर रूस में, पैदा हुए हैं तो वहां का कम्युनिस ट धर्म लोगों को समझाता है, ईश्वर नहीं है। वहां का बच्चा इसको मान लेता है। तो वह भी कहते है, विश्वास करो। हम कहते है गीता पर, वे कहते हैं दास कैपिट ल पर। लेकिन विश्वास के मामले में उनका भी कोई झगड़ा नहीं है। यह कम्युनिज्म सब से नया धर्म है। और यह, चाहे रूस में विश्वास दिलाया जाए कि ईश्वर नहीं है, चाहे भारत में कि ईश्वर है, लेकिन दोनों ही बातों को जो लोग स्वीकार कर ले ते हैं, वे लोग अपने जीवन में कभी सत्य की खोज नहीं कर सकेंगे।

सत्य की खोज के लिए पहली जरूरत है कि जो मैं नहीं जानता हूं, जो मेरा अनुभव नहीं है, जो मेरी प्रतीति नहीं है, उसे मैं स्पष्ट रूप से कह सकूं कि मैं नहीं जानता हूं। मैं कह सकूं कि मुझे पता नहीं है। मैं अपने अज्ञान को स्वीकार कर सकूं। सत्य के खोजी की पहली शर्त, पहला लक्षण है अपने अज्ञान का स्वीकार, लेकिन विश्वा सी अज्ञान को स्वीकार नहीं करता। वह यह मानने को राजी नहीं होता कि मैं नहीं जानता हूं। उसे तो दूसरे लोग जो सिखाते हैं, वह मान लेता है कि यह मेरा जानना है अगर मैं आपसे पूछूं, आप ईश्वर को जानते हैं? और आपके भीतर से कोई कहे गा, हां, ईश्वर है। नहीं तो दुनिया। किसने बनायी? यह बातें सिखायी हुई हैं। यह द लीलें सुनी हुई है और इनको हम पकड़कर बैठ गए। तो हम रुक गए है, हमारी खो ज बंद हो गयी है। हमने आगे जाने की फिर कोशिश नहीं की।

विश्वास कभी भी आगे नहीं ले जाता, संदेह आगे ले जाता।

क्योंकि संदेह से पैदा होती है जिज्ञासा, इनक्वायरी और इनक्वायरी गति देती है—प्रा णों को—नए-नए द्वार खोलने की, नए-नए मार्ग छान लेने की, दूर-दूर, कोनों-कोनों तक खोज बीन कर लेने की कि कहीं कुछ हो, मैं उसे जान लूं। जो जानना चाहता है धर्म को परमात्मा को, प्रभु को या सत्य को, उसे अपने अज्ञान की स्वीकार कर लेने के लिए तैयार होना चाहिए। लेकिन हम तो झूठे ज्ञान को मान लेने को तैयार है। और फिर उस ज्ञान में, उस विश्वास में यह भ्रम पैदा हो जाता है हमारे भीतर कि हम जानते हैं। और जिसको हम जानते हज, उससे हमारा संबंध समाप्त हो जा ता है। क्योंकि उसके प्रति फिर हमारी कोई जिज्ञासा नहीं, कोई खोज नहीं उसके प्रि त हमारे भीतर कोई ऊहा-पोह नहीं, कोई चिंतन नहीं। फिर हमारा बंद हो गया म न वहां, और हमारे भीतर, जो विचार की बड़ी ऊर्जा थी कुंठित पड़ी रह जाएगी। स्मरण रखें, विचार तो प्रत्येक का जन्मजात हिस्सा है। विश्वास? विश्वास सिखाए ज ाते हैं। विश्वास लेकर कोई पैदा नहीं होता। बिलीफ्स लेकर कोई पैदा नहीं होता। स ब विश्वास सिखाए जाते हैं, लेकिन विचार लेकर हर एक पैदा होता है। विचार पर

मात्मा से मिलता है, विश्वास धर्म पुरोहित से विश्वास मिलते हैं समाज के अगुओं से, समाज के न्यस्त स्वार्थ शोषकों से, समाज के ढांचे कायम रखने वाले लोगों से। और विचार? विचारक प्रत्येक की आत्मा की अपनी शक्ति है। जो विचार से चलेगा, वह तो पहुंच सकता है। जो विश्वास पर रुक जाता है, उसका पहुंचना असंभव है।

पहला सींखचा है हमारे बंधन का, वह श्रद्धा।
नहीं, श्रद्धा नहीं चाहिए। चाहिए, सम्यक संदेह, राइट डाउट। चाहिए स्वस्थ संदेह। इन मुल्कों मग हम देखें, जहां श्रद्धा का प्रभाव रहा, वहां विज्ञान का जन्म नहीं हो सका। आगे भी नहीं हो सकेगा, क्योंकि जहां श्रद्धा बलवती है, वहां खोज ही पैदा नहीं होती। जिन मुल्कों में विज्ञान का जन्म हुआ, वह तभी हो सका, जब श्रद्धा के सिंहासन पर संदेह विराजमान हो गया। आज भी जो कौमें विज्ञान की दृष्टि से पिछड़ी हैं, वे ही कौमें हज, जिनका विश्वास पर आग्रह है। और न केवल विज्ञान के लिए यह बात सच है, धर्म के लिए भी उतनी ही सच है, क्योंकि धर्म तो परम विज्ञान है, वह तो सुप्रीम साइंस है।
वैज्ञानिक तो फिर भी हाइपोथीसिस को मानकर चलता है, थोड़ा बहुत। एक अनुमान स्वीकार करता है, एक परिकल्पना स्वीकार करता है। लेकिन धर्म को खोजी परिकल्पना को भी स्वीकार नहीं करता। कुछ भी स्वीकार नहीं करता। निपट, सहज जिज्ञासा को लेकर गतिमान होता है। प्रश्न तो उसके पास होते हैं, उत्तर उसके पास नहीं होते। पूछता है जीवन से। खोजता है, बाहर और भीतर और बिना कुछ स्वीकार किए खोजता चला जाता है, खोजता चला जाता है, जब स्वीकार नहीं करता है तो उसकी खोज की मेधा तीव्रतर होती चलती जाती है, इनटेंस से इनटेंस होती चली जाती है। और एक दिन उसकी यह प्यास और खोज इतनी गहनतम, इतनी चरम तीव्रता को उपलब्ध हो जाती है कि उसी चरम तीव्रता में, उसी चरम तीव्रता के उत्ताप में एक द्वार खुल जाता है और वह जानने में समर्थ होता है।
जिज्ञासा चाहिए, विश्वास नहीं।
और विश्वास हमारा पहला बंधन है, जो हमें चारों तरफ से बांधे हुए हैं। ठीक उसके साथ ही बंधा हुआ दूसरा बंधन है, जिसने हमारा कारागृह बनाया और वह है अनुगमन, फालोइंग, किसी दूसरे के पीछे चलना। किसी को मान लेना विश्वास से किसी के पीछे चलना अंधानुकरण है। और इधर हजारों वर्षों से में यह सिखाया जाता रहा है कि दूसरों के पीछे चलो, दूसरे जैसे बनो--राम जैसे बनो, कृष्ण जैसे बनो, बुद्ध जैसे बनो। और अगर पुराने नाम फीके पड़ गए हैं तो हमेशा नए नाम मिल जाते हैं कि गांधी जैसे बनो, विवेकानंद जैसे बनो। लेकिन आज तक किसी ने नहीं कहा कि हम अपने जैसे बनें।
किसी दूसरे जैसा कोई क्यों बने? और क्या यह संभव है कि कोई किसी दूसरे जैसा बन सके। क्या यह आज तक कभी संभव हुआ है कि दूसरा राम पैदा हो? कि दूसरा बुद्ध, कि दूसरा क्राइस्ट। क्या तीन चार हजार वर्ष की नासमझी भी हमें दिखाई न

हीं पड़ती? क्राइस्ट को हुए दो हजार साल हो गए, और कितने पागलों ने यह कोशिश नहीं की कि वह क्राइस्ट जैसे बन जाएं। लेकिन क्या कोई दूसरा क्राइस्ट बन सका? नहीं बन सका। क्या इससे कुछ बाप स्पष्ट नहीं होती है? क्या यह स्पष्ट नहीं होता कि हर मनुष्य एक अद्वितीय, यूनीक व्यक्तित्व है? कोई मनुष्य किसी दूसरे जैसा बनने को पैदा भी नहीं हुआ?

परमात्मा के घर कोई कारखाना नहीं है फोर्ड जैसा कि एक सी कारें निकालता चला जाए। परमात्मा कोई कारखाना नहीं है, कोई ढांचा नहीं है। शायद परमात्मा एक कवि है, शायद एक चित्रकार है जो नए चित्र बनाता है, रोज नयी कविता लिखता है। शायद इतना जीवंत है उसका उत्पादन, उसका सृजन कि वह रोज नयी प्रतिमाएं गढ़ लेता है। पुरानी प्रतिमाओं पर लौटने योग्य अभी तक उसकी नहीं आयी। अभी भी नए के सृजन की क्षमता उसकी मौजूद है, इसलिए रोज नया-नया।—हर व्यक्ति नया है, और अलग, और पृथक। और जिस दिन यह संभव होगा जमीन कि सारे व्यक्ति एक जैसे हो जाएं, उस दिन आदमी नहीं होगा जमीन पर, मशीनें होंगी। उस दिन से ज्यादा दुर्भाग्य का कोई दिन न होगा।

तो मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि अंधानुकरण, किसी दूसरे जैसे बनने की कोशिश में आदमी बहुत गहरे बंधन में पड़ता है। और बंधन में इसलिए पड़ता है कि दूसरे जैसा तो वह कभी बन ही नहीं सकता है, इसलिए कि असंभावना है, यह इंपोसिबिलिटी है। लेकिन इस कोशिश में, अभिनय कर सकता है दूसरे जैसा। उसकी आत्मा अलग हो जाती है, अभिनय अलग हो जाता है। राम तो बन नहीं सकता है कोई, लेकिन रामलीला का राम बन सता है। राम लीला का राम बिलकुल झूठा आदमी है। ऐसे आदमी की जमीन पर कोई भी जरूरत नहीं है। राम लीला का राम एक अभिनय है, एक एक्टिंग है। ऊपर से हम कुछ ओढ़ ले सकते हैं, भीतर आत्मा होगी पृथक, यह ओढ़े हुए वस्त्र होंगे अलग। इन दोनों के बीच एक द्वंद्व होगा, एक काफिलक्ट होगी, एक सतत कलह होगी, और अभिनय कभी भी आनंद नहीं ला सकता। देखने वालों को लाता हो, यह दूसरी बात है, लेकिन जो अभिनय कर रहा है, वह निरंतर यह पीड़ा अनुभव करता है कि मैं किसी और जगह खड़ा हूं, मैं अपनी जगह नहीं हूं। मैं कोई और हूं, मैं वही नहीं हूं, जो हूं। वैसा आदमी कभी आत्म स्थित नहीं हो पाता, क्योंकि वह निरंतर दूसरे के अभिनय में व्यस्त होता है।

यह भी हो सकता है कि कोई राम का अभिनय इतनी कुशलता से करे कि खुद राम भी मुसीबत में पड़ जाए, यह हो सकता है। क्योंकि अभिनेता को भूल चूक नहीं करनी पड़ती है, उसका सब पार्ट रटा हुआ तैयार होता है। खुद राम से भूल चूक हो सकती है, क्योंकि पाठ तैयार नहीं है, पहले सब सिखाया हुआ नहीं है। जिंदगी रोज सामने आती है। असली आदमी भूल चूक कर सकता है, नकली आदमी कभी भूल चूक नहीं कर सकता इसलिए जो आदमी कभी भूल चूक न करता हो, समझ लेना, उस आदमी में कुछ नकली मौजूद है। वह किसी ढांचे में ढला हुआ आदमी है, जिंदा नहीं है।

जिंदगी में भूल चूकें हैं। यह हो सकता है, राम लीला का अभिनय किसी ने बीस बार किया हो, राम को विचारों को एक ही बार मौका मिला है, बीस बार मौका नहीं मिला। यह हर बार ज्यादा कुशल होता चला जाएगा और ऐसा भी हो सकता है, एक दिन अगर असली राम के सामने उसे खड़ा कर दें, तो जनता उस नकली को पूजे, असली को छोड़ दे। अक्सर ऐसा होता है। क्योंकि यह होगा बहुत कुशल। इस की एफिशिएंसी, इसकी कुशलता का मुकाबला राम नहीं कर सकते।

ऐसा एक दफा हुआ, ऐसी एक घटना घटी। चार्ली चेप्लिन को उसके जन्म दिन पर, एक विशेष जन्म दिन पर, पचासवी वर्ष गांठ पर, कुछ मित्रों ने चाहा कि एक अभिनय हो। सारी दुनिया से कुछ अभिनेता आए और चार्ली चेप्लिन का अभिनय करें और उनमें जो प्रथम आ जाए, ऐसे तीन लोगों को पुरस्कार इंग्लैंड की महारानी दे। सारे यूरोप में प्रतियोगिता हुई। सौ प्रतियोगी चुने गए। चार्ली चेप्लिन ने मन में सोचा, मैं भी किसी दूसरे गांव से जाकर, मैं भी क्यों न सम्मिलित हो जाऊं। मुझे तो प्रथम पुरस्कार मिल ही जाना है। इसमें में कोई शक सुबह की बात नहीं। मैं खुद चार्ली चेप्लिन हूं। और जब बात खुलेगी तो लोग हंसेंगे, एक मजाक हो जाएगी। मजाक हुई जरूर, लेकिन दूसरे कारण से हुई। चार्ली चेप्लिन को द्वितीय पुरस्कार मिला। और जब बात खुली कि खुद चार्ली चेप्लिन भी उन सौ अभिनेताओं में सम्मिलत था तो सारी दुनिया हंसी और हैरान हो गई कि यह कैसे हुआ? एक दूसरा आदमी बाजी ले गया चार्ली चेप्लिन होने की प्रतियोगिता में और चार्ली खुद नंबर दो रह गए।

तो हो सकता है, राम हार जाएं। महावीर के साधुओं से महावीर हार जाएं, बुद्ध के भिक्षुओं से बुद्ध हार जाएं, क्राइस्ट के पादरियों से क्राइस्ट हार जाएं। इसमें कोई हैरानी नहीं। लेकिन यह जानना चाहिए कि चाहे कोई कितना ही कुशल अभिनय करे, उसके जीवन में सुवास नहीं हो सकती, वह कागज का ही फूल होगा। वह असली फूल नहीं हो सकता। और इस चेष्टा से कि वह दूसरे का अंधानुकरण करे, वह एक बहुमूल्य अवसर खो देगा जो स्वयं की निजता को पाने का था। ऐसी ही हो जाएगी बात।

आपकी बगिया में मैं जाऊं और आपके फूलों को समझाऊं गुलाब को कहूं कि तू कमल हो जा, चमेली को कहूं, तू चंपा हो जा। पहली तो बात है, फूल मेरी बात सुनेंगे नहीं, क्योंकि फूल आदमियों जैसे नासमझ नहीं कि हर किसी की बात सुनें। कोई उपदेशक वगैरह उनके बीच नहीं होता। पर हो सकता है, आदमियों के साथ रहते-रहते कुछ फूल बिगड़ गए हों। आदमी के साथ रहकर कोई भी बिगड़ सकता है। जानवर जो जंगल में रहते हैं उनको बीमारियां नहीं होती, आदमी के साथ रहने लगते हैं, उन्हीं बीमारियों से ग्रस्त हो जाते हैं। फिर आदमी की नकल में विटनेरी डाक्टर को भी हमें तैयार करना पड़ता है। हो सकता है, आपके साथ रहते-रहते बगिया के फूल की आदत बिगड़ गयी हो, वे सुनने को राजी हो जाए और उपदेश उन पर

काम कर जाए। सीधे सादे फूल हैं, हो सकता है, मान लें, और गुलाब कमल होने की कोशिश करने लगे, और चंपा चमेली होने की। फिर क्या होगा?

उस बगिया में फिर फूल पैदा नहीं होंगे। एक बात तय है, और कुछ भी हो, उस ब गिया में फिर फूल पैदा नहीं होंगे। क्योंकि गुलाब के भीतर कमल कोने का कोई व्यि क्तत्व नहीं। लाख कोशिश करे वह कमल नहीं हो सकता। लेकिन कमल होने की क ोशिश में ताकत व्यय हो जाएगी और गुलाब भी नहीं हो सकेगा। गुलाब का फूल भी उसमें पैदा नहीं होगा।

आदमी की बगिया ऐसी ही वीरान हो गयी है। सोचें कभी अगर हम बीस पच्चीस ल ोगों के नाम दुनिया से अलग कर दे, तो आदमी के दस हजार वर्षों में कितने फूल लगे हैं? बुद्ध का महावीर को, कृष्ण को, क्राइस्ट को, लाओत्से को, कन्फ्यूनिशयस को छोड़ दें। बीस नाम अलग कर दें, मनुष्य जाति के दस हजार साल में, तो बाकी किन आदमियों के जीवन में फूल लगे हैं? और क्या यह अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण नहीं है कि अरबों लोग पैदा हों, एक दो आदमी के जीवन में फूल आए और बाकी लोग बि ना फूल के बांझ रह जाए?

कौन है इसके लिए जिम्मेवार? मेरी दृष्टि में, अनुकरण इसके लिए किया? क्राइस्ट ि कसकी कार्बन कापी बनना चाहे थे? क्या कहीं उल्लेख है कि कृष्ण ने किसी का अनु करण किया हो? क्या कहीं यह लिखा है किसी किताब में और किसी धर्म ग्रंथ में ि क बुद्ध किसी के पीछे चले हो। नहीं, वे ही थोड़े से लोग इस जमीन पर सुगंध को उपलब्ध हुए जो अपनी निजता की खोज किए किसी के पीछे नहीं गए। लेकिन हम अजीब पागल हैं। हम उन्हीं लोगों के पीछे जा रहे हैं, जो किसी के पीछे कभी नहीं गए। और जब तक हम किसी का अनुसरण करने की कोशिश करेंगे तब तक हमारे व्यक्तित्व में वह मुक्ति, वह स्वतंत्रता पैदा नहीं हो सकती।

दूसरे का अनुकरण गहरी से गहरी परतंत्रता है।

मैं बांधता हूं फिर अपने को। दूसरा हो जाता है मेरे लिए आदर्श और उसके अनुकूल मैं अपने को बांधने लगता हूं, फांसने लगता हूं। फिर एक पिंजड़ा हो जाता है और उस पिंजड़े के सीखचों को पकड़ कर मैं चिल्लाता हूं, स्वतंत्रता। तो बहुत हंसी जैस ी बात हो जाती है।

न तो चाहिए मनुष्य में विश्वास और न चाहिए मनुष्य में अंधानुकरण। चाहिए मनुष् य में विचार मनुष्य में निजता की खोज। सवाल बुद्ध और महावीर होने का नहीं है, सवाल जो भी आप है, उसके पूरी तरह खिल जाने का है। और जिस दिन आप पू री तरह खिलते हैं, उसी दिन आपके जीवन में धर्म का अनुभव शुरू होता है। उसके पहले नहीं। पंगु और कुंठित व्यक्ति, जीवन के सत्य से कोई संपर्क नहीं साध सकत ा। परिपूर्ण स्वस्थ और खिले हुए फूल की भांति व्यक्तित्व, जो अपने सारे प्राणों को विकसित कर सके, तब जीवन के चारों तरफ के संदेह उसे मिलने उपलब्ध हो जाते हैं।

मैं यह अंत मैं निवेदन करूंगा कि मनुष्य के बंधन, गहरे अर्थों में दो हैं—विश्वास के और अनुकरण के। जो व्यक्ति इन बंधनों से अपने को मुक्त कर लेता है, वह कदम रख रहा है। सत्य की तरफ, वह धार्मिक होने की तरफ कदम रख रहा है। उसके भीतर धार्मिक चित्त पैदा हो गया है। धार्मिक चित्त वह नहीं है, जो किन्हीं मंदिरों में जाकर सिर टेकता हो, किन्हीं शास्त्रों को लेकर सिर पर घूमता हो। नहीं, धार्मिक चित्त वह है जो अपने आसपास अपनी चेतना पर, किसी तरह के बंधनों को, किसी तरह पोषण नहीं देता, सब तरह के बंधनों को शिथिल करता है, तोड़ता है और त क चेतना के भीतर जो छिपा है, उसके प्रकट होने का द्वार खोजता है।

यह मैंने थोड़ी सी बातें आपसे कहीं। यह बातें बिलकुल नकारात्मक हैं, निगेटिव हैं। लेकिन कोई माली बगीचा बताना चाहे तो पहले पुराने पौधों को निकाल अलग कर देता है, घास पात उखाड़ देता है, जड़ें निकालकर बाहर फेंक देता है, पत्थर, कंकड़ अलग कर देता है, ताकि भूमि तैयार हो जाए, ताकि फिर नए बीज बोए जा सकें। तो मेरी इस पहली चर्चा में, कुछ चीजों को मैंने तोड़-फोड़ करने की कोशिश की है, उसे अलग कर देने की, ताकि आप तैयार हो सकें उन बातों के लिए, जिन्हें मैं बीज कहता हूं और जो अगर भीतर पहुंचें तो उनसे आपके जीवन में एक अनुकरण हो सकता है, एक पल्लव हो सकता है। कुछ आ सकती है सुवास। हर आदमी पैदा हुआ है एक फूल बन सके, एक सुवास उसके जीवन में आ सके। और जो आदमी बिना ऐसा बने विदा हो जाता है, उसके जीवन में कोई धन्यता, कोई कृतार्थता नहीं होती।

धन्य हैं वे थोड़े से लोग ही, जो जीवन के इस अवसर को सरिता की भांति, सागर तक दौड़ने का अवसर बना लेते हैं। धन्य हैं वे लोग, जो सरिता की भांति, सागर को उपलब्ध हो जाते हैं। जीवन की इस परिपूर्णता का आनंद, जीवन के इस अमृत का बोध केवल उन्हीं को उपलब्ध हो पाता है। यह हम सब का जन्म सिद्ध अधिकार है, अगर हम मांग करें तो। लेकिन अगर हम मांग भी न करें, या हम मांग भी क रें, चिल्लाएं स्वतंत्रता, स्वतंत्रता और किन्हीं सींखचों को पकड़े रहें, तो कौन जिम्मेव ार हो सकता है। प्रत्येक व्यक्ति ही अपने लिए जिम्मेवार है, अपने बंधन के लिए, अपने कारागृह के लिए। और जिस दिन सोचेगा, तोड़ सकेगा उस कारागृह को। एक अंतिम कहानी और मैं अपनी चर्चा को पूरी करूंगा।

रोम में एक बहुत अदभुत लोहार हुआ। उसकी बड़ी क्रांति थी, सारे जगत में। दूर-दू र के बाजारों तक उसका सामान पहुंचा उसने बहुत धन अर्जित किया। लेकिन जब वह अपनी प्रतिष्ठा के चरम शिखर पर था और रोम के सौ बड़े प्रतिष्ठित नागरिकों में उसकी स्थिति बन गयी थी, तभी रोम पर हमला हुआ। दुश्मन ने रोम को रौंद डाला और सौ बड़े नागरिकों को गिरफ्तार कर लिया। उनके हाथ पैरों में बहुत मज बूत जंजीरें पहना दी गयीं और उन्हें फिंकवा दिया गया जंगलों में, ताकि जंगली जा नवर उन्हें खा जाए। वे जंजीरें बहुत मजबूत, बहुत वजनी थी। उसके रहते एक कद म चलना भी मुश्किल था, असंभव था। वे निन्यानबे लोग तो रो रहे थे छार-छार।

उनके हृदय आंसुओं से भरे थे। उनके सामने मृत्यु के सिवाय कुछ भी नहीं था, लेकिन वह लोहार बहुत कुशल कारीगर था। वह हंस रहा था, वह निश्चिंत था। उसे खयाल था, कोई फिकर नहीं, कैसी ही जंजीरें हों, मैं खोल लूंगा। अपने बच्चों को, अपनी पत्नी को विदा देते वक्त उसने कहा, घबड़ाओ मत, सूरज डूबने के पहले मैं घर वापस आ जाऊंगा। पत्नी ने भी सोचा, बात ठीक ही है। वह इतना कुशल कारीगर था। जब उन सब को जंगलों में फिंकवा दिया गया, वह लोहार भी एक जंगली खड्डे में डाल दिया गया। गिरते ही उसने पहला काम किया, अपनी जंजीरें उठा के देखीं कि कहीं कोई कमजोर कड़ी हो, लेकिन जंजीरों को देखते ही वह छाती पीट पीटकर रोने लगा। उसकी हमेशा से आदत थी, जो भी बनाता था, कहीं हस्ताक्षर कर देता था। जंजीरों पर उसके हस्ताक्षर थे। वह उसकी ही बनायी हुई जंजीरें हैं। उसने कभी सोचा थी न था कि जो जंजीरें मैं बना रहा हूं, वे एक दिन मेरे ही पैरों में पड़ेंगी और मैं ही बंदी हो जाऊंगा। अब वह रोने लगा। रोने लगा इसलिए कि अगर यह जंजीरें किसी और की बनायी हुई होती तो तोड़ भी सकता था। वह भली भांति जानता था, कमजोर चीजें बनाने की उसकी आदत नहीं, यही तो उसकी प्रतिष्ठा थी। जंजीरें उसकी बनायी हुई थीं। उन्हें तोड़ना मुश्किल था, वे कमजोर थी ही नहीं।

उस कुशल कारीगर को जो मुसीबत अनुभव हुई होगी, हर आदमी को, जिस दिन वह जागकर देखता है, ऐसी ही मुसीबत अनुभव होगी। तब वह पाता है, हर जंजीर पर मेरे हस्ताक्षर हैं और हर जंजीर मैंने इतनी मजबूती से बनायी है, क्योंकि मैंने तो इसे स्वतंत्रता सोचकर बनाया था, कभी सोचा भी न था कि यह जंजीर है। तो स्वतंत्रता को खूब मजबूती से बनाया था। मैंने इसे धर्म समझा था, खूब मजबूती से तैयार किया था। मैंने इसे मंदिर समझा था, मैंने कभी सोचा भी न था कि यह कारागृह है। तो खूब मजबूत बनाया था। उस लोहार की जो हालत हो गयी, वह करीब-करीब हर आदमी को अनुभव होती है, जो जागकर अपनी जंजीरों की तरफ देखता है। लेकिन, वह लोहार सांझ को घर पहुंच गया। वह कैसे पहुंचा, वह मैं रात आपसे बात करूंगा।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना है, इसलिए बहुत अनुगृहीत हूं। सबके भीतर बैठे हुए परमात्मा को अंत में प्रणाम करता हूं, मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

पूना, १९६५

मेरे प्रिय आत्मन,

मैं अत्यंत आनंदित हूं, लायन्स इंटरनेशल के इस सम्मेलन में कि शांति के संबंध में थोड़ी सी बातें आपसे कर सकूंगा। इसके पहले कि मैं अपने विचार आपके सामने रखूं, एक छोटी सी घटना मुझे स्मरण आती है, उसे से मैं शुरू करूंगा।

मनुष्य जाति के अत्यंत प्राथमिक क्षणों की बात है। अदम और ईव को स्वर्ग के बगीचे से बाहर निकाला जा रहा था। दरवाजे से अपमानित होकर निकलते हुए अदम ने ईव से कहा, तुम बड़े संकट से गुजर रहे हैं। यह पहली बात थी, जो दो मनुष्यों के

बीच संसार में हुई, लेकिन पहली बात यह थी कि हम बड़े संकट से गुजरे रहे हैं। और तब से अब तक कोई बीस लाख वर्ष हुए, मनुष्य जाति और बड़े और बड़े संकटों से गुजरती रही है। यह वचन सदा के लिए सत्य हो गया। ऐसा कोई समय न रहा, जब हम संकट में न रहे हों, और संकट रोज बढ़ते चले गए हैं। एक दिन अदम को स्वर्ग के राज्य से निकाला गया था, धीरे-धीरे हम कब नर्क के राज्य में प्रविष्ट हो गए, उसका भी पता लगाना कठिन है।
आज तो यह कहा जा सकता है, इधर तीन हजार वर्षों का इतिहास ज्ञात है। तीन हजार वर्षों में साढ़े चार हजार युद्ध हुए हैं। यह घबड़ाने वाली और आश्चर्य कर देने वाली बात है। तीन हजार वर्षों में मनुष्य ने साढ़े चार हजार लड़ाइयां लड़ी हों तो यह तो जीवन शांति का जीवन नहीं कहा जा सकता। अब तक हमने कोई शांति काल नहीं जाना है। दो तरह के हिस्सों में हम मनुष्य के इतिहास को बांट सकते हैं—युद्ध का समय, और युद्ध के लिए तैयारी का समय। शांति का कोई समय, कोई खंड अभी तक ज्ञात नहीं है। निश्चित ही, कोई बहुत गहरी विक्षिप्तता, कोई बहुत गहरा पागलपन मनुष्य को पकड़े होगा। कोई रास्ता अब खोज लेना जरूरी है। पुरानी लड़ाइयां बहुत छोटी लड़ाइयां थी और उनके बाद भी हम बचते चले आए हैं। लेकिन अब शायद जो युद्ध होगा, उसमें मनुष्य को बचने का भी। कोई उपाय न हो। अल्बर्ट आइंस्टीन से मरने के पहले किसी ने पूछा, तीसरा महायुद्ध में किन शास्त्रों का उपयोग होगा? आइंस्टीन ने कहा, तीसरे के प्रति कहना कठिन है, लेकिन चौथे के संबंध में कहा जा सकता है। सुनने वाला, पूछने वाला हैरान हुआ। उसने पूछा चौथे में किन शास्त्रों का उपयोग होगा? अगर मनुष्य बचा रहा—क्योंकि बचने की कोई संभावना नहीं है, अगर बचा रहा, तो फिर से पत्थर के हथियारों से लड़ाई शुरू करनी पड़ेगी। चूंकि तीसरा महायुद्ध, बहुत संभावना इस बात की है कि सारी मनुष्य जाति को ही नहीं, बल्कि समस्त जीवन मात्र को समाप्त कर दे।
पिछले महायुद्ध में पांच करोड़ लोगों की हत्या हुई। पांच करोड़ लोग छोटी संख्या नहीं है। दोनों पिछले युद्धों में मिलाकर दस करोड़ लोग मारे गए। शायद हमें खयाल भी नहीं है कि इन दस करोड़ लोगों की हत्या करने में हमारा भी हाथ है। हम जो यहां बैठे हैं, हम जिम्मेवार है। कोई भी मनुष्य इस जिम्मेवारी और उत्तरदायित्व से बच नहीं सकता। जो भी जमीन पर हो रहा है, उस सब में हमारे हाथ हैं। दो महायुद्ध हमारे भीतर से पैदा हुए और हमने इतनी बड़ी हत्या की । और अब तो हमारी तैयारी बहुत बड़ी है। मैं उस तैयारी के संबंध में भी दो शब्द कहना चाहूंगा।
१९४५ में हिरोशिमा और नागासाकी पर जो अणु बम गिराए गए, वे बहुत घातक थे। एक लाख के करीब लोग उन अणु बमों के गिराने से नष्ट हुए। इधर बीस वर्षों में बहुत विकास हुआ है और हिरोशिमा पर जो बम गिराया गया था, बच्चों के खिलौनों से ज्यादा नहीं है, अब। अब हमारे पास उससे बहुत शक्तिशाली बम हैं। ऐसे उदजन बम कोई चालीस हजार वर्ग मील घेरे के समस्त जीवन को नष्ट कर सकता

है। और ऐसे उदजन बमों की संख्या हमारे पास में १९६० में पचास हजार थी। नि श्चित ही छह वर्षों में यह संख्या और बहुत ज्यादा बढ़ गयी होगी, हम रुके नहीं हैं। पचास हजार उदजन बम क्या अर्थ रखते हैं, शायद आपको खयाल न हो। यह जमी न बहुत बड़ी है। पचास हजार उदजन बमों को नष्ट करने के लिए यह जमीन बहु त छोटी है। इस तरह की सात जमीनें हों तो पचास हजार उदजन बम उन्हें नष्ट क र सकेंगे। अभी आदमी की संख्या कोई तीन अरब है। इक्कीस अरब आदमियों को मारने के लिए हमारे पास व्यवस्था है। यह थोड़े हैरानी की बात है कि इतनी बड़ी व यवस्था से हम क्या करेंगे। शायद यह डर हो कि कोई आदमी मरने से बच जाए तो उसे दुबारा मारा जा सके, तीसरी बार मारा जा सके या सात बार मारा जा सके। हालांकि भगवान का कुछ ऐसा इंतजाम है कि एक आदमी एक ही बार में मर जा ता है, लेकिन फिर भी सात बार मरने का हमने इंतजाम कर रखा है कि कोई बच जाए, कोई अपवाद हो जाए तो व्यवस्था पूरी होनी जरूरी है। यह पचास हजार उद जन बस किसी भी दिन, किसी भी एक पागल राजनीतिज्ञ के दिमाग में खराबी आ जाने से खतरा बन सकते हैं। कोई एक आदमी का दिमाग खराब हो जाए तो सार ी मनुष्य जाति नष्ट हो सकती है। और जैसे हमारे दिमाग हैं, हम करीब-करीब वै से ही पागल हैं, इसलिए पागल होने की कोई बहुत ज्यादा जरूरत नहीं है।

आम आदमी इतना अशांत है, इतना दुखी है, इतना परेशान है कि उसके द्वार बहुत डर है कि वह कभी भी युद्ध के खतरे को मोल ले सकता है। हम छोटी-छोटी बात पर लड़ने को तैयार हो जाते हैं, बहुत छोटी-छोटी बात पर लड़ने को तैयार हो जा ते हैं, बहुत छोटी-छोटी बातों पर, और हमारे भीतर से हमारा राजनीतिज्ञ भी पैदा होता है। उसकी बुद्धि भी हमसे ज्यादा बड़ी और हमसे श्रेष्ठ नहीं होती है। उसकी आत्मा भी हमसे ज्यादा विकसित नहीं होती है। अक्सर तो यह होता है, जो हमसे ि नम्नतम है, वे राजनीति में श्रेष्ठतम हो जाते हैं, और तब, तब खतरा और भी बढ़ जाता है। राजनीतिज्ञों के हाथ में दुनिया का होना एक ज्वालामुखी के ऊपर जैसे ह म बैठे हों, ऐसी स्थिति में है।

क्या आपको पता है, ट्रूमने की आज्ञा से हिरोशिमा और नागासाकी में एटम बम गि रा। दूसरे दिन सुबह पत्रकारों ने ट्रूमेन से पूछा, आप रात को ठीक से सो सके? एक लाख आदमी मर गए थे, स्वाभाविक था कि ट्रूमेन की नींद रात में शराब हुई होत ी, लेकिन ट्रूमेन ने कहा, मैं बहुत आनंद से सोया। सच तो यह है, उसने कहा, इधर तीन चार वर्षों में इतनी शांति से मैं कभी नहीं सोया। एक लाख आदमियों को मा र कर अगर हमारे राजनीतिज्ञ शांति से सो सकते हैं तो इन राजनीतिज्ञों के हाथ में दुनिया का होना शुभ नहीं कहा जा सकता। और राजनीतिज्ञ के हाथ में दुनिया हज ारों वर्ष से है और राजनीति बिना युद्ध के न तो जी सकती है और न जी है।

जिस दिन दुनिया से युद्ध समाप्त होंगे, उस दिन राजनीति का भाव भी समाप्त हो जाएगा। इसलिए यह बहुत स्वाभाविक है कि राजनीतिज्ञ युद्ध को जारी रखे, युद्ध क ो बनाए रखे, उसे जिंदा रखे। इस संबंध में विचार करना इसलिए बहुत-बहुत आवश

यक हो गया है, क्योंकि पिछले दिनों में राजनीतिज्ञ युद्ध से जो नुकसान पहुंचा सकते थे, इतने बड़े नहीं थे, लेकिन अब तो वे पूरी मनुष्य जाति को नष्ट कर सकते हैं। एक छोटी सी कहानी कहूं और फिर अपनी चर्चा को शुरू करूं। यह कहानी मैंने मुल्क के कोने-कोने में कही हैं। एक बिलकुल झूठी कहानी है।

एक बहुत बड़े महल के बाहर बड़ी भीड़ थी। भीतर कुछ हो रहा था, उसे जानने की सैकड़ों बड़ी भीड़ इकट्ठे थे। लेकिन वे साधारण जन नहीं थे। जो बाहर इकट्ठे थे, वे स्वर्ग के देवी और देवता थे और जो महल था वह खुद भगवान का महल था। भीतर वहां कोई बात चली थी, जिसको सुनने के लिए सारे लोग उत्सुक थे। उस बात पर बहुत कुछ निर्भर था। मैंने कहा, कहानी बिलकुल झूठी है, फिर भी बहुत अर्थपूर्ण है। भीतर ईश्वर का दरबार लगा हुआ था। और तीन आदमी दरबार में खड़े थे। ईश्वर ने उन तीन आदमियों से पूछा, मैं बहुत हैरान हो गया हूं, मनुष्य को बनाकर मैं बहुत परेशान हो गया हूं। मैंने सोचा था, मनुष्य को बनाकर दुनिया में एक आनंद, एक शांति, एक संगीत पूर्ण विश्व का जन्म होगा। जमीन एक स्वर्ग बनेगी। लेकिन मनुष्य को बनाकर भूल हो गयी। जमीन एक स्वर्ग बनेगी। लेकिन मनुष्य को बनाकर भूल हो गयी। जमीन रोज नर्क के करीब होती जा रही है और ऐसा वक्त आ सकता है, नर्क में जो लोग पाप करें, उन्हें हमें जमीन पर भेजना पड़े। इसलिए ईश्वर ने कहा, मैं बहुत परेशान हूं और तुम्हें इसलिए बुलाया है कि मैं तुमसे पूछ सकूं कि क्या कोई उपाय मैं कर सकता हूं जिससे कि दुनिया ठीक हो जाए?

वे तीन लोग तीन बड़े देशों के प्रतिनिधि थे--अमरीका, रूस और ब्रिटेन के। अमरीका के प्रतिनिधि ने कहा, दुनिया अभी ठीक हो जाए। एक छोटी सी आकांक्षा हमारी पूरी कर दें। ईश्वर ने उत्सुकता से कहा, कौन सी आकांक्षा? अमरीका के प्रतिनिधि ने कहा, हे परमात्मा, जमीन तो रहे, लेकिन जमीन पर रूस का कोई निशान न रह जाए। इतनी सी आकांक्षा पूरी हो जाए, फिर और कोई तकलीफ नहीं, फिर और कोई कष्ट नहीं, फिर सब ठीक हो जाएगा और जैसा चाहा है दुनिया वैसी हो सकेगी।

ईश्वर ने बहुत वरदान दिए थे। ऐसे वरदान देने का उसे कोई मौका नहीं आया था। उसने रूस की तरफ देखा, रूस के प्रतिनिधि ने कहा कि महानुभाव, एक तो हम मानते नहीं कि आप हैं। १९१७ के बाद हमने अपने मंदिरों और मस्जिदों और चर्चों से निकालकर आपको बाहर कर दिया है। लेकिन हम पुनः आपकी पूजा शुरू कर देंगे और फिर आपके मंदिरों में दिए जलाएंगे और फूल चढ़ाएंगे। एक छोटी सी आकांक्षा अगर पूरी हो जाए तो वही प्रमाण होगा ईश्वर के होने का। ईश्वर ने कहा, कौन सी आकांक्षा? उसने कहा, हम चाहते हैं कि जमीन का नक्शा तो रहे, लेकिन अमरीका के लिए कोई रंग न रह जाए। ईश्वर ने हैरानी में और घबड़ाकर ब्रिटेन की तरफ देखा। ब्रिटेन के प्रतिनिधि ने कहा हे परम पिता, हमारी अपनी कोई आकांक्षा नहीं। इन दोनों की आकांक्षाएं एक साथ पूरी हो जाए तो हमारी आकांक्षा पूरी हो जाए।

यह तो बिलकुल ही झूठी कहानी मैंने आपसे कहीं। लेकिन दुनिया की स्थिति करीब-करीब ऐसी हो गयी है। सारी दुनिया के राजनीतिज्ञ एक दूसरे के विनाश के लिए उ त्सुक हैं। सारे दुनिया में लोग एक दूसरे की हत्या के लिए तत्पर हैं। सारी दुनिया की शक्ति—इतनी बड़ी शक्ति जिससे हम जमीन को न मालूम क्या बना सकते थे! ि जससे जमीन की सारी दरिद्रता मिट सकती थी, सारी अशिक्षा मिट सकती थी, सारे दुख और बीमारियां मिट सकते थे, जिससे मनुष्य एक अदभुत रूप से स्वस्थ, शांत और सुखी संसार का निर्माण कर सकता था। वह सारी शक्ति इस बात में लगी है ि क हम एक दूसरे को कैसे नष्ट कर दें। वह सारी शक्ति इस बात में लगी है कि ए क मनुष्य दूसरे मनुष्य की हत्या करने में कैसे समर्थ हो जाए। यह कहानी तो झूठी है, लेकिन यह कहानी करीब-करीब हमारी दुनिया के संबंध में सच हो रही है। हम सारे लोग विनाश के लिए तत्पर हैं। क्यों? इसका जिम्मा, इसका उत्तरदायित्व किस पर है? और यह सारे राजनीतिज्ञों शांति की बातें भी करते हैं। यह भी आपको प ता होगा, दुनिया के सारे युद्ध शांति के नाम पर हुए हैं। इसलिए शांति संबंध में भी विचार करना बहुत जरूरी है।

शांति के लिए भी युद्ध हो सकता है। और जब भी कोई लड़ता है तो शांति के लिए ही लड़ता है। अच्छे नाम, बुरे कामों को करने का कारण बन जाते हैं। अच्छे नामों की ओट में दुनिया में बुरे से बुरे पाप, बुरे से बुरे काम हुए हैं। धर्मों की ओट में हत्याएं हुए हैं। शांति के नाम पर युद्ध हुए हैं। इसलिए राजनीतिज्ञ जब शांति की ब ातें करता हो तो बहुत विचार करना जरूरी है। हो सकता है, शांति की आवाजें उठ ाकर वह केवल युद्ध की तैयारियां करवाना चाहता हो। अंत में वह कहेगा अब तैया र हो जाओ, शांति के लिए लड़ना जरूरी है। शांति की रक्षा के लिए युद्ध आवश्यक हो गया है।

यह जो सारे राजनीति की भाषा में सोचने वाले लोग हैं, यदि मनुष्य इस भाषा से, इस वृत्ति से सचेत नहीं होता है तो युद्ध से नहीं बचा जा सकेगा। मेरी दृष्टि में को ई राजनीतिक उपाय स्थायी रूप से शांत विश्व को जन्म देने में असमर्थ है। इसलिए असमर्थ है कि राजनीति मूलतः आकांक्षा है, एम्बीशन है। जहां राजनीति है, वहां दू सरे से आगे निकलने की होड़ हैज। प्रतिद्वंद्विता है और जहां आगे निकलने की दौड़ है, वहां आज नहीं कल, युद्ध अवश्यंभावी है। जब एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र से आगे नि कलना चाहे, एक राष्ट्र से ऊपर निकलना चाहे तो अंत में युद्ध आ जाना स्वाभाविक है।

पहले महायुद्ध में हेनरी फोर्ड कुछ मित्रों का एक जत्था लेकर युद्ध की समाप्ति के ि लए युरोप की तरफ आया। अमरीका से उसने एक जहाज लिया। कुछ मित्र इकट्ठे ि कए जो शांति वादी थे और उस जहाज में उनको लेकर वह यूरोप की तरफ गया, ताकि वहां शांति की बातें और खबर पहुंचायी जा सके शांति का मिशन लेकर वह आया। लेकिन हेनरी फोर्ड, जैसे ही जहाज शुरू हुआ, पछताने लगा मन में। उससे भू ल कर ली थी। जिन लोगों को लेकर वह जहाज में चला था शांति के लिए, वे अब

आपस में लड़ने लगे। उसमें कई कई तरह के राजनीतिज्ञ थे। उसमें एक तरह का शांतिवादी था, उसमें दूसरे तरह के शांति वादी थे। उसमें प्रजातंत्रवादी थे, उसमें साम्यवादी थे। उसमें कैथोलिक थे, उसमें प्रोटेस्टेंट थे। उसमें इन आइडियोलाजी को मानने वाले थे, उस आइडियोलाजी को मानने वाले थे। वह जहाज जैसे ही बंदर से छूटा, वे आपस में लड़ने लगे। हेनरी फोर्ड मन में पछताया और उसने सोचा, इन लोगों को ले जाकर शांति की बात करनी असंभव है। जो आपस में लड़ते हो, वे शांति के लिए क्या कर सकेंगे।

हम सारे लोग, जो मनुष्य के भविष्य के लिए विचार करते हों और जिनके मन में यह खयाल आता हो कि जीवन को बचाना और सुरक्षित करना आवश्यक है, उन्हें कुछ बातों पर विचार करना होगा। सबसे पहली बात तो यह विचार करनी होगी कि हम जो व्यक्ति गत रूप से छोटी छोटी बातों में लड़ते हैं और संघर्ष करते हैं। कहीं वही संघर्ष, कहीं वही लड़ाई अंततः बड़े पैमाने पर राष्ट्रों का युद्ध तो नहीं बन जाती है? हम जो व्यक्तिगत रूप से करते हैं, छोटे-छोटे रूपों में वही इकट्ठे होकर ब.डे पैमाने पर युद्ध बन जाता है। कोई राजनीतिक, कोई समाज सुधार मूलतः अंतर नहीं ला सकेगा, अगर व्यक्तियों के चित्त इस बात को समझने में समर्थ न हो जाए कि उनके भीतर जब तक द्वंद्व है, जब तक संघर्ष है, जब तक प्रतियोगिता है, एम्बीशन है, महत्वाकांक्षा है, तब तक मनुष्य जाति युद्ध से मुक्त नहीं हो सकती। इसलिए मैं मनुष्य के, सामान्य के भीतर, जो युद्ध के मूल कारण हैं, उसके संबंध में बात करूंगा और कैसे मनुष्य के चित्त में शांति स्थापित हो सकती है, जिसके द्वारा सारे संसार में शांति स्थापित हो सके, उसकी भी बात करूंगा।

मनुष्य के हृदय में युद्ध का मूल कारण क्या है? यह तो आपने अनुभव किया होगा कि विनाश में हम सबकी उत्सुकता है। रास्ते पर कोई आदमी किसी को छुरा मार दे तो हम हजार महत्वपूर्ण काम छोड़कर उसे देखने को खड़े हो जाते हैं। क्यों? रास्ते पर कोई लड़ रहा हो, हम हजार महत्वपूर्ण काम छोड़कर उसे देखने को रुक जाते हैं। लोग सुबह से ही अखबार और रेडियो की प्रतीक्षा करते हैं और युद्ध के समाचार पढ़कर उनकी आंखों में चमक आ जाती है। जब युद्ध चलता है तो लोगों में ब.डा उत्साह और बड़ी ताजगी और बड़ी चहल-पहल और बड़ी गति मालूम होती है। उनमें बड़ी जिंदगी मालूम होती है। और जब युद्ध शांत हो जात है, लोग फिर बोझिल हो जाते हैं, फिर उदास हो जाते हैं, फिर ढीले मन चलने लगते हैं।

क्या आपको यह पता है, जब पहला महायुद्ध हुआ, तो मनोवैज्ञानिक बहुत परेशान हुए। पहला महायुद्ध जितने दिनों तक चला उतने दिन तक युरोप में चोरियां कम हो गयी, हत्याएं कम हो गयी, आत्महत्याएं कम हो गयी, लोग कम पागल हुए। हैरानी की बात है। मनोवैज्ञानिक समझ नहीं पाए कि इसका क्या कारण है? फिर महायुद्ध हुआ। तब तो और बड़े पैमाने पर यह हुआ। हत्याओं की संख्या एकदम कम हो गयी आत्महत्याओं की संख्या कम हो गयी। लोगों ने युद्ध के समय में पागल होना बंद कर दिया। कम। लोग पागल हुए। और क्यों? लोग इतने उत्साहित हो गए, ल

ोग इतने आनंदित हो गए कि उन्हें हत्या करने की जरूरत नहीं पड़ी, आत्महत्या क
रने की जरूरत नहीं पड़ी। ऊब और बोर्डम कम हो गयी। उदासी कम हो गयी, लोग
 प्रफुल्लित थे।
युद्ध ऐसी क्या प्रफुल्लता लाता है? अगर युद्ध इतनी प्रफुल्लता लाता है तो उसका
अर्थ है, हमारे भीतर, हमारे मन में युद्ध की कहीं चाह होगी। हम कहीं चाहते होंगे
। हमारे भीतर कहीं कोई आकांक्षा होगी, जिससे युद्ध पैदा होता है और अगर सतत
 युद्ध चलता रहे तो हम बहुत प्रसन्न हो जाएंगे। यह बात अपने खयाल से आप नि
काल दें कि युद्ध से आप उदास हो जाते हैं। आप खुद विचार करें--अभी हिंदुस्तान
में चीन और पाकिस्तान की लड़ाइयां चलीं, तो आप खयाल करें, आप ज्यादा प्रसन्न
 थे। आप ज्यादा प्रफुल्लित थे, आप ज्यादा ताजगी से भरे थे। आप खबरों के लिए
बड़े आतुर थे। आपकी जिंदगी में एक रस मालूम हो रहा था। क्यों? कुछ कारण है।

जो मनुष्य सामान्य जीवन से ऊबा हुआ है, वह मनुष्य युद्ध को चाहेगा, हिंसा को च
ाहेगा। बोर्डम जो हमारे जीवन की है, रोज सुबह से सांझ तक हमारे जीवन में न त
ो कोई रस है, न तो कोई आनंद है, न कोई प्रसन्नता है। जब तक कोई संशेसनल,ज
ब तक कि कोई बहुत तीव्र संवेदना करनेवाली बात न घट जाए, हमारे जीवन में क
ोई प्रफुल्लता, कोई जिंदगी नहीं आती। बर्नार्ड शा से किसी ने पूछा कि किस बात क
ो आप समाचार कहते हैं, न्यूज किसे कहते हैं? बर्नार्ड शा ने कहा, अगर एक कुत्ता
 आदमी को काट खाए तो इसे मैं न्यूज नहीं कहता। लेकिन एक आदमी कुत्ते को क
ाट खाए तो इसे मैं न्यूज कहता हूं। इसे मैं समाचार कहता हूं, एक आदमी अगर कु
त्ते को काट खाए।
यह हमारी जिंदगी की जो ढीली-ढाली रफ्तार है, वह उसको चौंका देती है बात। ह
म चौंकाने के लिए उत्सुक है, हम चौंकाए जाएं। इसलिए डिटेक्टिव फिल्में हम देखते
 हैं, जासूसी उपन्यास और कथाएं पढ़ते हैं जिनमें हत्याओं का जोर हो। जिंदगी में
भी युद्ध और लड़ाइयां चाहते हैं, संघर्ष और कलह चाहते हैं, ताकि हमारे भीतर व
ह जो उदासी, ऊब जिंदगी में छा गयी है, वह टुट जाए। केवल वही मनुष्य का समा
ज युद्ध से बच सकता है, जो मनुष्य का समाज अत्यधिक आनंदित और प्रफुल्लित
हो। स्मरण रखें, अगर हम उदास हैं, दुखी हैं, रसहीन हमारा जीवन है तो हम भीत
र अनजाने भी, अचेतन, अनकांसेस भी युद्ध के लिए तीव्र युद्ध के लिए प्यासे रहेंगे।
 हमारे भीतर कोई आग्रह कोई आकांक्षा बनी रहेगी कि जीवन को चौंका देने वाली
 कोई बातें हो जाए। युद्ध सबसे ज्यादा जीवन को चौंका देता है। इसलिए जीवन में
एक लहर आ जाती है, एक गति आ जाती है। इसलिए सारी मनुष्य जाति बहुत ग
हरे में युद्ध से प्रेम करती है। युद्ध की आकांक्षा करती है।
अभी हिंदुस्तान में जब चीन और पाकिस्तान से उपद्रव चला तो आपने देखा, हिंदुस्ता
न भर में कविताएं लिखी जाने लगीं, की आंखों में रौनक और चेतना आ गयी। कै
सा पागलपन है। कैसे पागलपन है! हम कितने उत्साहित हो गए।

हमारा नेता कितने जोर से बोलने लगा और हमारी तालियां कितनी जोर से पिटने लगी और हमारे प्राणों में जैसे गति और एक कंपन आ गया। ऐसा लगा जैसे सब मुर्दे जाग गए हो।

यह सारी की सारी स्थिति यह बताती हैं कि सामान्य जीवन हमारा बहुत दुखी और बहुत पीड़ित है। और यह भी स्मरण रखें, अगर सामान्य रूपेण हम दुखी हैं तो जो आदमी दुखी होता है, वह आदमी दूसरे को दुख देने में आनंद अनुभव करता है। इससे मैं फिर से दोहराता हूं, जो आदमी दुखी होता है वह दूसरे को दुख देने में आनंद अनुभव करता है। जो आदमी आनंदित होता है वह दूसरे को आनंद देने में आनंद अनुभव करता है। जो हमारे पास होता है, उस पे निर्भर होता है, हम दूसरे के साथ क्या करेंगे। चूंकि हम सारे लोग दुखी हैं, इसलिए हमारे जीवन में एक ही सुख है कि हम किसी को दुख दे पाए। इसलिए जब भी हम किसी को दुख देते हैं, सताते हैं, परेशान करते हैं तो हम सुख मिलता है।

एक मुसलमान फकीर था, बायजीद। वह बहुत परेशान था इस बात से कि ईश्वर ने नर्क बनाया ही क्यों? उसे यह परेशानी थी कि ईश्वर जो इतना दयालु है, उसने भी नर्क क्यों बनाया उसने एक रात ईश्वर से प्रार्थना की कि मैं तो समझने में असमर्थ हूं, अगर तू ही मुझे बता सके कि तूने नर्क क्यों बनाया, इतना बुरा नर्क क्यों बनाया। वह रात सोया, उसे एक सपना आया। निरंतर सोचने के कारण ही वह सपना उसे आया होगा। उसने सपना देखा, वह स्वर्ग में गया है। वहां चारों तरफ संगीत ही संगीत है और आनंद ही आनंद है। वहां दरख्तों के ऊपर सुंदर फूल हैं, वहां चारों तरफ सुगंध है। लोग बड़े स्वस्थ है।

वह जब पहुंचा तो स्वर्ग के लोग भोजन कर रहे थे, घरों-घरों में भोजन चल रहा था। उसने कई घरों में झांककर देखा, एक बात से वह बहुत परेशान हुआ। लोगों के हाथ बहुत लंबे हैं, लोगों के शरीर तो बहुत छोटे हैं, लेकिन हाथ बहुत लंबे हैं, इसलिए भोजन करने में उन्हें बड़ी तकलीफ होती है। उठाते हैं तो उनको मुंह तक ले जाने में बड़ी अड़चन है, मुंह तक खाना जा नहीं पाता। लेकिन फिर लोग स्वस्थ हैं तो वह हैरान हुआ। उसने जाकर देखा, उसने देखा, घर-घर में लोग एक दूसरे को खाना खिला रहे हैं। खुद तो खा नहीं सकते, उनके हाथ बहुत लंबे हैं, तो एक आदमी दूसरे आदमी को खाना खिला रहा है।

फिर वहां से वह नर्क गया। नर्क में देखा उसने, वहां भी हाथ उतने ही लंबे हैं, दरखत उतने ही सुंदर हैं और फूल खिले हुए हैं। वहां भी सुगंध है, वहां भी सब ठीक है, लेकिन लोग बिलकुल दुर्बल और परेशान और पीड़ित हैं। वह हैरान हुआ। उसने देखा, वहां हर आदमी अपना खाना खाने की कोशिश कर रहा है और बगल वाला न खा पाए, इसकी कोशिश भी कर रहा है। खुद के हाथ लंबे हैं, इसलिए खुद के मुंह तक नहीं पहुंचते इसलिए कोई आदमी खाना नहीं खा पा रहा है और किसी तरह थोड़ा बहुत खाना पहुंच भी जाए तो दूसरे लोग उसे धक्का दे रहे हैं । उसकी वजह से उसके पास खाना नहीं पहुंच पा रहा है। उसने देखा, स्वर्ग और नर्क तो बिलकुल

एक जैसे हैं, लोग थोड़े अलग-अलग हैं। नर्क में कोई आदमी दूसरे आदमी को सुखी देखने के लिए उत्सुक नहीं है। हर आदमी दूसरे आदमी को दुख देना चाह रहा है। हम सारे लोग भी एक दूसरे को दुख देना चाह रहे हैं। फोसडेग का नाम सुना होगा, एक बहुत विचारशील व्यक्ति हैं। वह एक थियोलाजिकल कालेज में बच्चों को पढ़ा रहा था, वह स्कूल, जहां ईसाई मिशनरी तैयार किए जाते हैं, उपदेश के लिए। वह ां वह कालेज में उन लड़कों को पढ़ा रहा था। उसने पढ़ाते वक्त उनको कहा कि त ब तुम स्वर्ग का वर्णन करने लगो; तुम कहीं उपदेश करने जाओ और बाइबिल में स्‍ वर्ग का वर्णन आ जाए तो तुम प्रसन्नता जाहिर करना, चेहरे पर हंसी ले आना, आं खों में ताजगी ले आना, रोशनी ले आना। एकदम प्रफुल्लित हो जाना ताकि लोग स मझ सकें कि स्वर्ग के वर्णन से तुम्हारा हृदय प्रफुल्लित हो गया। एक युवक ने खड़े होकर पूछा, और जब नर्क का वर्णन करना पड़े? तो फोसडेग ने कहा, तुम्हारी जो सूरत है, उससे ही काम चल जाएगा और कुछ सूरत बनाने की कोशिश मत करना।

हम सबकी सूरतें जैसी हैं, वैसी से नर्क का काम चल जाएगा। उसके लिए कोई और विशेष सूरत बनाने की जरूरत नहीं है। जमीन करीब-करीब दुखी, उदास, पीड़ित उस स्थिति में पहुंच गयी है कि किसी मनुष्य को भीतर जीवन में न तो कोई रस है , न कोई आनंद है। फिर एक ही रस है कि वह दूसरे को सताए, दूसरे को परेशान करे।

चंगेज दिल्ली आया उसने आते से, दस हजार बच्चों के सिर कटवा दिए और और उनको भालों पर लगवाकर जुलूस निकलवाया आगे। लोगों ने पूछा, यह तुम क्या करते हो? उसने कहा, ताकि दिल्ली में लोगों को याद रहे कि कोई आया था। वह खुश था दस हजार बच्चों के सिर कटवाकर।

यह आदमी जरूर बहुत दुखी रहा होगा। इसके दुख का अंत न होगा। इसके भीतर नर्क ही रहा होगा, तभी तो इसे खुशी मिल सकी। जब हिंदुस्तान से वापस लौटा, ब ीच के एक गांव मग रुका। कुछ वेश्याएं, रात को उसके दरबार में नाचने आयी। अ ाधी रात में, दो बजे जब वेश्याएं लौटने लगी तो उन्होंने कहा, हमें डर लगता है, र ास्ते में अंधेरा है। चंगेज ने कहा अपने सैनिकों को, रास्ते में जितने गांव पड़ते हैं, स बमें आग लगा दो ताकि इन वेश्याओं को याद रहे कि चंगेज के दरबार में नाचने ग यी थीं तो आधी रात में भी उसने दिन करवा दिया। सारे गांव में आग लगा दी ग ई, कोई बीस गांव जला दिए गए। उसमें सोए लोग वहां जल गए। लेकिन वेश्याओं के रास्ते पर प्रकाश कर दिया।

यह आदमी जरूर भीतर गहरे नर्क में रहा होगा। चंगेज सो नहीं सकता था। हिटलर भी नहीं सो सकता था, स्टेलिन भी नहीं सो सकता था। भीतर एक गहरी पीड़ा रह ी होगी, कितना गहरा दुख रहा होगा कि दूसरे के दुख का दुख तो अनुभव नहीं हुअ ा, बल्कि दूसरे को दुख देने में एक खुशी अनुभव हुई। हम सारे लोग दुखी हैं। अगर आप दुखी हैं, तो आप स्मरण रखिए, आपका हाथ युद्ध में है। अगर आप दुखी हैं

तो आप युद्ध की आकांक्षा कर रहे हैं। अगर आप दुखी हैं तो आप दूसरे के लिए दु
ख पैदा कर रहे हैं। हम सार लोग मिलकर दुख पैदा कर रहे हैं—सामूहिक रूप से, व्
यक्तिगत रूप से, राष्ट्रों के रूप से। और जब सारी दुनिया बहुत दुख से भर जाती हैं
, दस पंद्रह वर्ष में, दुख के सिवाय हमारे दुख के रिलीफ का, निकास का कोई रास्
ता नहीं रह जाता। युद्ध राजनैतिक घटना मात्र नहीं है, हमारे पूरे मानसिक नर्क का
निकास है, रिलीफ है। जब भीतर बहुत पीड़ा इकट्ठी हो जाती है, एक दुख सारी दु
निया में हम पैदा कर देते हैं, पागलपन पैदा कर देते हैं। दस पंद्रह वर्ष के लिए फि
र एक हल्की शांति छा जाती है। दस पंद्रह वर्ष में हम फिर इकट्ठे कर लेते हैं।
अगर कोई व्यक्ति इस बात के लिए उत्सुक है कि दुनिया में शांति हो और युद्ध न
हो, हिंसा न हो तो सबसे पहले उसे इस बात पर विचार करना होगा कि उसके स्व
यं के जीवन में दुख न हो। यह पहली बात है जो मैं आपसे निवेदन करना चाहता
हूं। अगर आप प्रफुल्लित और आनंदित हैं, अगर आप अपने जीवन में चौबीस घंटे
खुशी बिखेर रहे हैं, फूल बिखेर रहे हैं, खुशबू और सुगंध बिखेर रहे हैं तो आप युद्ध
के खिलाफ काम कर रहे हैं। आप एक ऐसी दुनिया के बनाने के काम में लगे हुए
हैं, जहां युद्ध नहीं हो सकेंगे। अगर दुनिया में अधिक लोग खुश हो तो युद्ध असंभव
हो जाएगा। युद्ध को रोकने के लिए और कोई रास्ता नहीं है, सिवाय इसके कि दुनि
या में आनंद की गहरी पर्तें बिखेरी जाएं।
मैडम ब्लावडस्की जिस गांव में गयी, जिस रास्ते में निकली, अपने साथ हमेशा एक
झोले में बहुत से फूलों के बीज लिए रहती थी। बस में बैठी हो, कार में बैठी हो, ट्रे
न में बैठी हो, रास्तों के किनारे, खेत में फूल के बीज फेंकती जाती थी। लोगों ने पू
छा, तुम पागल हो। उसने लाखों रुपयों के फूलों के बीज अनजान रास्तों पर फेंक दि
ए। लोगों ने कहा, तुम पागल हो इन बीजों को फेंकने से फायदा? उस महिला ने क
हा, जरूर वर्षा आएगी जल्दी ही, यह बीज फूटेंगे, इनमें फूल लगेंगे और कोई उन
फूलों को देखकर खुश होगा। लोगों ने कहा, लेकिन तुम दुबारा इस रास्तों से न नि
कल सकोगी, और न उन लोगों को खुश देख सकोगी। उसने कहा, इससे कोई फर्क
नहीं पड़ता। अगर एक बेहतर दुनिया बनानी है तो उसमें मुस्कुराहट बिखेरना जरूरी
है, बहुत फूल फैला देने जरूरी हैं।
तो मैं आपसे कहूंगा, अगर आप प्रसन्न हैं और आपके जीवन से कांटे नहीं, फूल गिर
ते हैं, अगर आपके व्यवहार से, आपके विचार से, आपके संबंधों में खुशी बिखरती
है तो आप एक ऐसी दुनिया में निर्माण में भागीदार हो रहे हैं, जिसमें युद्ध नहीं हो
सकेंगे। जिसमें हिंसा नहीं हो सकेगी। यह बात अजीब लगेगी कि मैं युद्ध के रोकने
के लिए यह कहूं । लेकिन मैं जानता हूं, सिवाय इसके कोई उपाय नहीं है। दुखी लो
ग युद्ध से नहीं बच सकते। दुखी लोग हिंसा से नहीं बच सकते, क्योंकि दुखी लोग
दूसरों को दुख देने से नहीं बच सकते हैं। यह तो पहली बात है। और यह प्रत्येक व्
यक्ति को स्मरण रखनी जरूरी है तो उसके जीवन से एक आनंद की फुआर, आनंद

की गंध निरंतर उठती रहे। उसके सोते, उठते, बैठते उसके जीवन में एक आनंद प्रकट हो।

लेकिन यह आनंद कैसे प्रकट हो?

अगर यह भीतर न हो तो यह प्रकट कैसे होगा? झूठी खुशियों का कोई अर्थ नहीं है और झूठी मुस्कुराहटें बेमानी हैं। अगर मैं झूठा मुस्कराऊं, कोशिश करके हंसू और कोशिश करके सुखी और प्रसन्न दिखने की चेष्टा करूं तो वह सब झूठ होगा, वह अभिनय होगा, वह सब एक्टिंग होगी। उसका कोई बहुत अर्थ नहीं हैं। मेरे प्राणों से आनंद उठना चाहिए। लेकिन मेरे प्राण तो उदास और अंधकार में डूबे हुए हैं। उससे आनंद कैसे उठेगा?

जरूर कोई रास्ता है कि सारा जीवन आनंद का एक संगीत हो जाए, एक गीत हो जाए और प्राणों की धड़कनें निरंतर सतत एक अपूर्व आनंद में धड़कने लगें। रास्ता है। मार्ग है। कुछ लोगों ने इसी जीवन में वैसे आनंद को उपलब्ध किया है। कुछ लोगों ने वैसे जीवन में संगीत को उपलब्ध किया है। और तब फिर--तब फिर उनके जीवन से जो प्रकट हुआ प्रेम, उनके जीवन से जो प्रकट हुई अहिंसा, उसके वे आधार रखे हैं, जिससे मनुष्य का--नए मनुष्य का जन्म हो सके।

बुद्ध एक पहाड़ के करीब से गुजरते थे। एक हत्यारे ने वहां प्रतिज्ञा कर रखी थी, एक हजार लोगों को मारने की उसने नौ सौ निन्यानबे लोग मार डाले थे, लेकिन अब रास्ता चलना बंद हो गया था। लोगों को पता हो गया था और रास्ता चलना बंद हो गया था। अब उस रास्ते पर कोई भी हनीं निकलता था। बुद्ध उस रास्ते पर गए। गांव के लोगों ने, जो अंतिम गांव था। उन्होंने कहा मत जाओ क्योंकि हत्यारा वहां अंगुलीमाल है। वह आपका भी सिर काट डालेगा। वह रास्ता निर्जन है, वहां कोई भी नहीं जाता।

बुद्ध ने कहा, अगर वहां कोई भी नहीं जाता तो वह बेचारा हत्यारा, अकेला बहुत दुख में और पीड़ा में होगा। मुझे जाना चाहिए। अगर मेरी गर्दन कट जाए तो भी उसे खुशी होगी, उसका एक हजार का व्रत पूरा हो जाएगा। दूसरी बात, जो आदमी एक हजार आदमियों को मार कर भी दुखी नहीं हुआ है। उसके प्राण पत्थर हो गए होंगे। उसके पत्थर प्राण उसे कितनी पीड़ा नहीं देते होंगे। बुद्ध ने कहा, मुझे उन नौ सौ निन्यानबे लोगों के मर जाने की उतनी पीड़ा नहीं जितनी उस आदमी के हृदय की पीड़ा है, उसके हृदय पर कितना बड़ा पत्थर होगा। मुझे जाने दें। बुद्ध वहां गए। वहां एक छोटी सी घटना घटी।

बुद्ध को आते देखकर, उनकी सीधी और शांत आकृति देख कर अंगुलीमाल को थोड़ी सी दया आयी। सोचा, भिक्षु है, भूल से आ गया। और तो कोई आता नहीं है। उसने दूर से चिल्लाकर कहा कि भिक्षु, वापस लौट जाओ। क्या तुम्हें पता नहीं, अंगुलीमाल का नाम नहीं सुना? और सभी हत्यारे चाहते हैं कि उनका नाम सुना जाए, उसी के लिए हत्या करते हैं। उसने चिल्लाकर कहा, अंगुलीमाल का नाम नहीं सुना। बुद्ध ने कहा, सुना है, और उसी की खोज में मैं भी आया हूं। अंगुलीमाल थोड़ा है

रान हुआ। उसने कहा, क्या तुम्हें पता नहीं कि मैं तुम्हारी गर्दन काट दूंगा? नौ सौ निन्यानबे लोगों को मैंने मारा है। बुद्ध ने कहा, मैं भी मरूं, क्योंकि मृत्यु निश्चित है। आज नहीं कल मर जाऊंगा। लेकिन तुम्हें अगर थोड़ी खुशी मिल सके और तुम्हारा व्रत पूरा हो जाए तो मृत्यु मेरी सार्थक हो जाएगी। अंगुलीमाल थोड़ा परेशान हुआ। इस तरह की बातें उसने जीवन में कभी नहीं सुनी थी।

उसने दो तरह के लोग देखे थे--वे जो उसकी तलवार को देखकर भाग जाते हैं और वे जो उसकी तलवार को देखकर तल वार निकाल लेते थे। इस आदमी के पास न तो तलवार थी और न यह आदमी भाग रहा था, क्योंकि आ रहा था। यह बिलकुल तीसरी तरह का आदमी था जो अंगुलीमाल ने नहीं देखा था। बुद्ध करीब आए, अंगुलीमाल से उन्होंने कहा कि तुम इसके पहले कि मुझे मारो, क्या एक छोटा सा काम मेरा कर सकोगे? और एक करते हुए आदमी की याचना कौन इनकार करेगा? अंगुलीमाल भी इनकार नहीं कर सका। बुद्ध ने कहा, यह जो सामने वृक्ष है, इसके थोड़े से पत्ते तोड़ कर मुझे दे दो। उसने अपनी तलवार से एक शाखा काटकर बुद्ध के हाथ में दे दी। बुद्ध ने कहा, तुमने मेरी बात मानी। क्या एक छोटी सी बात और मान सकोगे? इस शाखा को वापस जोड़ दो।

वह अंगुलीमाल हैरान हुआ। उसने कहा, यह तो असंभव है। वापस जोड़ देना असंभव है। बुद्ध हंसने लगे और उन्होंने कहा, फिर तोड़ना तो बच्चे भी कर सकते थे, पागल भी कर सकते थे। इसमें कोई बहादुरी नहीं, इसमें कोई पुरुषार्थ नहीं कि तुमने तोड़ी। जोड़ो तो कुछ बात है। तोड़ना तो कोई भी कर सकता है। और बुद्ध ने कहा, स्मरण रखना, जो तोड़ता है, वह निरंतर दुखी होता जाता है। और जितना ज्यादा दुखी होता है, उतना ज्यादा तोड़ता है और जितना ज्यादा तोड़ता है, उतना ज्यादा दुखी होता जाता है। अंगुलीमाल ने पूछा, सच, मैं तो बहुत दुखी हूं। क्या कोई रास्ता भी है कि मनुष्य आनंदित हो सके? बुद्ध ने कहा, जो जोड़ता है, वह आनंद को उपलब्ध होता है। अंगुलीमाल ने वह तलवार फेंक दी। उसने कहा कि मैं जोड़ने का विज्ञान सीखूंगा।

मैं आपसे यह कहना चाहता हूं, जीवन में जो भी जोड़ता है, वह आनंद को उपलब्ध होता है। जो भी क्रिएट करता है, जो भी सृजन करता है, जो भी बनाता है, वह आनंद को उपलब्ध होता है। अगर आप दुखी हैं तो उसका अर्थ है, आपने केवल तोड़ना सीखा होगा, जोड़ना नहीं। अगर आप दुखी हैं तो आपने मिटाना सीखा होगा, बनाना नहीं। आपने जीवन में कुछ बनाया, कुछ सृजन किया, कुछ क्रिएट किया? आपके जीवन से कुछ निर्मित हुआ? कुछ सृजित हुआ, कुछ बना, कुछ पैदा हुआ? कोई एक गीत, जो आपके मरने के बाद भी गाया, जा सके, कोई एक मूर्ति जो आपके बाद भी स्मृति बनी रहे, कोई एक पौधा, जो आपके न होने के बाद भी छाया दे? आपने कुछ बनाया, कुछ निर्मित किया? जो आपसे बड़ा हो, जो आप मिट जाएं और रहे, जो आप न हों और फिर भी हो। जो मनुष्य सृजन करता है, वही मनुष्य शांति को और आनंद को उपलब्ध होता है। जिसके जीवन में जितनी सृजनात्मकता,

जितनी क्रिएटिविटी होती है, उसके जीवन में उतनी ही शांति और उतना ही आनंद होता है। जो लोग केवल मिटाते और तोड़ते हैं, वे आनंदित नहीं हो सकते।
क्यों सृजन करने से मनुष्य को आनंद उपलब्ध होता है? जो व्यक्ति जितने दूर तक सृजन करता है, वह उतने दूर तक ईश्वर का भागीदार हो जाता है। ईश्वर है सृष्टा, और जब भी हम कुछ सृजन करते हैं, ईश्वर का एक अंश हमसे काम करने लगता है और जो व्यक्ति सारे जीवन को सृजनात्मक बना देता है, सारे जीवन को एक सृजनात्मक सेवा में समर्पित कर देता है, उसके जीवन में संपूर्ण रूप से ईश्वर प्रकट होने लगता है। उसका जीवन आनंद से प्रेम से भर जाता है।
सुख के लिए, आनंद के लिए सृजनात्मकता चाहिए।
कुछ निर्मित करें, कुछ बनाएं, जो आपसे बड़ा हो। आपका जीवन केवल समय का गुजरना न हो, बल्कि एक सृजन हो। वह सृजन चाहे छोटा सा क्यों न हो, वह आपके प्रेम का कृत्य हो। जो लोग जीवन में सृजनात्मक हो जाते हैं, जो लोग भी जीवन में छोटे से प्रेम के कृत्य को निर्माण दे पाते हैं, उनके प्राण आह्लादित हो उठते हैं, वे आनंद से भर जाते हैं। फिर वह आनंद ऊपर से थोपा हुआ नहीं होगा। फिर वह आनंद उनके प्राणों के अंतिम केंद्र से उठता है, फिर उनके प्राणों के केंद्र से उठता है और उनके सारे जीवन का भर देता है।
जो व्यक्ति निर्मित करने में संलग्न हो, स्मरण रखना होगा...क्योंकि सामान्यतया, हमें इस बात का स्मरण भी नहीं है कि सुख केवल उनका भाग्य बनता है, जो सृजन करते हैं। सुख तो हम सब चाहते हैं, लेकिन सृजन हम कोई भी नहीं करते। इसलिए सुख से हमारा भी कभी भी कोई संबंध नहीं हो पाता। कोई संबंध नहीं हो पाता सुख से हमारा। यदि हम सृजन कर पाए, तो सुख बाई प्रोडक्ट है सृजन की। सुख सीधा नहीं मिलता।
आनंद सीधा उपलब्ध नहीं होता। जो सृजन करता है, उसे उपलब्ध होता है। जैसे फूल सीधे नहीं मिलते। जो पौधा लगाता है, बीज बोता है, पानी डालता है, पौधे की रक्षा करता है, पौधे पर श्रम करता है, उसे फूल उपलब्ध होते हैं। फूल सीधे उपलब्ध नहीं होते। वैसे आनंद के फूल भी सीधे उपलब्ध नहीं होते। जो सीधा फूल ही चाहता हो, फूलों को बिना बोए, फूलो को बिना पानी डाले, उसे फूल नहीं मिलेंगे, उसके हाथ के फूल भी सड़ जाएंगे। फूल तो उपलब्ध होते हैं, बीज को बोने से। वैसे ही जो सृजन के बीज बोता है, उसे आनंद के फूल उपलब्ध होते हैं। कभी सृजन का कोई काम करके देखें, और स्मरण रखें, सृजन करने की शर्त क्या है? कौन लोग सृजन कर सकते हैं? एक आदमी मंदिर बनाता है और अपना नाम उसके ऊपर लगा देता है। बस फिर वह ऐक्ट क्रिएटिव नहीं रहा। फिर वह मंदिर का बनाना सृजनात्मक नहीं रहा, वह अहंकार का हिस्सा हो गया। उसे फिर कोई आनंद नहीं मिलेगा।
एक आदमी दान करता है और भागा हुआ अखबार के दफ्तर में जाता है, फिर वह कृत्य सृजनात्मक नहीं रहा, फिर वह केवल अहंकार की तृप्ति हो गयी। और स्मरण रखें, अहंकार से ज्यादा डिस्ट्रकटिव और कुछ भी नहीं है। अहंकार से ज्यादा विना

शात्मक कुछ भी नहीं है। अहंकार से ज्यादा हिंसात्मक, वायलेंट और कुछ भी नहीं है। अहंकार की पूर्ति के लिए किए गए काम सृजनात्मक नहीं रह जाते। अहंकार के द्वारा, ईगो के द्वारा मैं की तृप्ति के लिए मैं कुछ हूं। दिखायी पड़े, उसके लिए जो कुछ किया जाता है, वह सृजन नहीं है। सृजन तो तभी है जब मैं भूल जाता है। तब मैं कोई भी हनीं रह जाता। रवींद्रनाथ मर हरे थे। एक मित्र मिलने गया। और उस ने पूछा कि रवि बाबू, आपके छह हजार गीत गाए। अब तक मनुष्य जाति में किस ी कवि ने गीत नहीं गाए, जो संगीत में बांधे जा सकें।शैली, जो कि महाकवि है उस के भी दो हजार सानेट हैं, जो संगीत में बांधे जो सकते हैं। रवींद्रनाथ ने छह हजार गीत गाए, जो सभी संगीत में बद्ध हो सकते हैं। किसी मित्र ने पूछा, मरते वक्त र वींद्रनाथ को, आपने छह हजार गीत गाए। रवींद्रनाथ ने कहा, क्षमा करो। जब उन्हें गाता था, तब मैं मौजूद ही नहीं था। जब वे पैदा हुए, तब मैं नहीं था। बाद में मेर ा नाम उनसे जुड़ गया, लेकिन जब वे पैदा हुए, तब मैं बिलकुल भी हनीं था। जब मैं बिलकुल मिट जाता था और भूल जाता था, जब मुझे स्मरण भी नहीं रहता था कि मैं कौन हूं तब उसका जन्म हुआ। तब वे पैदा हुए। तब वे मेरे भीतर से गाए और फैले, इसलिए मेरा...हां, कोई भूल-चूक हुई होगी तो मेरी होगी। लेकिन गीत परमात्मा के हैं, मेरे नहीं हैं।

जिसने भी जीवन में कुछ सृजन किया है, उसे सदा ऐसा लगेगा कि वह उससे आया, लेकिन उसका नहीं है। वह माध्यम बना। वह रास्ता बना, कोई चीज उससे पैदा हु ई, लेकिन वह उसकी नहीं है। अहंकार की छाप और हस्ताक्षर उस पर हनीं होंगे। जहां-जहां अहंकार जुड़ जाता है, वहीं-वहीं सृजन भी विनाशात्मक हो जाता है। इसी लिए तो इतने सारे मंदिर हैं दुनिया में, इतनी मस्जिद हैं, इतने चर्च हैं, लेकिन मंदि र, मस्जिद और चर्च अगर सृजन से पैदा होते तो मनुष्य की दुनिया मग प्रेम भर ग या होता। लेकिन मंदिर और मस्जिद और चर्च घृणा, से पैदा हुए तो घृणा के अड्डे बने हुए हैं। इनसे ज्यादा खतरनाक तो अड्डे नहीं हैं दुनिया में। इन्होंने तो मनुष्य को लड़ाने में और हत्या करवाने में भाग लिया। निश्चित ही यह प्रेम से पैदा नहीं हुए होंगे। निश्चित ही यह अहंकार से आए होंगे और अहंकार लड़ाता है, इसलिए मंदिर और मस्जिद लड़ते हैं। वह अहंकार पर निर्मित हैं। उनके भीतर सृजनात्मक, पवित्र ता, सृजनात्मक प्रेम प्रकट नहीं हुआ। तो एक अंतिम बात यह कहना चाहता हूं : पहली बात मैंने यह कही कि यदि आप दुखी हैं तो दुनिया से हिंसा का अंत नहीं हो गा। आपका आनंदित होना जरूरी है। दूसरी बात मैंने आपसे यह कही कि अगर आ प आनंदित होना चाहते हैं तो आपका सृजनात्मक होना जरूरी है और तीसरी और अंतिम बात मैं आपसे यह कहना चाहता हूं कि अगर आप सृजनात्मक होना चाहते हैं तो आपका अहंकार शून्य होना जरूरी है। आपको यह जो खयाल हमारे भीतर पैद ा हुआ है कि मैं कुछ हूं, यह भ्रम टूट जाना चाहिए, छूट जाना चाहिए। यह भ्रम म नुष्य को अंत तक पीड़ा ही देता है और इस भ्रम के कारण ही वह सत्य को भी न

हीं जान पाता, जो उसके भीतर छिपा था। और उस स्वर से भी वंचित रह जाता है
, जिसके वह द्वार पर ही खड़ा था।
यह मैं का अहंकार अदभुत है। श्वास पर भी हमारा कोई वश नहीं लेकिन हम कह
ते हैं, मैं श्वास लेता हूं। अगर मैं श्वास लेता हूं तो फिर तो मुझे मरने की कोई ज
रूरत नहीं है। मैं जब श्वास लेना चाहूंगा, लेता चला जाऊंगा। लेकिन एक दिन पाया
जाता है, श्वास बाहर गयी और अंदर नहीं आयी, और फिर नहीं ले पाता हूं। तो
यह कहना पागलपन ही होगा कि मैं श्वास लेता हूं,।श्वास आती है, जाती है। यही
तक ठीक है। उसके साथ मैं को जोड़ देना गलत है।
हम कहते हैं, मेरा गलत जन्म—मेरा जन्म दिन, जैसे उस पर ही हमारा कोई अधि
कार हो। न हमारा जन्म पर कोई अधिकार है, न मृत्यु पर हमारा कोई अधिकार है
, न हमारे श्वासों पर हमारा कोई अधिकार है, फिर यह मैं को ठहरने की जगह क
हां है? इस मैं को बड़े होने का स्थान कहां है? लेकिन जीवन भर इस मैं को खड़ा
करते हैं। अनेक-अनेक रूपों मग इस मैं को मजबूत करते हैं। और फिर जब यह मैं
मजबूत हो जाता है, जितना मजबूत हो जाता है, उतना बगल वाले मैं से इसकी ट
क्कर शुरू हो जाती है। व्यक्तियों के मैं लड़ते हैं, राष्ट्रों के मैं लड़ते हैं।
यह सारे झंडे जो हर राष्ट्र अपना ऊंचा किए हुए हैं, यह सब राष्ट्रों के अहंकार के
झंडे है और लड़ाते हैं। यह टक्कर करवाते हैं। व्यक्तियों के झंडे हैं, वे लड़ाते हैं, रा
ष्ट्रों के झंडे हैं, वे लड़ाते हैं। हम कहते हैं, हमारे मुल्क में कहते हैं कि भारत बड़ा
महान देश है, पागलपन की बात हैं। जब तक कौमें इस तरह की बातें पत्थर पड़ र
हे हैं। क्या कहते! उन सबने कहा, तुम अपनी आत्मकथा लिखो। आटोबायग्राफी लि
खो। तुम जैसा पत्थर हमारे पत्थरों में कभी पैदा ही नहीं हुआ। तुम तो जरूर ईश्वर
पुत्र हो। तुम तो महात्मा हो। तुम तो धन्य हो, जरूर कोई ईश्वरीय शक्ति काम
कर रही है। तभी तो तुम आकाश में उड़े शत्रु का विनाश किया, राजमहलों के अ
तिथि बने।
फिर आटोबायग्राफी लिखनी पड़ती है। आदमी को, और पत्थर से ज्यादा उनकी कहा
नी नहीं है। एक पत्थर से ज्यादा, यह जो पत्थर ने यात्रा की, इससे ज्यादा हमारी
यात्रा है? इस पर थोड़ा विचारें, इसे थोड़ा सोचें। इस पत्थर से ज्यादा कथा नहीं दि
खेगी और अब आत्मकथाएं बचकानी और चाइल्डिश मालूम होंगी, सब मनुष्य की
अहंकार मालूम होंगी।
यह अहंकार सबसे बड़ी डिसट्रेक्टिव फोर्स है, सबसे बड़ी विनाशात्मक शक्ति है। अग
र यह सोच विचार आपको दिखायी पड़े, मैं तो कुछ भी ही हूं, अगर यह अनुभव में
आए, मैं तो न कुछ हूं। प्रकृति के हाथ का खेल, या परमात्मा के द्वारा फेंका गया
एक पत्थर, और सारी यात्रा और सारी कथा, और फिर पत्थर का वापस गिर जा
ना, इससे ज्यादा मैं कुछ भी नहीं हूं। ऐसा अगर दिखायी पड़े तो आपके जीवन में
अहंकार विलीन हो जाएगा। और जैसे ही अहंकार विलीन हुआ वैसे ही, उसका जन्म
होता है, जो प्रेम है, जो आनंद है। उसका जन्म होता है, जो आत्मा है। उसकी प्र

तीति होती है, जो भीतर छिपा हुआ सत्य है, जो वास्तविक हमारी सत्ता है। और उसकी उपलब्धि होते ही सारे जीवन की दृष्टि कुछ और हो जाती है। फिर होता है सृजन। फिर आप उठते हैं तो सृजन होता है, फिर आप श्वास लेते हैं तो सृजन होता है, फिर आप प्रेम करते हैं तो सृजन होता है। आपका गुजर जाना, आपका होना मात्र एक सृजनात्मक सेवा हो जाती है।

यह तीन छोटी सी बात मैंने कहीं। हैरानी होगी कि इनको मैं विश्व शांति से कैसे जोड़ता हूं। निश्चित ही, इन्हें मैं विश्व शांति से जोड़ता हूं। इसलिए जोड़ता हूं कि एक-एक व्यक्ति से मिलकर हमारा यह सारा मनुष्य का विश्व बना है। एक-एक छोटे-छोटे व्यक्ति का जोड़ है। विश्व कहीं है नहीं। हम सारे लोग मिलकर इस विश्व को बनाते हैं, बनाए हुए हैं। हम सारे लोगों ने इसे निर्मित किया है। हम सारे लोगों के प्राण यदि बदले हमारे चित्त यदि बदलें, हमारे सोचने और जीने का ढंग यदि बदले तो ही यह संभव है कि हम एक दूसरे तरह की मनुष्यता को जन्म देने में समर्थ हो सकें। और स्मरण रखें, यह जिम्मा प्रत्येक व्यक्ति के ऊपर है, उसे टाला नहीं जा सकता। इसे किसी और पर टाला नहीं जा सकता। अगर मनुष्य की समाप्ति होगी तो मैं जिम्मेदार रहूंगा, आप जिम्मेदार रहेंगे। और अगर मनुष्य को बचाना है तो मुझे कुछ करना होगा, आपको कुछ करना होगा।

यह तीन छोटी सी बातें, अगर थोड़े से लोग जमीन पर करने में समर्थ हो जाए तो थोड़े से दिए जल जाएंगे अंधकार में थोड़े से प्रकाश के पैदा हो जाएंगे। और जब एक दिन जलता है तो दूसरे बुझे हुए दिए के प्राणों में भी जलने की आकांक्षा पैदा होने लगती है। और जब एक दिया जलता है तो उसके आलोक में अनेक दीयों को जलने की उत्प्रेरणा मिलनी शुरू हो जाती है। ईश्वर करे, आपके भीतर संकल्प पैदा हो, ईश्वर करे, आपके भीतर एक सृजनात्मक ऊर्जा पैदा हो, आपके भीतर एक प्रेम पैदा हो। ईश्वर करे, आपके भीतर उस प्रार्थना का जन्म हो जिसे हम एक नयी तरह की दुनिया बना सकें। अब तक मनुष्य जैसा जीया है वह एकदम गलत है और अब तक मनुष्य ने जो भी किया है उससे हित नहीं हुआ। बिलकुल ही एक बड़ी क्रांति से गुजरे बिना कोई मार्ग नहीं है। और अगर राजनीतिज्ञों पर, राजनेताओं पर बात छोड़ दी गयी तो दुनिया डूबेगी, दुनिया को बचने का फिर कोई मार्ग नहीं दिखायी पड़ता। लेकिन अगर एक-एक व्यक्ति अपने ऊपर बात ली तो कुछ हो सकता है। वह आशा करता हूं कि कुछ हो सकेगा। हम सारे छोटे-छोटे लोग भी उस बहुत बड़े के भागीदार बन सकते हैं।

मेरी इन बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना है। उससे बहुत-बहुत आनंदित हूं, और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं, मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

लायन्स क्लब, पूना, दिनांक 4 दिसंबर, 66

तुम भी परमात्मा हो

मेरे प्रिय आत्मन,

मैं अत्यंत आनंदित हूं और उत्साहित भी। सत्य के संबंध में थोड़ी सी बातें आप सुन ने को उत्सुक हैं यह मुझे आनंद होगा कि अपने हृदय की थोड़ी सी बातें आपसे कहूं। बहुत कम लोग हैं, जो सुनने को राजी हैं और बहुत कम लोग हैं जो देखने को उत्सुक हैं। इसलिए जब कोई सुनने को उत्सुक मिल जाएगा और कोई देखने को तैयार हो तो स्वाभाविक है कि आनंद अनुभव हो। हमारे पास आंखें हैं, हमारे पास कान भी है लेकिन जैसा मैंने कहा, बहुत कम लोग तैयार हैं कि यह देखे और बहुत लोग कम तैयार हैं कि वे सुनें। यही वजह है कि हम आंखों के रहते हुए अंधों की भांति जीते हैं और हृदय के रहते हुए भी परमात्मा को अनुभव नहीं कर पाते हैं।

मनुष्य को जितनी शक्तियां उपलब्ध हुई हैं, उसके भीतर जीतनी संभावनाएं हैं अनुभूति की, उनमें से न के बराबर विकसित हो पाती है। एक स्मरण मुझे आता है, उन से ही चर्चा प्रारंभ करूं।

किसी देश में एक साधु को कुछ लोगों ने जाकर कहा, कुछ शत्रु तुम्हारे पीछे पड़े हुए हैं और वे तुम्हें समाप्त करना चाहते हैं। उस साधु ने कहा, अब कोई भी डर नहीं है, जब वे मुझे समाप्त करने आएंगे तो मैं अपने किले में जाकर छिप जाऊंगा उस साधु ने कहा, जब वे मुझे समाप्त करने आएंगे तो मैं किले में जाकर छिप जाऊंगा। वह तो एक फकीर था, उसके पास एक झोपड़ा भी नहीं था। उसके शत्रुओं को यह खबर पड़ी और उन्होंने यह सुना कि उसने कहा है कि जब मुझ पर कोई हमला होगा तो मैं अपने किले में छिप जाऊंगा, वे हैरान हुए। उन्होंने एक रात उसके झोपड़े पर जाकर उसे पकड़ लिया और पूछा कि कहां है तुम्हारा किला? वह साधु हंसने लगा और हृदय पर हाथ रखा और कहा, यहां है मेरा किला। और जब तुम मुझ पर हमला करोगे तो मैं यहां छिप जाऊंगा। असल में मैं वहीं छिपा हुआ हूं। और इसलिए मुझे किसी हमले का कोई डर नहीं है। लेकिन यहां है किला, उसका हमें कोई भी पता नहीं है।

वे लोग भी, जो धर्म की बातें करते हैं, ग्रंथ पढ़ते हैं, गीता, कुरान, बाइबिल पढ़ते हैं, वे लोग भी जो भजन कीर्तन करते हैं, शिवालय और मंदिर मस्जिद में जाते हैं उनको भी यहां, जो हरेक मनुष्य के भीतर एक केंद्र है, उसका उन्हें भी कोई पता नहीं है। उनकी भी बातें, बातों में ज्यादा नहीं हैं, इसलिए उसका कोई परिणाम जीवन में दिखायी नहीं पड़ रहा है। सारी जमीन पर धार्मिक लोग हैं, लेकिन धर्म बिलकुल ही दिखायी नहीं पड़ता है। और सारी जमीन पर मंदिर हैं, मस्जिद हैं, गिरजाघर हैं, लेकिन उनका कोई भी परिणाम, कोई प्रभाव, कोई प्रकाश जीवन में नहीं है। इसके पीछे एक ही वजह है कि हम उस मंदिर से परिचित नहीं हैं जो हमारे भीतर है, और हम केवल उन्हीं मंदिरों से परिचित हैं जो हमारे भीतर नहीं है। स्मरण रहे, जो मंदिर भीतर नहीं हैं, वह मंदिर झूठा है। स्मरण रखें, वे मूर्तियां जो बाहर स

थापित की गयी हैं और वे प्रार्थनाएं जो बाहर हो रही हैं, झूठी हैं। असली मंदिर औ
र असली परमात्मा प्रत्येक मनुष्य के भीतर बैठा हुआ है।
इसलिए धार्मिक आदमी वह नहीं है, जो तलाश में कहीं परमात्मा के घूमता हो। धा
र्मिक आदमी वह है जो सारे घूमने को छोड़कर अपने भीतर प्रवेश करता है। इसलि
ए धार्मिक आदमी की खोज बाहर के जगत में नहीं है। कितनी ही बाहर यात्रा हो,
वहां कुछ भी उपलब्ध नहीं होगा, लेकिन भीतर भी एक यात्रा होती है और वहां कु
छ उपलब्ध होता है। धार्मिक आदमी की खोज भीतर की यात्रा की खोज है।
यह जो मैंने कहा, हम सबके भीतर कुछ केंद्रीय है जिससे हम स्वयं अपरिचित हैं औ
र मनुष्य की सारी चिंता, सारा दुख इस एक ही बात से पैदा होता है। उसके जीवन
का सारा मन स्ताप, सारी एंगझाइटी, सार एंग्विश, जो भी पीड़ा और परेशानी है,
वह इस बात से पैदा होती है कि हम करीब-करीब स्वयं से ही अपरिचित हैं, अपन
भीतर जाने का रास्ता ही भूल गए हैं यह आश्चर्यजनक लग सकता है। हमें कितने
रास्ते ज्ञात हैं। हम चांद पर और मंगल पर पहुंचने की कोशिश में हैं। बहुत जल्दी
मनुष्य के चरण वहां पड़ जाएंगे।
यह भी हो सकता है, एक दिन मनुष्य और भी लंबी अंतरिक्ष की यात्रा करे, मनुष्य
ने समुद्र की गहराइयों में जो है, वहां तक प्रवेश पा लिया है और अंतरिक्ष में भी
वह प्रवेश पा लेगा लेकिन एक ऐसी भी गहराई है जो निकट है और जिससे हम बि
लकुल अपरिचित हैं। वह गहराई हमारे प्रत्येक के भीतर हमारे स्वयं की, हमारे स्व
यं के सत्ता की गहराई है। इस गहराई में कैसे प्रवेश हो सकता है, उस संबंध में ही
थोड़ी सी बातें आज कहना पसंद करूंगा। हो सकता है, मेरी कुछ बातें अप्रीतिकर
भी लगें। मैं जानकर कहता हूं कि कुछ बातें अप्रीतिकर हो क्योंकि जो अप्रीतिकर हो
ता है, वह हिलाता है और जगाता है हो सकता है, मेरी कुछ बातें बुरी लगें। मैं जा
नकर कहता हूं कि मेरी कुछ बातें बुरी लगें, क्योंकि जो बुरा लगता है, उससे चिंत
न पैदा होता है और मनुष्य का विचार सजग होता है। फिर भी मैं प्रारंभ में कहूं ि
क मुझे साफ कर देंगे, अगर कोई बात बुरी लगती हो, अगर कोई बात चोट करती
हो तो क्षमा कर देंगे। बाकी चोट मैं इसीलिए पहुंचाना चाहता हूं, ताकि भीतर ज
ब हम बिलकुल सो गए हैं, वहां कोई जागरण हो।
जीवन के संबंध में, या सत्य के संबंध में बहुत सी बातें सुनते-सुनते हम करीब-करी
ब आत्म मूर्छित हो गए हैं और वे शब्द अब हमारे भीतर कुछ भी पैदा नहीं करते
हैं। शब्द धीरे-धीरे मर जाते हैं। और मर जाते हैं इसलिए कि हम उनके आदी हो
जाते हैं, उनके पुनरुक्ति के कारण,बार-बार रिपीटीशन के कारण वे हमें याद हो जा
ते हैं, हमारी आदम बन जाते हैं और हमें प्रभावित करना बंद कर देते हैं। लोग रो
ज गीता पढ़ते हैं। जो आदमी रोज गीता पढ़ते हैं। जो आदमी रोज गीता पढ़ता है,
वह धीरे-धीरे गीता के प्रति मर जाएगा और गीता उसके लिए मर जाएगी। क्योंकि
निरंतर उसे पढ़ने का अर्थ ही यह होगा कि वे शब्द याद हो जाएंगे और स्मृति में
भर जाएंगे और आपके भीतर कुछ भी जगाने में असमर्थ हो जाएंगे।

दुनिया में किसी धर्म ग्रंथ के साथ सबसे बुरा जो काम हो सकता है, वह उसका पाठ है। निरंतर उसका पाठ सबसे खतरनाक बात है। क्योंकि निरंतर उसके पाठ का एक ही अर्थ होगा कि आपमें उसके प्रति तजो भी सजीवता है, जो भी सजगता है, जो भी स्फूर्ति है, जो भी जीवंत प्रतीति है वह धीरे धीरे खो देंगे। इसलिए दुनिया में उन कौमों को, जिनके पास अदभुत ग्रंथ हैं, अदभुत विचार हैं, एक दुर्भाग्य भी सहना पड़ता है। उन्हें वह विचार और ग्रंथ स्मरण हो जाते हैं और उनकी जो जीवित चोट है, वह समाप्त हो जाती है।
एक साधु हुआ है, वह तो कोई फकीर नहीं था, कोई गैरिक वस्त्रों को उसने नहीं पहना था और उसने कभी अपने घर को नहीं छोड़ा। वह साठ वर्ष का हो गया, उसका पिता भी जिंदा था। उसके पिता की उम्र तब नब्बे वर्ष की थी। उसके पिता ने उसे बुलाकर कहा कि देखो। मैं तुम्हें साठ वर्ष से देख रहा हूं, तूने एक भी दिन भगवान का नाक नहीं लिया, तुम एक भी दिन मंदिर नहीं गए, तुमने एक भी दिन सद वचनों का पाठ नहीं किया। अब मैं बूढ़ा हो गया और मरने के करीब हूं, तो मैं तुमसे कहना चाहता हूं, तुम भी बूढ़े हो गए हो, कब तक प्रतीक्षा करोगे? नो लो प्रभु का, प्रभु के विचार को स्मरण करो, मंदिर जाओ, पूजा करो। उसके बूढ़े लड़के ने कहा, मैं भी आपको कोई चालीस वर्षों से मंदिर जाते देखता हूं, पाठ करते देखता हूं मेरा भी मन होता था कि रोक दूं, यह पाठ। मंदिर और यह मस्जिद जाना व्यर्थ हो गया है। आप रोज-रोज वही कर रहे हैं। अगर पहले दिन ही परिणाम नहीं हुआ तो दूसरे दिन कैसे परिणाम होगा, तीसरे दिन कैसे परिणाम होगा, चौथे दिन कैसे परिणाम होगा? जो बात पहले दिन परिणाम नहीं ला सकी है, वह चालीस वर्ष दोहराने से भी परिणाम नहीं लाएंगे, क्योंकि पहले दिन के बाद निरंतर परिणाम कम होता जाएगा, क्योंकि हम उसके आदी होते जाएंगे। उसके लड़के ने कहा, मैं भी कभी नाम लूंगा, लेकिन एक ही बार। मैं भी स्मरण करूंगा लेकिन एक ही बार, क्योंकि दुबारा का कोई भी अर्थ नहीं होता है। जो होना है, वह एक बार में हो जाना चाहिए, नहीं होता है, नहीं होगा।
कोई उस घटना के पांच वर्षों के बाद, पैंसठ वर्ष की उम्र में उस साधु ने भगवान का नाम लिया और नाम लेते ही उसकी श्वास भी समाप्त हो गयी और वह गिर भी गया, उसका निर्वाण भी हो गया।
यह अकल्पनीय मालूम होता है कि कैसे होगा? लेकिन जब भी होता है, यही होता है। एक ही घटना में, एक ही स्मरण में, एक ही प्रवेश में पर्दा टूट जाता है और अगर एक ही में न टूटे तो समझना, वही चोट बार-बार करनी बिलकुल व्यर्थ है। तो मैं कुछ बातें, कुछ विचार, जिनके प्रति हम मर गए हैं, जिन्हें सुनते-सुनते हम जिनके आदमी हो गए हैं, जिनकी खोज विलीन हो गयी है, उनके संबंध में कुछ बातें। आपको कहूं, शायद कोई कोण आपको दिखायी पड़ जाए और कोई बात, कोई क्रांति आपके भीतर संभव हो सके।

धर्म हमेशा क्रांति से उपलब्ध होता है, क्रम से, ग्रेजुअल नहीं उपलब्ध होता है। धर्म धीरे-धीरे उपलब्ध नहीं होता, धर्म हमेशा एक क्रांति से उपलब्ध होता है। जो सोचते हैं, हम धीरे-धीरे धार्मिक हो जाएंगे वे गलती में हैं। हिंसक सोचता हो, मैं धीरे-धीरे अहिंसक हो जाऊं तो गलती में है। घृणा करने वाला सोचता हो कि मैं धीरे-धीरे प्रेम से भर जाऊं तो गलती में है। अंधकार मिटाने वाला सोचता हो कि मैं धीरे-धीरे अंधकार को मिटा लूं तो गलती में है। जब प्रकाश जलता है तो अंधकार एक ही क्षण में विलीन हो जाता है और जब प्रेत जाग्रत होता है तो घृणा एक ही क्षण में विलीन हो जाती है और जब अहिंसा आती है तो हिंसा एक ही क्षण में छूट जाती है।

जीवन में जो भी महत्वपूर्ण है वह एक ही क्षण में घटित होता है, क्रमशः घटित नहीं होता। जो भी क्रमशः घटित होता है, वही व्यर्थ और क्षुद्र है। जो एक ही साथ, जो क्रांति घटित होती है वही मूल्यवान, वही सार्थक, वही अर्थपूर्ण है और वही व्यक्ति को परमात्मा से जोड़ती है। कोई व्यक्ति धीरे-धीरे संसार से दूर होकर परमात्मा को उपलब्ध नहीं होता। जब भी परमात्मा को कोई व्यक्ति उपलब्ध होता है तो एक छलांग में, एक क्रांति में, एक विस्फोट में उपलब्ध होता है और एक ही साथ तब कुछ परिवर्तित हो जाता है।

जैसे हम किसी सोते व्यक्ति को उठा दें, तो वह धीरे-धीरे उठता है? नींद धीरे-धीरे टूटती है? जैसे हम किसी को उठा दें, एक क्रांति हो जाती है, सपने टूट जाते हैं और जागरण सामने आ जाता है। धर्म का जीवन भी क्रांति का जीवन है और इसलिए जो लोग धीरे-धीरे का खयाल करते हों, वह गलती में हैं और धीरे-धीरे का खयाल हमारी आलस्य का ईजाद है। हम असल में चाहते नहीं क्रांति, इसलिए कहते हैं, धीरे-धीरे बुद्ध ने कहा है, कोई अगर आग में गिर जाए और हम उसमें कहें, आग के बाहर आ जाओ और वह कहे कि मैं धीरे-धीरे बाहर आऊंगा, आपकी बात का विचार करूंगा, कोशिश करूंगा, प्रयत्न करूंगा, अभ्यास करूंगा, फिर बाहर आऊंगा। तो बुद्ध ने कहा, इसका अर्थ हुआ कि उस मनुष्य को आग दिखायी नहीं पड़ रही है, इसका अर्थ हुआ, वह बाहर नहीं निकलना चाहता है। अगर आग दिखाई पड़ रही हो तो कोई यह नहीं कहेगा मैं धीरे-धीरे बाहर आऊंगा। जैसे ही दिखाई पड़ेगी आग, वह बाहर आ जाएगा। यह तात्कालिक, तीव्र क्रांति से होगा।

कुछ जीवन के संबंध में ऐसे स्मरण, जिनसे क्रांति की संभावना पैदा हो जाए, वह भूमिका बन जाए, क्रांति फलित हो सके, वह मैं आपको कहना चाहता हूं। कोई तीन बातों के संबंध में आज की संध्या विचार करने का मेरा खयाल है।

पहला तो—जिनको भी क्रांति से गुजरना हो, उनके लिए श्रद्धा खतरनाक है। उन्हें श्रद्धा नहीं, जिज्ञासा चाहिए। और जो भी व्यक्ति श्रद्धा कर लेगा, उसकी सारी प्रगति, उसका सारा विकास बंद हो जाएगा। श्रद्धा एक तरह की मृत्यु है। श्रद्धा का स्वीकार रुक जाना है। क्रांति की तरफ उठने के लिए श्रद्धा नहीं, जिज्ञासा चाहिए। इसलिए पहले तो इस सूत्र पर मैं विचार करूं कि श्रद्धा नहीं, जिज्ञासा।

साधारणतः हम सुनते हैं, विश्वास करो, साधारणतः हम सुनते हैं गीता कहती हो, कुरान कहता हो, बाइबिल कहती हो, उसे मान लो। साधारणतः हम सुनते हैं बुद्ध, महावीर, मोहम्मद, क्राइस्ट या कृष्ण जो कहते हैं, उसे स्वीकार कर लो। और जो स्वीकार नहीं करेगा, वह भटक जाता है। मैं आपसे यह कहना चाहता हूं, जो स्वीकार कर लेता है, वह भटक जाता है। इसलिए भटक जाता है कि जो भी दूसरे के सत्यों को स्वीकार कर लेता है, वह अपने सत्य की खोज से वंचित हो जाता है। चाहे वह सत्य कृष्ण का हो, चाहे बुद्ध का, चाहे महावीर का। अगर उस उधार सत्य को स्वीकार कर लिया तो आपकी अपनी खोज बंद हो जाएगी, आपका अपना अन्वेषण बंद हो जाएगा। आप रुक जाएंगे, ठहर जाएंगे। आपका अपना विकास समाप्त हो जाएगा।

स्मरण रखें, इस दुनिया में प्रत्येक व्यक्ति को अगर वास्तविक विकास करना हो तो अपना ही विकास करना होता है, किसी दूसरे का विकास काम में नहीं आ सकता है। किसी दूसरे का किया गया भोजन आपको तृप्ति नहीं देगा और किसी दूसरे के पहने वस्त्र आपके शरीर को नहीं ढकेंगे। किसी दूसरे द्वारा अनुभव किया गया सत्य आपका सत्य नहीं हो सकता है। इस जगत में कोई भी मनुष्य किसी से उधार सत्य को नहीं पा सकता, लेकिन हम सब उधार सत्यों को पाए हुए हैं और। हमें सिखाया जाता है कि हम उधार सत्यों को स्वीकार कर लें। हमें निरंतर समझाया जाता है कि हम दूसरों के सत्यों को मान लें, अंगीकार कर लें।

हमें संदेह से बचने को कहा जाता है और विश्वास करने को कहा जाता है। मैं आपसे संदेह करने को कहना चाहूंगा। जिसे भी सत्य जानना हो, से संदेह करने का साहस करना होता है। आर संदेह इस जगत में सबसे बड़ा साहस है। स्मरण रखें, जब मैं कह रहा हूं संदेह करना पड़ता है तो यह नहीं कह रहा हूं कि अविश्वास करें। अविश्वास भी विश्वास का ही एक रूप है। जो आदमी कहता है, मैं ईश्वर को मानता हूं, एक विश्वास है। जो आदमी कहता है, मैं ईश्वर को मानता हूं, एक विश्वास है। जो आदमी कहता है, मैं ईश्वर को नहीं मानता, यह भी एक विश्वास है। जो आदमी कहता है, आत्मा है, यह भी एक विश्वास है, जो आदमी कहता है, आत्मा नहीं है, यह भी एक विश्वास है। यह दोनों ही विश्वास हैं।

आस्था और अनास्था, श्रद्धा और अश्रद्धा, सब श्रद्धा के रूपांतर हैं। दोनों ही स्थिति में हम दूसरे लोगों को मान लेते हैं, खुद खोज नहीं करते हैं। संदेह का अर्थ है, न श्रद्धा, न अश्रद्धा। संदेह का अर्थ है, न स्वीकार, न अस्वीकार। संदेह का अर्थ है जिज्ञासा। संदेह का अर्थ है, मैं जानता हूं, क्या है? मैं जानना चाहता हूं, सत्य क्या है?

और जब तक कोई व्यक्ति सजग न हो, इस सत्य के प्रति कि मुझे जानना है कि सत्य क्या है, तब तक उसकी स्वीकृतियां, उसकी श्रद्धाएं, उसके विश्वास उसे कहीं भी ले जाने में समर्थ नहीं होंगे, बल्कि धीरे-धीरे क्रमशः, जैसे-जैसे उसकी उम्र ढलती जाएगी वैसे-वैसे वह विश्वास को जोर से पकड़ने लगेगा, क्योंकि साहस कम होता ज

ाएगा। इसलिए बूढ़े जल्दी विश्वास कर लेते हैं। जवान मुश्किल में विश्वास करते हैं
। बूढ़ों का विश्वास कोई कीमत नहीं रखता। साहस जैसे-जैसे कम होता जाता है, ि
वश्वास को पकड़ लेते हैं, भय के कारण, सुरक्षा के लिए, डर के कारण, मृत्यु के
बाद न मालूम क्या होगा? अगर नहीं स्वीकार किया तो न मालूम किन नर्कों में पी.
डा भोगनी पड़ेगी। अगर परमात्मा को नहीं माना, परमात्मा न मालूम क्या बदला ल
ेगा, यह भय जैसे-जैसे घना होता है वैसे-वैसे आदमी विश्वास करने लगता है।
विश्वास कमजोरी है।
और जो कमजोर है, वह सत्य को उपलब्ध नहीं हो सकता।
विश्वास भय है। विश्वास आपके किसी न किसी रूप में भय पर, घबड़ाहट पर, डर
पर खड़ा हुआ है। और जो डरा हुआ है, भयभीत है, वह सत्य को कैसे पा सकेगा।
सत्य को पाने की पहली शर्त तो अभय है। उसे पाने की पहली बुनियाद तो भय को
छोड़ देना है। लेकिन हमारे धर्म, हमारे संप्रदाय, हमारे पुरोहित, हमारे पादरी, हमा
रे धर्म गुरु, हमारे संन्यासी भय सिखाते हैं। उनके भय सिखाने के पीछे जरूर कोई
कारण है। छोटे-छोटे बच्चों के मनों में भी हम भय को भर देते हैं, और छोटे-छोटे
बच्चों के मनों में भी हम श्रद्धा को पैदा करना चाहते हैं। इसके पहले कि वे विचार
में सजग हो सकें, हम किसी तरह के विश्वास में उनको आबद्ध कर देना चाहते हैं
।
दुनिया के सारे धर्म, बच्चों के साथ जो अनाचार करते हैं, उससे बड़ा कोई अनाचार
नहीं है। इसके पहले कि बच्चे की जिज्ञासा जाग सके, वह पूछे कि क्या है, हम उ
सके दिमाग में वे बातें भर देते हैं जिनका हमें भी कोई पता नहीं है। हम उसे हिंदू,
मुसलमान, जैन या ईसाई बना देते हैं। हम उस उसे कुरान या बाइबिल या गीता
रटा देते हैं। हम उसे कह देते हैं, ईश्वर है या ईश्वर नहीं है। फिर यह ही विश्वास
जीवन भर कारागृह की तरह उसकी चेतना को बंद किए रहेंगे यह वह कभी साहस
नहीं कर सकेगा कि सत्य को जान सके।
बच्चों के साथ, अगर किन्हीं मां बापों को, किन्हीं गुरुओं को, किन्हीं अभिभावकों को
प्रेम हो, तो उन्हें पहला काम करना चाहिए कि उन्हें अपना प्रेम तो दें, लेकिन अप
ने विश्वास न दें, अपनी श्रद्धाएं न दें, अपने विचार न दें। उन्हें उन्मुख रखें, उनकी
जिज्ञासा को जगाए, लेकिन उनकी जिज्ञासा को समाप्त न करें।
श्रद्धा जिज्ञासा को तोड़ देती है और नष्ट कर देती है। हम सारे लोग ऐसे ही लोग
हैं, जिनकी जिज्ञासाएं बचपन में तोड़ दी गयी हैं, और जो किसी न किसी तरह की
श्रद्धा, अपने किसी न किसी तरह के विश्वास, किसी न किसी तरह के बिलीफ को
पकड़ के बैठ गए हैं। वह विश्वास ही हमें ऊपर नहीं उठने देता। वह विश्वास ही ह
में विचार करने देता। वह विश्वास कहें गलत न हो, इसलिए हमें जिज्ञासा नहीं कर
ने देता।
जैसा आस्तिक देशों में होता है, वैसा ही जमीन के कुछ हिस्सों पर नास्तिक विचार
का प्रचार और प्रोयेगेण्डा हो रहा है। उन्हें समझाया जा रहा है, ईश्वर नहीं है, आत

मा नहीं है, स्वर्ग नहीं है, नर्क हनीं है। छोटे-छोटे बच्चों को यह बातें समझायी जा रही हैं। धीरे-धीरे वे उनके अचेतन मन में प्रविष्ट हो जाती हैं और फिर वे विचार करने में असमर्थ हो जाते हैं। हम करीब-करीब ऐसे लोग हैं जो विचार करने में बहु त पहले पंगु बना दिए गए हैं। अब हम क्या करें?

सबसे पहली बात होगी कि हम इस पंगुता को छोड़ दे। मां-बाप ने, समाज ने, परिस्थितियों ने, प्रोपेगेण्डा ने जो कुछ आपको दिया हो, उसे एकबारगी अलग कर दें। ज ो कचरे को अलग नहीं करेगा, वह कभी भी अपने भीतर की अग्नि को उपलब्ध नह ीं हो सकता। एक बार उसे हटा ही देना होगा। संन्यासी हैं, जो समाज को छोड़कर भाग जाते हैं। लेकिन मैं वास्तविक संन्यासी उसे कहता हूं जिसने समाज ने जो-जो ि सखाया हो, उसके फेंक दिया हो। समाज को छोड़कर भागना वास्तविक संन्यास नहीं है। समाज ने जो सिखायी हो। समाज ने जो टीचिंग्स दी हों, समाज ने जो विश्वास दिए हों, उन सबको जो फेंक दे वह वास्तविक संन्यासी है और वैसे के लिए बहुत साहस चाहिए।

इसलिए मैं आपसे कहूं, श्रद्धा नहीं जिज्ञासा धार्मिक आदमी का पहला लक्षण है। औ र जहां श्रद्धा पहला लक्षण होगा वहां आदमी धार्मिक नहीं हो सकता। और ऐसे ही वाले धार्मिकों ने सारी दुनिया को नष्ट किया है। उनका पूरा इतिहास खून खराबी, बेईमानी, अत्याचार, आक्रमण और हिंसा से भरा हुआ है। क्योंकि श्रद्धा हमेशा किस ी ने विरोध में खड़ा कर देती है। एक मुसलमान की श्रद्धा उसे हिंदू के विरोध में ख. डाकर देती है। एक हिंदू की श्रद्धा उसे ईसाई के विरोध में खड़ा कर देती है। एक जैन की श्रद्धा उसे बौद्ध के विरोध में खड़ा कर देती है। लेकिन खयाल करें, जिज्ञास ा किसी के विरोध में किसी को खड़ा नहीं करती। इसलिए श्रद्धा किसी भी हालत में धार्मिक आदमी का लक्षण नहीं हो सकता है। जिज्ञासा किसी के विरोध मग किसी को खड़ा नहीं करती, यही वजह है कि साइंस, जो कि श्रद्धा पर नहीं खड़ी है, जिज्ञ ासा पर खड़ी है, एक है, पच्चीस तरह की साइंसेज नहीं हैं। हिंदुओं की अलग केमिस्ट्री, मुसलमानों की अलग केमिस्ट्री नहीं है। हिंदुओं का अलग गणित, जैनों का अलग गणित नहीं है। साइंस एक है, क्योंकि साइंस श्रद्धा पर नहीं, जिज्ञासा पर खड़ी है। धर्म भी दुनिया में एक होगा, अगर वह श्रद्धा पर नहीं, जिज्ञासा पर खड़ा हो। औ र जब तक धर्म अनेक हैं, तब तक धर्म के नाम पर झूठ बात चलती रहेगी।

बीच में एक महिला की आवाज : क्रोध में :

अलग-अलग धर्म होंगे, तब तक इस तरह का गुस्सा आना स्वाभाविक है। लेकिन में गुस्सा नहीं करूंगा, क्योंकि मेरी कोई श्रद्धा नहीं है। जिसकी श्रद्धा होती है, वह गुस्से में जा सकता है। कमजोरी है श्रद्धा की, और दुनिया में जितने श्रद्धालु हैं, बहुत जल्दी गुस्से में आ जाते हैं, मेरी कोई श्रद्धा नहीं है, इसलिए मुझे गुस्से में लाना बहु त मुश्किल है। और दुनिया में मैं ऐसे लोग चाहता हूं, जो जल्दी गुस्से में न आए, ऐ से लोगों से धार्मिक दुनिया निर्मित होगी। अभी तक तो जो कुछ इतिहास में हुआ है , धर्म के नाम से जो कुछ हुआ है, वह अधर्म हुआ है। धर्म के नाम से जो भी प्रचा

रत किया गया, वह सब झूठ है। बिलकुल असत्य है। और उस असत्य को जबर्दस्ती लादने की हजार-हजार चेष्टाएं की गई है।

लेकिन अगर कोई मनुष्य जिज्ञासा से प्रारंभ करे तो स्वाभाविक है कि वे सारे धार्मिक लोग, जिनका व्यवसाय, जिनका धंधा केवल श्रद्धा पर खड़ा है, परेशान और गुस्से में आ जाएंगे। इसलिए दुनिया में जब भी कोई धार्मिक आदमी पैदा होता है तो पुरोहित और ब्राह्मण और पंडित हमेशा उसके विरोध में खड़े हो जाते हैं। क्राइस्ट को जिन्होंने सूली दी वे पुरोहित, पंडित और धार्मिक लोग थे। सुकरात को जिन्होंने दिया जहर वे धार्मिक, पुरोहित, विचार शील लोग पंडित थे।

दुनिया में हमेशा पंडित धार्मिक आदमी के विरोध में रहा है। दुनिया में हमेशा पुरोहित धार्मिक आदमी के विरोध में रहा है। क्यों? क्योंकि धार्मिक आदमी सबसे पहले इस बात पर चेष्टा करेगा कि धर्म के नाम पर बना हुआ जो भी प्रचारित संगठन है, धर्म के नाम से जो भी धार्मिक संप्रदाय है, धर्म के नाम पर जो भी झूठे विश्वास, अंध श्रद्धाएं फैलायी गयी हैं, वे नष्ट कर दी जाए। अगर क्राइस्ट फिर से पैदा हों तो सबसे पहले जो उनके विरोध में खड़े होंगे, वह ईसाई पुरोहित और पादरी होंगे। अगर कृष्ण फिर से पैदा हों तो सबसे पहले उनके विरोध में जो खड़ा होंगे वे, वे ही लोग होगे जो गीता का प्रचार करते हैं और गीता को प्रचारित हुआ देखना चाहते हैं। अगर बुद्ध वापस लौटें तो बौद्ध भिक्षु उनके विरोध में खड़े जो जाएंगे। यह बिलकुल स्वाभाविक है, क्योंकि धर्म एक तरह का विद्रोह है।

धर्म सबसे बड़ा विद्रोह है, सबसे बड़ी क्रांति हैं, और वह क्रांति इस बात से शुरू होती है कि श्रद्धा नहीं, हम जिज्ञासा करें। सत्य पर विश्वास न लाए, क्योंकि अभी आपको सत्य पता ही हनीं है, जिस पर आप विश्वास लाएंगे। अभी तो दूसरे जो आपसे कहते हैं, उसी पर ही आप विश्वास कर लेंगे। उसके सत्य और असत्य होने का आपको कुछ भी पता नहीं है। ऐसा विश्वास अंधा होगा।

सब विश्वास अंधे होते हैं।

क्यों?

क्योंकि वे दूसरे आपको देते हैं। जो भी अभी आप मांगते है, वह किसी दूसरे ने आपको दिया है। आपको कुछ भी पता नहीं कि वह ठीक है या गलत है। सिवाय इसके कोई प्रमाण नहीं है कि हमारे मां बाप ने उसे दिया है। जो परंपरा से उपलब्ध होता है, वह कभी सत्य होने की संभावना रही है।

जो स्वयं की निज खोज से उपलब्ध होता है वही सत्य होता है और इसलिए सत्य प्रत्येक को स्वयं पाना होगा। दूसरे से उधार पाने का कोई भी उपाय नहीं है। फिर जितनी गहरी श्रद्धा होगी, उतना ही आपके भीतर विवेक का जागरण असंभव हो जाएगा। जितना तीव्र विश्वास होगा, उतना ही विवेक क्षण हो जाएगा, क्योंकि विश्वास विवेक विरोधी है। वह हमेशा कहता है मानो। वह यह कभी नहीं कहता, जानो। वह हमेशा कहता हैं स्वीकार करो। वह यह कभी नहीं कहता, खोजो। वह हमेशा यह कहता है कि इसको बांध लो मन में, इससे भिन्न न सोचना। इससे अन्य मत सो

चना, इसके विपरीत मत सोचना। जितनी श्रद्धा गहरी होगी, उड़ना उतना मुश्किल हो जाएगा।

मेरे पड़ोस में, गांव में एक आदमी रहता था। वह जंगल से तोतों को पकड़ कर लाता और उनको पिंजड़ों में बंद कर देता। कुछ दिन वे तड़फड़ते उड़ने की कोशिश करते, फिर वे पिंजड़े कि आदी हो जाते। यहां तक वे पिंजड़ों के आदी हो जाते कि अगर उनके पिंजड़े को खोल दिया जाए तो वे थोड़ी देर बाहर जाकर वापस अपने िपजड़े में आ जाते हैं। बाहर असुरक्षा लगती ओर भीतर सुरक्षा मालूम होती।

करीब-करीब ऐसी ही हमारे मन की हालत हो गयी है। हमारा चित्त, परंपरा, संस्कार, दूसरों के दिए गए विचार और शब्दों में इस भांति बंध गया है कि उसके बाहर हमें डर लगता है, घबड़ाहट होती है। डर लगता है कि कहीं सुरक्षा न खो जाए। कहीं जिस भूमि को हम अपने पैर के नीचे समझ रहे हैं वह हिल न जाए, इसलिए हम डरते हैं, इसलिए हम बाहर निकलने से घबड़ाते हैं। और जो अपने घरों के बाहर नहीं निकल सकेगा, वह परमात्मा को कभी नहीं पा सकेगा। उससे मिलना हो तो सब घेरे तोड़ ही देने होंगे। जिसे भी सत्य को पाना है, उसे सत्य के संबंध में सारे मत छोड़ देने होंगे। जिसे भी सत्य को पाना है, उसे पार विश्वास को छोड़कर विवेक को जाग्रत करना होगा। जिसका विवेक जाग्रत होगा, वही केवल सत्य को, वही केवल धर्म के मूलभूत सत्य को अनुभव कर पाता है। इसलिए मैं चाहता हूं, विश्वास छोड़ दें और विवेक को जाग्रत करें। घबड़ाहट क्या है? डर क्या है?

डर यह है, डर हम सब अपने भीतर जानते हैं कि जिस विश्वास को हमने पकड़ा है, अगर हमने विचार किया तो वह टिकेगा नहीं। यह हमारी अंतर्निहित प्रज्ञा हमें कहती है कि विश्वास ऊपर है। अगर हमने थोड़ा भी विचार किया तो वह हट जाएगा। और तब घबड़ाहट लगती है। हम कोई भी बिना विश्वास के नहीं होना चाहते हैं। क्योंकि तक हम अतल सागर में छोड़ दिए मालूम पड़ेंगे। तब हम पिंजड़े के बाहर अनंत आकाश में छोड़ दिए अनुभव होंगे। लेकिन जो इतना डरता है, वह स्मरण रखे, वह किसी संप्रदाय में हो सकता है, धर्म में नहीं हो सकता। वह स्मरण रखे, वह किसी परंपरा में हो सकता है, लेकिन परम प्रज्ञा की नहीं उपलब्ध हो सकेगा।

तो मैं आपको पहली बात कहूं—विश्वास से अपनी नाव को तोड़ लें और जिज्ञासा के अनंत सागर में उसे बहने दें। उसे जाने दें और घबड़ाए न। वह कहीं भी जाए, घबड़ाने की क्या बात है, डर की क्या बात है? और जो डरा है, वह किनारे से ही बंधा रह जाता है। नाव को छोड़ना ही होगा और हमारी सबकी नाव किसी न किसी भांति के विश्वास से बंधी है। अगर दुनिया में विश्वास नष्ट हो जाए तो धर्म का जन्म हो सकता है। अगर दुनिया में सब विश्वास राख हो जाए तो धर्म की अग्नि पैदा हो सकती है। ईश्वर करे कि दुनिया में कोई ईसाई न हो, हिंदू न हो, मुसलमान न हो, जैन न हो। ईश्वर करे कि यह हो जाए तो दुनिया में धर्म के होने की संभावना पैदा हो सकती है।

धार्मिक को पैदा होने नहीं दे रहे हैं, और धार्मिक धर्म के जन्म को रोके हुए हैं। ज
ब जिनमें साहस हो, उन्हें चाहिए कि वे धार्मिक के इस पाखंड को नष्ट कर दें और
धर्म के जन्म में सहयोगी बनें।धर्म का जन्म जिज्ञासा से होगा। धर्म का जन्म विवेक
और विचार से होगा। धर्म भी वस्तुतः एक विज्ञान है, साइंस है, परम विज्ञान है।
वह कोई विश्वास नहीं है कि आप मान लें वह भी जाना जा सकता है। वह भी अनु
भव किया जा सकता है।

कौन यह कहता है, जो क्राइस्ट को अनुभव हुआ है, वह आपको अनुभव नहीं होगा?
जो यह कहता है, वह दुश्मन है। कौन यह कहता है, जो बुद्ध को अनुभव हुआ है,
वह एक सड़क पर झाड़ू लगाने वाले को अनुभव नहीं होगा। जो यह कहता है, वह
मनुष्य का दुश्मन है। हर मनुष्य के भीतर वही परम परमात्मा हुआ है, तो वह अ
नुभव, जो क्राइस्ट को हुआ हो, बुद्ध को हुआ हो, रामकृष्ण को हुआ हो, वह हरेक
को हो सकता है, हरेक को होना चाहिए। रुकावट है, इसलिए कि हम दूसरों को स्व
ीकार किए हैं और अपने को जगा नहीं रहे हैं। दूसरों को हटा देख और अपने को
जगाए।

आपके भीतर जो बैठा है, उससे मूल्यवान और कोई भी नहीं है और आपके भीतर
जो बैठा है, उससे पूज्य और कोई नहीं है, और आपके भीतर जो बैठा है, उससे श्रेष
ठ और कोई भी नहीं है। लेकिन मुश्किल यह हो गयी है, हमें सिखा जाता है, अनुक
रण करो, फालो करो किसी को। कोई कहता है, क्राइस्ट को फालो करो, कोई कह
ता है महावीर को, कोई कहता है, बुद्ध से पीछे चलो। और मैं आपसे कहता हूं, जो
भी किसी के पीछे चलेगा, वह अपने भीतर बैठे परमात्मा का अपमान कर रहा है।

किसी के पीछे जाने का कारण क्या है? किसी के पीछे जाने का कारण नहीं है। अप
ने पीछे चलो और अपने परमात्मा को पहचान लो, जो तुम्हारे भीतर है। और जब
भी तुम किसी के चरणों में झुक रहे हो, किसी का पीछा कर रहे हो, तब तुम भीत
र बैठे परम शक्ति परमात्मा का इतना बड़ा अपमान कर रहे हो, जिसका कोई हिस
ाब नहीं है।

बुद्ध के जीवन में एक उल्लेख है। अपने पिछले जन्म में—उन्होंने पिछले जन्मों की क
थाएं कही हैं—जब वह बुद्ध हुए, उसके पहले जन्म में वे गांव में गए। वहां एक बुद्ध
पुरुष था, उसका नाम था दीपंकर। वे गए और उन्होंने दीपंकर के पैर छुए। जब वे
पैर छूकर उठे तो उन्होंने देखा कि दीपंकर उनके पैर छू रहा है। वे बहुत घबड़ा ग
ए। और उन्होंने कहा कि यह क्या कर रहे हैं? मैं एक अज्ञानी हूं, मैं एक सामान्य
जन हूं, मैं एक अंधकार से भरी हुई आत्मा हूं। मैंने आपके पैर छुए, एक प्रकाशित
पुरुष के, यह तो ठीक था। आपने मेरे पैर क्या क्यों छुए?

दीपंकर ने कहा, तुमने अपने भीतर बैठी हुई प्रज्ञा का अपमान किया है, उसे बताने
को। तुम मेरे पैर छू रहे हो यह सोचकर कि प्रकाश इनके पास है, और मैं तुम्हारे
पैर छू रहा हूं, यह घोषणा करके को कि प्रकाश सबके पास है। वह प्रत्येक के भीत

र जो बैठा हुआ है, उसे किसी के पीछे ले जाने की कोई भी जरूरत नहीं है। और जब हम उसे पीछे ले जाने लगते हैं तभी हम एक कांफिलक्ट में, एक अंत द्वंद्व में प. ड जाते हैं।

असलियत यह है, इस जमीन पर, प्रकृति में, इस परमात्मा के राज्य में, दो कंकड़ भी एक जैसे नहीं होते हैं। दो पत्ते भी एक जैसे नहीं होते हैं। सारी जमीन को खोज आए दो पत्ते, दो कंकड़ एक जैसे नहीं मिलेंगे। दो मनुष्य भी एक जैसे कैसे हो सक ते हैं? प्रत्येक व्यक्ति अद्वितीय है और इसलिए जब कोई व्यक्ति राम का अनुसरण करके राम बनने की कोशिश करता है, बुद्ध का अनुसरण करके बुद्ध बनने की कोशिश करता है, तभी भूल हो जाती है। इस जगत में परमात्मा ने प्रत्येक को अद्विती य बनाया है। कोई किसी का अनुकरण करके कुछ भी नहीं बन सकेगा। एक थोथा पाखंड और एक अभिनय भर होकर रह जाएगा। क्या इस बात के संबंध में इतिहास प्रमाण नहीं है?

बुद्ध को मरे पच्चीस सौ वर्ष हुए क्राइस्ट को मरे दो हजार वर्ष होते है। इन दो हजा र वर्ष में कितने लोगों ने बुद्ध के पीछे चलने की कोशिश की है और कितने लोगों ने क्राइस्ट के, क्या कोई दूसरा क्राइस्ट या दूसरा बुद्ध पैदा होता है? क्या यह दो ह जार वर्ष, ढाई हजार वर्ष का असफल प्रयास इस बात की सूचना नहीं है कि यह क ोशिश ही गलत है? असल में कोई मनुष्य किसी दूसरे मनुष्य जैसा नहीं हो सकता। जब भी मनुष्य किसी दूसरे जैसा होने की कोशिश करता है तभी वह अंत द्वंद्व में, ए क कांफिलक्ट में, एक परेशानी में पड़ जाती है। जो वह है उसे तो भूल जाता है अ ौर जो होना चाहता है, उसकी कोशिश पैदा कर लेता है। इस भांति उसके भीतर ए क बेचैनी, एक अशांति और एक संघर्ष पैदा हो जाता है।

परमात्मा को तो केवल वे ही पा सकते हैं जो शांत हो। जो अशांत है, वे कैसे पा सकेंगे? जो व्यक्ति भी किसी दूसरे की नकल में कुछ होना चाह रहा है। वह अनिवा र्यतया अशांत हो जाएगा। उसकी अशांति उसे परमात्मा के पास नहीं पहुंचा सकेगी। अगर जूही के फूल गुलाब होना चाहें और गुलाब के फूल कमल होना चाहें, तो जै सी बेचैनी और परेशानी में पड़ जाएंगे वैसी बेचैनी और परेशानी में हम पड़ जाते हैं , जब हम किसी का अनुकरण करते हैं।

इसलिए दूसरी बात आपसे मैं कहना चाहता हूं, अनुकरण नहीं, आत्मखोज—अनुकरण नहीं आत्मखोज। मैंने पहली बात आपसे कही, श्रद्धा नहीं, जिज्ञासा। दूसरी बात क हना चाहता हूं, अनुकरण नहीं, आत्मखोज। किसी का अनुकरण नहीं करना है। कोई किसी के लिए आदर्श नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति का आदर्श उसके अपने भीतर छिपा है, जो उघाड़ना है, और अगर हम उसे नहीं उघाड़ते और किसी के पीछे जाते हैं त ो हम भूल में पड़ जाएगा, हम भटकन में पड़ जाएंगे। और मैं आपको कहूं कि आप लाख उपाय करें क्राइस्ट या बुद्ध या कृष्ण के पीछे जाने का, आप कभी कृष्ण, बुद्ध या क्राइस्ट नहीं हो सकेंगे। लेकिन जो मैं आपसे कह रहा हूं,अगर आप यह उपाय छोड़ दें और अपने को खोजें और अपने को जगाए तो कृष्ण क्राइस्ट और बुद्ध हो ज

ाएंगे। अपनी निज हैसियत में, अपने ही निज व्यक्तित्व में आत्म उपलब्धि करता है, वह अपने भीतर जाने वाला उपलब्ध कर लेगा। दूसरी बात है, अनुकरण नहीं। अनुकरण नहीं का अर्थ हुआ, किसी मनुष्य के लिए कोई दूसरा मनुष्य आदर्श है। हो भी नहीं सकता। लेकिन हमें समझाया गया है और हमें बताया गया है कि कोई न कोई आदर्श बनाओ। और जब भी हमसे यह कहा जाता है कि कोई न कोई आदर्श बनाओ तभी हम क्या करेंगे? हम किसी मनुष्य को आदर्श बना लेंगे, और तब हम उसके भांति होने की कोशिश में लग जाएंगे। कोशिश झूठी होगी, इसलिए झूठी होगी कि केवल अभिनय होगा।

मैं एक गांव गया। मेरे एक मित्र वहां साधु हो गए थे। उन्हें मिलने गया। एक पहाड़ी के किनारे एक छोटे झोपड़े में वे रहते थे। मैं उनसे मिलने गया। उनको कोई खबर नहीं किया और गया। मैंने खिड़की से देखा, वे अपने कमरे में नंगे होकर टहल रहे हैं। कपड़े उतार दिए हैं, मैंने जाकर दरवाजा खटखटाया। उन्होंने जल्दी से दरवाजा खोला और चादर लपेटकर दरवाजा खोल दिया। मैंने उनसे पूछा, अभी आप नग्न थे, फिर यह चादर क्यों पहन ली? वे मुझसे बोले, मैं धीरे-धीरे, नग्न साधु होने का अभ्यास कर रहा हूं। अभी मुझे भय मालूम होता है, इसलिए अकेले में नग्न होने का अभ्यास करता हूं। फिर धीरे-धीरे मित्रों कि सामने करूंगा, फिर गांव में, फिर धीरे-धीरे मैं अभ्यस्त हो जाऊंगा। मैंने उनसे कहा, किसी सर्कस में भर्ती हो जाए, क्योंकि नग्न होने का अभ्यास करके जो आदमी नंगा हो जाएगा, वह सर्कस के लायक है, संन्यास के लायक नहीं है। वह महावीर को अपना आदर्श बनाए हुए थे और उनको खयाल था कि महावीर नग्न होगे, इसलिए मैं भी नग्न हो जाऊं। मैंने उनको कहा; पता है, महावीर नग्न अभ्यास करके नहीं हुए थे। महावीर की नग्नता सहज थी। एक वक्त, एक प्रतीति, एक संभावना उनके भीतर उदित हुई। उन्हीं वस्त्र अनावश्यक हो गए। उन्हें याद भी न रहा कि वस्त्र पहनें। वे उस सरलता को, उस निर्दोषिता को उपलब्ध हुए, जहां ढांकने का उन्हें कोई खयाल ही न रहा। वस्त्र छूट गए। यह तो मेरी समझ में नहीं आता है कि एक आदमी नग्न होने का अभ्यास करके नग्न हो जाए, उसकी नग्नता बहुत दूसरी होगी। यह अभिनय और पाखंड होगा। किसी आदमी भीतर प्रेम का स्फुरण हो और वह सारी दुनिया के प्रति प्रेम से भर जाए और अहिंसा से भर जाए तो समझ में आता है। लेकिन एक आदमी चेष्टा करे, प्रयास करे, अभ्यास करें अहिंसक होने का, यह समझ में नहीं आता। हमारी जितनी चेष्टाएं दूसरों को देखकर होंगी, वे हमें गलत ले जाएंगी और हमारे जीवन को व्यर्थ कर देंगी। इसी वजह से सामान्य जन भी उतना असंतुष्ट और अशांत नहीं होता, जितना तथाकथित साधु और संन्यासी होते हैं। वे सारे पागलपन में लगे हुए हैं। एक न्यूरोसिस उनको पकड़े हुए है, किसी दूसरे आदमी जैसा होना है। यह पागलपन है, यह विक्षिप्तता है। किसी दूसरे जैसे होने की कोशिश बिलकुल पागलपन है। क्योंकि यह सारी चेष्टा का परिणाम होगा आत्म दमन, इसका अर्थ होगा रिप्रेशन, जो तुम हो उसे दबाओ और जो तुम नहीं हो, उसको होने की कोशिश करो। ऐसा व्यक्ति अपने हा

थ से नर्क में पहुंच जाता है। चौबीस घंटे नर्क में जीने लगता है, जो वह है उसकी ि नदा करता है, और जो उसे होना है, उसकी चेष्टा करता है।
मैं आपसे कहना चाहूंगा, जो आप हैं, उसे परिपूर्णतया जानें और आपके जीवन में क्र ांति हो जाएगी। आपको कोई और होने की कोई भी जरूरत नहीं है। जो आप वस्तु तः हैं, उसे ही जान लें और क्रांति हो जाएगी, और जो आप उपाय करके नहीं पास सकेंगे वह अपने ही भीतर जागकर आपको उपलब्ध हो जाएगा। इसलिए मैंने कहा, अनुकरण नहीं, आत्मखोज।
और तीसरी बात मैं आपसे कहना चाहता हूं, क्योंकि हमारी सारी चेतना कुछ ऐसी भ्रांत और गलत बातों से भर गयी है, जिसे खाली करना बहुत जरूरी है। वह मैं अ ापसे यह कहना चाहता हूं कि मनुष्य जितना ज्यादा अपने को संवेदनशील बनाए, जि तना ज्यादा अपने भीतर संवेदन को पैदा करे, उतना ज्यादा सत्य के करीब पहुंचेगा। इसलिए सत्य की खोज नहीं संवेदना की उत्पत्ति। इसे समझ लें।
अगर एक अंधा आदमी मुझसे आकर कहे कि मुझे प्रकाश को जानना है तो क्या मैं उसे सलाह दूंगा कि तुम जाओ और प्रकाश के संबंध में लोगों से समझो। वह तुम्हें जो बताए, उसे याद कर लो तो प्रकाश का पता हो जाएगा? मैं उससे कहूंगा, प्रका श के संबंध में मत जानने की फिकर करो, आंख ठीक हो जाए, आंख का उपचार हो जो, इसकी चिंता करो। अगर आंख का उपचार हो जाए तो प्रकाश का अनुभव होगा। लेकिन अगर आंख का उपचार न हो तो प्रकाश के संबंध में कुछ भी जान ले ने से कोई अनुभव नहीं होता है। आंख संवेदना है, प्रकाश सत्य है। सत्य के खोजी को भी मैं कहता हूं, ईश्वर के खोजी की भी मैं कहता हूं कि ईश्वर की फिकर छोड़ दो, संवेदना की फिकर करो। हमारी जितनी गहरी संवेदना होगी उतनी ही दूर त क सत्य के हमें दर्शन होते हैं।
मैं आपको देख रहा हूं। मेरी देखने की शक्ति आपके शरीर के पार नहीं जाती, इसि लए मैं आपके शरीर को देखकर वापस लौट आता हूं। अपने को देखता हूं, तो अपने को भी देखने में, शक्ति मेरी, मन के पार नहीं जाती, तो मन को देखकर वापस लौट जाऊंगा। मेरे देखने की शक्ति जितनी गहरी होगी उतना गहरा सत्य का मुझे अनुभव होगा। जो लोग परमात्मा को अनुभव करते हैं, उनके देखने की शक्ति इतन ी तीव्र है कि प्रकृति को पार कर जाते हैं और परमात्मा को देख लेते हैं। प्रकृति से अलग कहीं परमात्मा नहीं बैठा हुआ है। जो चारों तरफ दिखाई पड़ रहा है, इसमें ही वह छिपा है। अगर हमारी आंख गहरी हो तो हम आवरण को पार कर जाएंगे और केंद्र को अनुभव कर लेंगे। इसलिए सवाल ईश्वर की खोज का नहीं, सवाल अप नी संवेदना को गहरा करने का है। हम जितना गहरा-गहरा अनुभव कर सकें, उतने गहरे सत्य हमें प्रकट होने लगेंगे। लेकिन हमें सिखाई कुछ और बातें गयी हैं।
हमें सिखाया जाता है, ईश्वर को खोजो। तब पागल कुछ हिमालय पर ईश्वर को खो जने जाते हैं, जैसे कहां ईश्वर नहीं है। तब कोई एकांत वन में ईश्वर को खोजने जा ता है, जैसे भीड़ में ईश्वर नहीं है। तब कोई भटकता है, दूर-दूर, तीर्थों कि यात्राएं

करता है कि वहां ईश्वर मिलेगा। जैसे इन जगहों में जहां तीर्थ नहीं है, वहां ईश्वर नहीं है। ईश्वर उसे मिलता है, जिसकी संवेदना गहरी हो। न हिमालय पर जाने से मिलता है, न तीर्थों में जाने से मिलता है, न वनों में जाने से मिलता है। संवेदना गहरी हो तो ईश्वर यहीं, इसी क्षण उपलब्ध है। जिसे देखने की शक्ति हो उसे यहां प्रकाश है और जिसकी आंख न हो ठीक उसे यहां प्रकाश नहीं है। इसलिए महत्वपूर्ण ईश्वर की खोज नहीं, संवेदना की खोज है। और हम बहुत कम संवेदनशील हैं—हम बहुत ही कम संवेदनशील है।

हमें कुछ अनुभव ही नहीं होता। हम करीब-करीब मूर्छित होते हैं। रात को अगर चांद निकलता हो, बहुत कम लोग हैं, जो अनुभव करते हों, उसके सौंदर्य को। अगर रास्ते के किनारे फूल खिले हों, बहुत कम लोग हैं जो अनुभव करते हों उन फूलों के भीतर छिपे हुए रहस्य को। चारों तरफ प्रकृति का जो मिरेकल, जो चमत्कार घटित हो रहा है, बहुत कम लोग हैं, जो उसे देख सकते हैं। हम अपने में सोए हुए हैं। हम करीब-करीब सोए हुए लोग हैं।

मैं एक मित्र को लेकर, एक पहाड़ी पर गया हुआ था। पूर्णिमा की रात थी, हमने नदी में देर तक नाव पर यात्रा की। वे मेरे मित्र स्विटजरलैंड होकर लौटे थे। जब तक हम उस छोटी सी नदी में, उस छोटी सी नौका पर थे, तब तक वे स्विटजरलैंड की बातें करते रहे, वहां की झीलों की, वहां के चांद की, वहां के सौंदर्य की। कोई घंटे भर बाद हम वापस लौटे तो बोले, बहुत अच्छी जगह थी जहां आप मुझे ले गए। मैंने उनसे कहा, क्षमा करें, आप वहां पहुंचे नहीं। मैं तो आपको ले गया, आप वहां नहीं पहुंचे। मैं तो वहां था, आप वहां नहीं थे। वे बोले, मतलब? मैंने कहा, आप स्विटजरलैंड में रहे। और मैं आपको यह भी कह दूं, जब आप स्विटजरलैंड में रहे होंगे, तब आप वहां भी नहीं रहे होंगे, क्योंकि मैं आपको पहचान गया, आपकी वृत्त को पहचान गया। तब आप कहीं और रहे होंगे।

हम करीब-करीब सोए हुए हैं। जो हमारे सामने होता है, वह हमें दिखायी नहीं पड़ता है। जो हम सुन रहे हैं, वह हमें सुनायी नहीं पड़ता। मन किन्हीं और चीजों से भरा रहता है। वही व्यक्ति संवेदनशील हो सकता है, जिसका मन शून्य हो। चांद के करीब जिसका मन बिलकुल शून्य है वह चांद के सौंदर्य को अनुभव कर लेगा। फूल के करीब जिसका मन बिलकुल शून्य हैं वह फूल के सौंदर्य को अनुभव कर लेगा। अगर मैं आपके पास हूं और मैं बिलकुल शून्य हूं, तो मैं आपके भीतर जो भी है उसे अनुभव करूंगा। अगर कोई व्यक्ति परम शून्य को उपलब्ध हो गया है, तो इस जगत के भीतर जो भी छिपा है, उसमें उसकी गति और प्रवेश हो जाएगा।

जो अपने भीतर भरे हुए हैं, वे बिलकुल बोथेल होते हैं, उनकी कोई संवेदना, सेंसिटिविटी उनमें नहीं होती। और जो अपने में खाली होते हैं, उनके भीतर अदभुत संवेदना का जन्म होता है।

इस जगत में सब तरफ परमात्मा छिप हुआ है, हमारे भीतर संवेदना चाहिए। लेकिन हम तो पागल हैं, हम तो अपने भीतर बहुत भरे हुए हैं। जो थोड़ी बहुत खाली

जगह है उसे गीता, कुरान और बाइबिल से भर देते हैं। दुकान से भरे हुए हैं, बाजा र से भरे हुए हैं, काम धंधे हैं, जिंदगी की बातों से भरे हुए हैं। कुछ थोड़ी बहुत खा ली जगह है तो गीता, कुरान कुरान और बाइबिल से भर लेते हैं। भीतर सब भर जाता है। भीतर कचरा ही कचरा इकट्ठा हो गया है।

अपनी खोपड़ी के भीतर देखें, कभी थोड़ी देर बैठकर दें, वहां क्या चल रहा है? तो वहां आप पाएंगे, वहां सब फिजूल की बातें भरी हुई हैं। वहां प्रवेश के लिए बिलकु ल जगह नहीं है। वहां कोई संवेदना गति नहीं पा सकती, वहां कोई द्वार नहीं है। ऐ सा बंद मस्तिष्क, ऐसी क्षुद्र बातों के बोझ से भरा मस्तिष्क कैसे सत्य को, कैसे सौंद र्य को अनुभव कर सकेगा। और फिर इसी मस्तिष्क को लेकर हम भगवान की खोज में निकल जाते हैं, गुरुओं के चरणों में जाते हैं, मंदिरों और मस्जिदों मग जाते हैं। यह दिमाग लेकर जाने से कहीं भी कुछ न होगा। इसे खाली कर लें, फिर कहीं भी जाने की जरूरत नहीं है। हम जहां होंगे, वहीं अनुभूति आनी शुरू हो जाएगी।

सत्य की खोज नहीं, संवेदना।

परमात्मा की खोज नहीं, संवेदना का उदघाटन और संवेदना का उदघाटन होता है, मनुष्य जब शून्य हो। इस शून्य को ही मैं समाधि कहता हूं। इस शून्य को ही मैं ध्या न कहता हूं। इस शून्य को ही मैं प्रार्थना कहता हूं। आपकी प्रार्थनाओं को मैं प्रार्थना नहीं कहता वह तो भरे हुए मस्तिष्क के ही लक्षण हैं। उसमें भी आप कुछ बोले जा रहे हैं, कुछ कहे जा रहे हैं, कुछ रटा हुआ दोहराए जा रहे हैं। यह प्रार्थनाएं नहीं हैं। आपके भोजन कीर्तन प्रार्थनाएं नहीं हैं। यह तो सब भरे हुए मस्तिष्क के लक्षण है। आप बोले जा रहे हैं, परमात्मा को बोलने का तो मौका नहीं दे रहे हैं। आप अ पना उंडेले जा रहे हैं, परमात्मा अपने को डाल सके, इसके लिए तो आप खाली नह ीं हैं।

स्मरण रखें, जब वर्षा होती है तो उठे हुए हैं, टीले हैं, उन पर पानी नीचे बह जात ा है, और जो गड्ढे हैं, वे भर जाते हैं। परमात्मा की वर्षा प्रति क्षण हो रही है। जो खाली होंगे, वह भर दिए जाएंगे, जो भरे होंगे, वह खाली रह जाएंगे। और पंडित से भरा हुआ आदमी दूसरा नहीं होता। उसका मस्तिष्क तो भरा हुआ आदमी दूसरा नहीं होता। उसका मस्तिष्क तो भरा हुआ होता है। अपने मस्तिष्क को खाली करना सीखें। और यह सरल है, यह कठिन नहीं है। थोड़े साहस थोड़े विवेक की जरूरत है। यह संभव है कि आपको मस्तिष्क खाली हो जाए।

शून्यता जागरूकता के परिणाम में उपलब्ध होती है।

जो व्यक्ति जितना जागरूक होकर जीवन में जीता है, वह उतना शून्य होता जाता है। समझ लें, मैं यहां सौ फीट लंबी और एक फीट चौड़ी लकड़ी की एक पट्टी रख दूं और आपसे कहूं कि उस पर चलें, तो आप गिरेंगे, कि पार निकल जाएंगे। सभी पार निकल जाएंगे। छोटे बच्चे, स्त्रियां, बूढ़े, सभी पार निकल जाएंगे। सौ फीट लंबी , एक फीट चौड़ी लकड़ी की पट्टी रखी हुई है। आपसे मैं कहूं, चलें, और आप सभी निकल जाएंगे कोई भी गिरेगा नहीं। फिर समझ लें कि इस ऊपर के स्थान से दीवा

ल तक अगर सौ फीट लंबी पट्टी रख दी गयी हो और नीचे गड्ढा हो, और फिर आ पसे कहा जाए, इस पर चलें, आप में से कितने लोग चल पाएंगे? फर्क तो कुछ भी नहीं हुआ है वह पट्टी सौ फीट लंबी, एक फीट चौड़ी अब भी है, जितनी जमीन प र रखे समय पर थी, उतनी अब दो मकानों के ऊपर रखे हुए भी है। फिर आपको जाने में डर क्या है? घबराहट क्या है? कितने लोग उसको पार हो पाएंगे? कितने लोग पार जाने की हिम्मत करेंगे? कठिनाई क्या आ गयी? उसकी लंबाई चौड़ाई व ही की वही है, आप वही के वही आदमी हैं। इस नीचे गड्ढे से फर्क क्या पड़ रहा है ? फर्क यह पड़ रहा है कि जब नीचे पट्टी रखी थी, आपको मूर्छित चलना संभव था , कठिनाई नहीं थी। आप अपने दिमाग में कुछ भी सोचते हुए चल सकते थे। अब ऊपर आपको परिपूर्ण जागरूक होकर चलना होगा। अगर जरा भीतर दिमाग में कुछ गड़बड़ हुई बातें चली, आप नीचे हो जाएंगे।

घबराहट है आपकी मूर्च्छा। जो जागरूक है वह ऊपर भी चल जाएगा, कोई फर्क नह ीं पड़ता। जमीन जैसे नीचे थी वैसे ऊपर भी है। कौन सा फर्क नहीं पड़ रहा है। जा गरूक अपने शरीर अपने मन, अपने विचार सबके प्रति जागा हुआ होता है, मूर्छित सोया हुआ होता है। तो नीचे तो चल जाते हैं आप, क्योंकि वहां कोई मूर्च्छा के तो. डने की जरूरत नहीं है, ऊपर चलने में घबड़ाते है।

मुझसे लोग कहते हैं कि जागरूक कैसे हों? तो मेरे गांव के पास एक छोटी सी पहा. डी है, वहां एक बड़े नीचे खंदक है और एक छोटी सी पट्टी है,जिस पर चलने में प्रा ण कंपते हैं। मैं उन्हें वहां ले जाता हूं और उनसे कहता हूं, इस पर चलें। आप को पता चल जाएगा कि जागरूकता क्या है? उस पर दो कदम चलते हैं और कहते हैं कि निश्चित ही, इसके भीतर जाते ही एकदम चित्त शून्य हो जाता है, हम एकदम जाग जाते हैं। जैसे किसी पहाड़ की कगार पर चलते वक्त आप बिलकुल होश से च लते हैं, ठीक वैसे ही चौबीस घंटे जो आदमी होश को संभालता है, वह क्रमशः शून्य हो जाता है।

राइट माइंड फुलनेस का मतलब है, सम्यक जागरण, होश। बोधपूर्वक जीने का अर्थ यह है, जो भी आप करते हों, उठते हों, बैठते हों, सोते हों, भोजन करते हों, काम करते हों, सड़क पर चलते हों, होशपूर्वक करें—उठना, बैठना, चलना, शरीर की, मन की सारी गतियां होशपूर्वक हों। आपको दिखाई पड़ता रहे कि मैं क्या कर रहा हूं? भीतर मूर्च्छा को तोड़ें। चौबीस घंटे ऐसे जिए जैसे कि बहुत डेंजर में है, और डें जर है, खतरा है। मौत चौबीस घंटे घेरे हुए हैं। यह छोटा सा गड्ढा तो कोई खतरा नहीं है। एक पहाड़ के किनारे पर चलने में खतरा क्या है? मौत का ही खतरा है न ? गिर गए तो मर जाएंगे। और अभी आप सोच रहे हैं कि जिस किनारे पर आप खड़े हैं, उसके नीचे मौत नहीं है? चौबीस घंटे हर आदमी मौत के किनारे पर खड़ा हुआ है।

जो होश में नहीं है, वह पागल है, नासमझ है।

चौबीस घंटे पहाड़ की कगार पर आप चल रहे हैं और किसी भी क्षण गिर जाएंगे। रोज लोगों को गिरते देख रहे हैं, रोज लोग गिरते जाते हैं, आप भी गिर जाएंगे। ि जदगी पूरे वक्त मौत के किनारे पर है—एकदम डेंजर चारों तरफ है, खतरा चारों त रफ है।जो सजग नहीं है वह गलती कर रहा है, वह भूल कर रहा है। चौबीस घंटे की समस्त क्रियाएं, चाहे शरीर की, चाहे मन की, सजग होनी चाहिए। जो व्यक्ति ि जतना सजग हो जाएगा भीतर, उतना ही पाएगा, भीतर शून्य आ जाएगा। और ज ब शून्य आ जाता है तो आप परमात्मा को अपने भीतर आमंत्रित करने में समर्थ हो जाते हैं। आपका द्वार खुल गया। अब सूर्य की रोशनी भीतर आ सकती है। आपकी आंख खुल गयी, अब आप प्रकाश को देख सकते हैं। अब आपके हृदय के कपाट खु ल गए और परमात्मा प्रवेश कर सकता है।

जो खाली है, वह परमात्मा से भर जाता है। खाली हों और परमात्मा को उपलब्ध हो जाएंगे। और जब आप परमात्मा को उपलब्ध होंगे तो बदल जाएगा।

मैंने आपसे कहा, श्रद्धा नहीं, जिज्ञासा। और जब आप परमात्मा को उपलब्ध होंगे त ो जिज्ञासा श्रद्धा में परिणत हो जाएगी। तब आप जानेंगे, और जानना आपको विश्व ास से भर देगा। यह विश्वास बहुत दूसरा है। वह दूसरों को दिया हुआ विश्वास नहीं है, वह स्वयं के ज्ञान से उत्पन्न हुआ है। और मैंने कहा, ईश्वर की खोज नहीं, संवे दना। जब आपकी संवेदना परि पूर्ण होगी तो आप ईश्वर को पा जाएंगे। और मैंने कहा, अनुकरण नहीं, आत्म खोज, और जब आप स्वयं को जानेंगे तो आप पाएंगे, आप सबके अनुकरण का उपलब्ध हो गए। क्राइस्ट और बुद्ध और महावीर सबके आ दर्श को आप उपलब्ध हो गए।

मैंने आपसे कहा, श्रद्धा नहीं जिज्ञासा, इसलिए थक आप वास्तविक श्रद्धा को उपलब ध हो सकें। मैंने आपसे कहा, अनुकरण नहीं, आदर्श नहीं, आत्मखोज, ताकि आप व ास्तविक आदर्श की उपलब्ध हो सकें। और मैंने आपसे कहा, ईश्वर नहीं, संवेदना की तलाश, ताकि आम वस्तुतः ईश्वर को तलाश कर सकें। यह बातें उल्टी मालूम हो सकती हैं, क्योंकि मैं श्रद्धा छोड़ने को कह रहा हूं, ताकि श्रद्धा का, वास्तविक श्रद्धा का जन्म हो सके। और मैं ईश्वर को भूलने को कह रहा हूं और संवेदना पैदा कर ने को, ताकि ईश्वर पाया जा सके। और मैं सब आदर्श छोड़ने को कह रहा हूं ताकि वास्तविक आदर्श का आपके भीतर जन्म हो सके।

अगर आप मेरी बात को समझेंगे, तो उनमें विरोध नहीं दिखायी पड़ेगा। क्यों? क्यों कि जो खाली है वह भर दिया जाता है, इसमें विरोध कहां है? खाली ही भरा जा सकता है। जो शून्य है, वही केवल पूर्ण को उपलब्ध हो सकता है। इसलिए समग्र भा व से, अशेष भाव से शून्य हो जाना साधना है। अशेष भाव से शून्य हो जाना समर्पण है। अशेष भाव से शून्य हो जाना परमात्मा के मार्ग पर अपने चरणों को बढ़ा देना है। जो शून्य होने का साहस करता है, वह पूर्ण को पाने का अधिकारी हो जाता है। और प्रत्येक व्यक्ति के भीतर वह संभावना है, वह बीज है कि वह परमात्मा हो स के। अगर हम उपलब्ध नहीं हुए तो हमारे सिवाय और किसी का उत्तरदायित्व नहीं

होगा। अगर हम उपलब्ध नहीं हुए तो हमारे सिवाय और कोई जिम्मेवार नहीं होगा। अगर हम उपलब्ध नहीं हुए तो हमारे सिवाय और किसी का भी दोष नहीं है।
इसलिए स्मरणपूर्वक इस बात को सोचें और देखें। स्मरण पूर्वक अपनी संभावनाओं क ो समझें, स्मरणपूर्वक अपने जीवन को परिवर्तित करें, स्मरणपूर्वक सजग हों और शून् य हो जाए। और यह खयाल रखें कि कोई परमात्मा को उपलब्ध होता है तो कोई विशेषता नहीं है। हरेक मनुष्य को उतनी ही संभावना है। लेकिन अगर हम ध्यान ही नहीं देंगे, अगर हम उस तरफ देखेंगे ही नहीं तो हम अपनी संभावना से वंचित हो जाएंगे। अगर एक बीच वृक्ष हो सकता है तो सारे बीच वृक्ष हो सकते हैं। व्यवस्था जुटानी होगी कि बीज वृक्ष हो सके। पानी और खाद और जमीन और रोशनी जुटा नी होगी।
क्या है पानी, क्या है खाद, क्या है रोशनी, उसकी मैंने चर्चा की। जिज्ञासा, अनुकर ण नहीं आत्मखोज, ईश्वर नहीं, संवेदना की तलाश, और अपने को भरना नहीं अप ने को खाली कर लेना। यह भूमिका है। जो इसे पूरा करता है, आश्वासन है, सदा से आश्वासना है। वह परमात्मा को निश्चित ही उपलब्ध हो जाता है।
और अगर आप परमात्मा को उपलब्ध न हों तो अपने कर्मों को दोष मत देना, सम झना कि कुछ गलत कर रहे थे। समझना कि जहां जिज्ञासा करनी थी, वहां श्रद्धा कर रहे थे। समझना कि जहां स्वयं को खोजना था वहां अनुकरण कर रहे थे। समझ ना कि जहां संवेदना गहरी करनी थी, वहां ईश्वर की तलाश में भटक रहे थे। समझ ना कि जहां शून्य होना था वहां दूसरों के उधार विचारों और ग्रंथों से अपने को भर रहे थे। कर्मों का दोष नहीं है, दृष्टि का दोष है। और दृष्टि के दोष को छिपाने के लिए, सारी हम बातें कर लेते हैं कि हमारे कर्म ही बुरे हैं, हमारे पिछले जन्म ही बुरे हैं, इसलिए हम नहीं पा रहे हैं। यह सबका सब अपने को समझाना है। यह सब एक्सप्लेनेशंस हैं, जो कि झूठे हैं। मैं आपको कहता हूं, ठीक दृष्टि हो तो परमात्मा इसी वक्त उपलब्ध है। परमात्मा को तो कभी किसी ने खोया ही नहीं। हम उसमें ह ी खड़े हुए हैं।केवल दृष्टि जगत है, केवल दृष्टि और जगह भटक रही है। इसलिए उ से, जो कि पाया ही हुआ है, हम खोया हुआ अनुभव कर रहे हैं। दृष्टि वापस लौट आए, अपने उस किले पर जो सबके भीतर है, परमात्मा यहीं और अभी उपलब्ध हो जाता है।
ईश्वर करे, दृष्टि लौटे। ईश्वर करे आपकी श्रद्धा जिज्ञासा बने। ईश्वर करे, आप अन्वेषण में लेंगे, आपके भीतर प्यास और अभीप्सा पैदा हो और किसी दिन आप उस परम शांति को, परम सौंदर्य को जान सकते हैं, जिसे जाने बिना जीवन झूठा है, जि से जाने बिना जीवन मृत्यु है और जिसे जानकर जीवन ही नहीं, मृत्यु भी अमृत हो जाती है, उनकी कामना करता हूं।
मेरी बातों को इतने प्रेम से सुना, उसके लिए बहुत अनुगृहीत हूं। मेरी कोई बात बु री लगी हो, फिर क्षमा याचना करता हूं, लेकिन कहूंगा, उसे सोचना, क्रोध मत कर ना, क्योंकि क्रोस से कोई हल नहीं होता। मेरी कोई बात बुरी लगी हो, उसे सोचना

, क्रोध मत करना। क्रोध से हल नहीं होता और क्रोध विचार का नहीं अविचार का लक्षण है। मेरी बात कोई ठीक लगी हो तो उसे मान मत लेना, प्रयोग करना, क्यों कि मान लेना छोटी बुद्धि का लक्षण है, प्रयोग करना समझदार का, विवेकशील का लक्षण है। मेरी बात बुरी लगी हो तो विचार करना, मेरी बात भली लगी हो तो म ान मत लेना, उस पर प्रयोग करना। जो प्रयोग करता है, वह उपलब्ध होता है। अंततः सबके भीतर बैठे हुए परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।
कावसजी जहांगीर हाल, बंबई, दिनांक 14 नवंबर 1965
मौन द्वार
मेरे प्रिय आत्मन,
मैं सोचता था, किस संबंध में आपसे बात करूं, यह स्मरण आया कि आपके संबंध में ही थोड़ी सी बातें कर लेना उपयोग का होगा। परमात्मा के संबंध में बहुत सी ब ातें हमने सुनी और आत्मा के संबंध में भी बहुत विचार जाने हैं, लेकिन उनका को ई भी मूल्य नहीं है। अगर हम उस स्थिति को न समझ पाए जिसमें कि हम मौजूद होते हैं।
आज जैसी मनुष्य की दशा है, जैसी जड़ता और जैसा मरा हुआ मनुष्य हो गया है, ऐसे मनुष्य का कोई संबंध परमात्मा या आत्मा से नहीं हो सकता है। परमात्मा से संबंध की पहली शर्त है, प्राथमिक सीढ़ी है कि हम अपने भीतर से सारी जड़ता को दूर कर दें और जो-जो तत्व हमें जड़ बनाते हो उनसे मुक्त हो जाएं और जो-जो अ नुभूतियां हमें ज्यादा चैतन्य बनाती हों, उसके करीब पहुंच जाए। हम यह सुनते हैं ि क मनुष्य के भीतर आत्मा है। लेकिन जैसे हम मनुष्य है, अगर हम विचार करें तो हमारे भीतर शायद मुश्किल से एक प्रतिशत आत्मा होगी और निन्यानबे प्रतिशत श रीर। जब तक आत्मा सौ प्रतिशत न हो जाए, तब तक कोई व्यक्ति सत्य को अनु भव नहीं कर सकता।
शरीर से मेरा अर्थ आपका जो दिखायी पड़ रहा है, उतरना ही नहीं है, बल्कि जिन -जिन बातों में आपकी चेतना जड़ हो जाती है, वहीं-वहीं आप शरीर हो जाते हैं। ह में भी सिखाया जाता है और जैसा हमारा जीवन है, वह धीरे धीरे मनुष्य कम और मशीन ज्यादा बना देता है। हम क्रमशः मशीन होते जाते है, और जो आदमी जित नी अच्छी मशीन हो जाता है, उतना ही दुनिया में सफल और कुशल समझा जाता है। असल में जो आदमी जितना भर जाता है उतना ही यह जगत उसे सफल मानत ा है।
इसलिए पहली बात आपसे कहना चाहूंगा कि अपने भीतर वह अनुभव करें कि आप कहीं मशीन तो नहीं हो गए हैं। एक आदमी चौबीस वर्ष तक रोज सुबह उठकर अ पने दफ्तर जाता है, ठीक वक्त पर खाना खा लेता है। ठीक बातें, जो उसने याद क र ली हैं बोल देता है, ठीक समय पर सो जाता है। सुबह से लेकर दूसरे दिन की सु बह तक, उसकी क्रियाओं में सारा का सारा यांत्रिक है। धीरे-धीरे वह आदमी जड़ ह ो जाता है। उसके भीतर चैतन्य का सारा आविर्भाव बंद हो जाता है। और जो आद

मी इस जड़ता के जितनी तीव्रता से पकड़ लेता है, हम कहते हैं, वह आदमी उतना कुशल है, उसकी उतनी ज्यादा मनुष्य से योग्य होती है, क्योंकि मशीन कोई भूल चूक नहीं करती, और मशीन ठीक समय पर काम करती है और अपने समय पर बंद हो जाती है।

इस जगत का जैसा विकास हुआ है वह क्रमशः इस भांति हुआ है कि हम मनुष्य की जगह मशीन को ज्यादा आदर देने लगे हैं और क्रमशः मनुष्य भी धीरे-धीरे मशीन होता जा रहा है। जो आदमी जितना ज्यादा मैकेनिकल, जितना ज्यादा यांत्रिक हो जाएगा, उतनी ही उसके भीतर की आत्मा सिकुड़ जाती है। उसके प्रगटीकरण के रास्ते बंध हो जाते हैं। हम अपने को देखेंगे तो हम पाएंगे कि हम करीब-करीब एक मशीन की भांति हैं, रोज वहीं के वहीं काम कर लेती है। और हम इन कामों को दोहराते चले जाते हैं। और एक दिन हम पाते हैं, आदमी मर गया। मृत्यु इसी यांत्रिकता का अंतिम चरण है। हम धीरे-धीरे जड़ होते जाते हैं। एक छोटा बच्चा जितना चैतन्य होता है एक बूढ़ा उतना चैतन्य नहीं होता। इसलिए क्राइस्ट ने कहा है, जो छोटे बच्चे की भांति होंगे वे परमात्मा के राज्य को अनुभव कर सकते हैं। इसका कोई यह अर्थ हनीं कि जिनकी उम्र कम होगी,इसका यह अर्थ है कि जिनके भीतर स्फुरणा, जिनके भीतर सहज चेतना। जितनी ज्यादा होगी, उतने जल्दी परमात्म के करीब पहुंच सकते हैं, वे उतने जल्दी सत्य को अनुभव कर सकते हैं।

जैसे विगत दो हजार, ढाई हजार, वर्षों में मनुष्य का विकास होता रहा है, यह संभावना कम होती हुई है। हमारा सहजता, वह जो भी स्पोटेंनियस है वह हमारे भीतर कम होता गया है और हमारी जड़ता बढ़ती गयी है। जीवन जैसा है, उसमें शायद जड़ता को बढ़ा लेना उपयोगी होता है।

एक आदमी सेना में भर्ती हो जाए, अगर वह चेतन हो तो सेना उसे इनकार कर देगी, वह जितना जड़ हो उतना ही अच्छा सैनिक हो सकेगा। जड़ होने का अर्थ है, उसके भीतर अपनी कोई स्वतंत्र बुद्धि न रह जाए। उसे जो आज्ञा दी जाए, उसे वह पूरा का पूरा पालन कर ले, उसमें जरा भी यहां, वहां, उसके भीतर कोई कंपन चेतन का नहीं होना चाहिए। इसलिए सैनिक धीरे-धीरे जड़ हो जाता है और जितना ही जड़ हो जाता है उतना ही हम कहते हैं, वह योग्य सैनिक है, क्योंकि जब हम उससे कहते हैं, आदमी को गोली मारो तो उसके भीतर कोई विचार नहीं उठता, वह गोली मारता है। और जब हम कहते हैं, बाएं घूम जाओ, तो वह बाएं घूम जाता है उकसे भीतर कोई विचार नहीं उठते।

डिसीप्लीन पूरी हो गयी और आदमी मर गया। आज्ञा पूरी होने लगी और आदमी भीतर समाप्त हो गया। इसलिए दुनिया में जितने सैनिक बढ़ते जाएंगे उतना धर्म शून्य और क्षीण होता जाएगा, क्योंकि वे सबके सब इतना अनुशासित होंगे कि उनके भीतर चेतना का कोई प्रवाह नहीं हो सकता। इसलिए मैं सेनाओं के विरोध में हूं, इसलिए नहीं कि वे हिंसा करती हैं, बल्कि इस लिए कि इसके पहले कि कोई आदमी हिसा में समर्थ हो सके, जड़ हो जाता हैं। और दुनिया में जितनी सेनाएं बढ़ती जाएंग

ी, उतने लोग जड़ होते जाएंगे। और अब तो सारी दुनिया करीब-करीब एक सैनिक कैंप मग परिणत होती जा रही है। अब तो हम अपने बच्चों को भी कालेजों में, स्कूलों में सेना की शिक्षा देंगे। और हमें याद नहीं है कि हम जिस आदमी को भी सेना की शिक्षा दे रहे है, हम उसे इस बात की शिक्षा दे रहे हैं कि उसके भीतर चेतना क्षीण हो जाए, वह एक मशीन हो जाए। उससे जो कहा जाए, वही वह करे, उसके भीतर अपनी कोई स्वतंत्र विचारणा न रह जाए। अगर यह दुनिया में हुआ तो दुनिया में धर्म विलीन हो जाएगा।

आप सोचते हों कि नास्तिक इस दुनिया में धर्म को विलीन कर रहे हैं तो आप गलती में है। दुनिया में धर्म उन-उन बातों से विलीन हो रहा हैं, जिन-जिन बातों से हम जड़ होते जाते हैं, जिन-जिन बातों से हमारी चेतना क्षीण होती जाती है। हम जितने ज्यादा अनुशासित हो जाएंगे, जितने ज्यादा डिसीप्लीन्ड हो जाएंगे, जितनी ज्यादा हम आज्ञाओं के अनुकूल चलने लगेंगे, उतने ही ज्यादा हमारे भीतर मृत्यु की घटना घट जाएगी।

विलियम जेम्स ने एक उल्लेख किया है। उसने लिखा है, एक आदमी सेना से संघातक चोट लगने के कारण मुक्त हो गया। एक दिन सुबह, गांव के बाजार से कुछ सामान लिए सिर पर, लौटता था। विलियम जेम्स अपने किसी मित्र से कह रहा था कि लोग सेना में बिलकुल जड़ जो जाते हैं। यह आदमी जा रहा है, यह बिलकुल ज.ड है। उसके मित्र ने कहा, इसका प्रमाण क्या है? विलियम जेम्स ने कहा, तुम जोर से कहो, अटेंशन, वह अपने सामान को छोड़ देगा, अटेंशन खड़ा हो जाएगा। उसने कहा, यह तो मुझे संभव नहीं मालूम होता, लेकिन यह प्रयोग किया गया। जोर से, उस होटल में बैठे हुए उसके मित्र ने चिल्ला कर कहा, अटेंशन, और वह आदमी अपने सिर पर सामान रखे था, उसके हाथ छूट गए। उसे सेना से मुक्त हुए दो साल हो गए थे। वह सामान गिर गया, वह अटेंशन खड़ा हो गया। तब उसे खयाल आया कि मैंने यह क्या किया? जेम्स ने कहा, यह आदमी जड़ हो गया है। इसके भीतर कुछ भी नहीं है जो चेतन हो, जो विचार करता हो। जिसमें बोध हों।

सेनाएं दुनिया को जड़ बनाए दे रही हैं। जितनी ज्यादा टेक्नोलाजिकल, जितनी ज्यादा यांत्रिक व्यवस्था विकसित हो रही है, यंत्रों के साथ प्रतियोगिता करने के लिए मनुष्य को भी यंत्र हो जाना पड़ेगा। उसे भी ऐसी आदतें बना लेनी होंगी जहां कि उसे सोचने का कम से कम मौका रह जाए। जो आदमी जितना ज्यादा सोचता है उतना ही असफल हो जाएगा। जो आदमी बिलकुल नहीं सोचता है और चला जाता है, वह हमें दुनिया में सफल दिखायी पड़ेगा। दुकानें और दफ्तर और हमारे काम और हमारी मशीनें और औद्योगिक विकास मनुष्य को धीरे-धीरे जड़ किए दे रहा है। अगर आपके मन में कोई भी धार्मिक होने की उत्सुकता है तो इस जड़ता के बाहर जाना एकदम जरूरी है। जो इस भांति जड़ हो जाएगा उसके भीतर चेतना की लौ बुझ जाएगी। फिर आप कितना ही मंदिर जाए और कितनी ही प्रार्थनाएं पूजाएं करें, वे सब व्यर्थ हैं। और सच तो यह है कि व्यवसायों ने उनको भी जड़ता का रूप दे दिय

ा है। एक आदमी रोज बैठकर पंद्रह मिनट या आधा घंटा एक मंत्र को दोहरा लेता है, वह भी एक जड़ता है। वह भी एक मैकेनिकल रिपीटीशन है, वह रोज-राज जैसा ही दोहराता रहेगा, पूरे जीवन दोहराता रहेगा। जिस दिन नहीं दोहराएगा, उस दिन उसको जरा अड़चन लगेगी। वह कहेगा, आज जरा तकलीफ मालूम होती है। आज मैंने सुबह अपना मंत्र नहीं पढ़ा, आज सुबह मैंने गायत्री या बाइबल नहीं पढ़ा, अ ाज मैंने सुबह की नमाज नहीं की, आज मुझे कुछ बेचैनी मालूम होती है। यह बेचैनी कोई अच्छी बात नहीं है। यह इस बात की सूचना है कि तुम एक आदम के ऐसे जड़ीभूत हो गए हो, उस आदत को छोड़ने की तुम्हारी हिम्मत नहीं। यह आदमी--एक आदमी सिगरेट पीता है, शराब पीता है और नहीं उसे सिगरेट मिले, नहीं उसे शराब मिले तो जैसी बेचैनी होती है, उससे भिन्न नहीं है। यह वैसी की वैसी आदत है।

आदतें मनुष्य की चेतना को दबा देती है।

जिस मनुष्य को आत्मा को उपलब्ध करना हो उसकी उतनी ही कम आदतें होनी च ाहिए, उसके उतने ही कम बंधन होने चाहिए, उससे उतनी ही कम जड़ता होनी चाहिए। रात जो मैंने कहा, संवेदना का क्या अर्थ है, सेंसेटिव होने का क्या अर्थ है, उसका प्रयोजन यह था, जितनी कम जड़ता हो उतनी ज्यादा मनुष्य के भीतर संवेदन की शक्ति जाग्रत होगी। और जितनी ज्यादा जड़ता हो उतनी संवेदन की शक्ति शून्य हो जाती है। और संवेदन की शक्ति जितनी गहरी हो, हम सत्य को उतनी ही गहराई तमक अनुभव कर पाएंगे, और संवेदन की शक्ति जितनी क्षीण हो जाएगी, उतना ही हम सत्य से दूर हो जाएंगे।

तो मैं आपको कहूंगा, जो धार्मिक हैं, वह स्मरण रखें कि धर्म उनकी आदम न बन जाए। कहीं धर्म भी उनकी एक जड़ आदत न बन जाए कि वह सुबह रोज मंदिर ज ाए, नियत समय पर मंदिर जाए, एक नियत मंत्र पढ़ें, एक नियत देवता के सामने हाथ झुकाए, यह कहीं उनकी जड़ आदत न हो। और यह सच है कि सौ में निन्यानबे मौके पर यह एक जड़ आदत है। और यह आदती बेहतर नहीं है और यह आदत ठीक नहीं है। फिर यह भी स्मरण रखें, आपने दूसरों की आज्ञाएं स्वीकार कर ली हैं और आप उनके अनुकूल वर्तन कर रहे हैं, उनके अनुकूल आचरण कर रहे हैं। यह भी जड़ता का अंगीकार कर लेना है। जब भी मैं कोई आज्ञा दूं और आप स्वीकार कर लें तो आपकी चेतना भीतर क्षीण हो जाती है। जब भी दूसरा कुछ कहे और आप स्वीकार कर लेते हैं, आपके भीतर की चेतना जड़ होने लगती है। समाज कहता है, संस्कार कहते हैं, पुरोहित कहते है, हजारों वर्षों की उनकी परंपरा है, उसके वजन पर कहते हैं। उद्धरण करते हैं शास्त्रों का कि यह ठीक है और हम उसे मान लेते हैं। और उसे स्वीकार कर लेते हैं। धीरे-धीरे हम स्वीकार मात्र पर टिके रहे जाएंगे, और हमारे जो स्फुरण होना चाहिए था, जीवन का, वह बंद हो जाएगा।

जीवन के स्फुरणा के लिए जरूरी है कि वह व्यक्ति आज्ञाओं के पीछे नहीं, बल्कि स्वयं के विवेक के पीछे चले। और जीवन के स्फुरण के लिए जरूरी है कि जो-जो चीजें

जड़ करती हों, व्यक्ति उनसे अपने को मुक्त कर ले। स्वाभाविक यह प्रश्न उठेगा तब तो इसका यह अर्थ हुआ कि अगर मैं एक दफ्तर में चालीस वर्षों तक काम करने जाता हूं तो मैं उस दफ्तर को छोड़ दूं, उस दुकान को छोड़ दूं, उस घर को छो. ड दूं। इसका तो यह अर्थ होगा—और यह बहुत लोगों ने लिया है।
दुनिया में जो संन्यासी होते रहे हैं, समाज को, घर को छोड़ कर वह इसलिए होते रहे हैं कि उन्हें यह लोग कि यह सब तो जड़ किए दे रहा है, इसलिए उसको छोड़ दो। लेकिन वे एक जड़ता को छोड़ते हैं और दूसरी जड़ता को पकड़ लेते हैं। इससे कोई बहुत भेद नहीं पड़ता। संसार को छोड़कर भागते हैं और संन्यास में जाते हैं, अ ौर संन्यास उन्हें और भी जड़ कर देता है।
मेरा अपना देखना यह है कि मैंने अभी कोई संन्यासी ऐसा नहीं देखा, जिसकी संवेदना की शक्ति गृहस्थ की संवेदना की शक्ति से अधिक हो। वह और भी जड़ हो गया है उसके अनुभव करने की सीमाएं और संकुचित हो गयी हैं। उसने इतना दमन किया है और एक पैटर्न पर, एक ढांचे पर अपने जीवन को ढाला है कि उसके भीतर और भी चैतन्य के विकास की संभावना कम हो गयी है।
जो संसार से भागकर संन्यासी होगा, वह एक जड़ता से दूसरी जड़ता में गिर जाएगा। इससे कोई बहुत भेद नहीं पड़ता इसलिए सवाल संसार से भागने का नहीं है, दफ तर से भागने का नहीं है, घर से भागने का नहीं है। सवाल यह है कि जो भी आप कर रहे हैं वह तो करना होगा, लेकिन यह स्मरण रखने का है कि वह आपके भीत र जड़ता न लाए। और यह हो सकता है। आप जहां हैं वहीं रहते हुए यह हो सकत ा है कि आपके भीतर जड़ता पैदा न हो। और आपके भीतर संवेदना की शक्ति तीव्र हो, की ज्योति चले।
यह कैसे होगा? उसके होने के कुछ नियम हैं और वे नियम ही धर्म के मूल नियम हैं, वे नियम ही योग की मूल शर्तें हैं।
सबसे पहला नियम तो यह है कि जिस व्यक्ति को सत्य को जानना हो वह पलायन की प्रवृत्ति छोड़ दे, एस्केप की प्रवृत्ति छोड़ दे कि यहां तकलीफ है, इसलिए यहां से भाग जाऊं। इससे कोई भेद नहीं पड़ता। आप जहां जाएंगे वहां तकलीफ शुरू हो जाएगी, क्योंकि आप आदमी हैं, वही का वही आदमी दूसरी जगह पहुंच जाएगा।
मैंने सुना है, एक गांव में सुबह ही सुबह सर्दी के दिन थे और गांव का परकोटा था। एक बूढ़ा आदमी गांव के बाहर बैठा था। दूसरे गांव से आते हुए एक राहगीर ने उससे पूछा कि क्या मैं यह पूछ सकता हूं कि गांव के लोग कैसे हैं। मैं यहां बसने का इरादा रखता हूं। उस बूढ़े आदमी ने कहा, मैं यह बताऊंगा जरूर कि इस गांव के लोग कैसे हैं? लेकिन मैं पहले यह पूछ लूं कि तुम जिस गांव में बसते थे, वहां के लोग कैसे थे? उसके बाद ही कुछ बताना संभव हो सकता है। वह आदमी हैरान हुआ, उसने कहा, इससे क्या संबंध है कि उस गांव के लोग कैसे थे। उस बूढ़े ने कहा, फिर भी मैं पूछ लूं, जीवन भर का अनुभव मेरा यह कहता है कि पहले मैं पूछ लूं कि उस गांव के लोग कैसे थे। उसने कहा, उस गांव के लोगों का नाम भी मत लो

। उन्हीं दृष्टों के कारण तो मुझे वह गांव छोड़ना पड़ा है। उस बूढ़े ने कहा, फिर औ
र कोई गांव खोजो इस गांव के लोग बहुत बुरे हैं, बहुत दुष्ट हैं और यहां रहने से
कोई सार नहीं होगा। और उस बूढ़े आदमी ने ठीक ही कहा। और उस आदमी के
जाने के बाद ही एक दूसरा आदमी आया और उसने पूछा कि मैं इस गांव में बसना
चाहता हूं। यहां के लोग कैसे हैं? उसने फिर वही कहा कि पहले मैं यह पूछ लूं ि
क उस गांव के लोग कैसे थे, जहां से तुम आते हो? उसे आदमी ने कहा, उनका न
ाम ही मुझे आनंद से भर देता है। उतने बेहतर लोग मैंने कहीं देखे नहीं। वह बूढ़ा
बोला, आओ स्वागत है, बसो। इस गांव में तुम्हें उस गांव से बेहतर लोग मिल जाएं
गे।

हम हो है, अपने को सदा अपने साथ ही ले जाते हैं। तो जो आदमी गृहस्थी में दुखी
और पीड़ित और परेशान था वह संन्यासी होकर कभी आनंदित नहीं हो सकता, क
योंकि वह आदमी तो वही का वही है। कपड़े बदलने से क्या होगा? जो आदमी दुका
न पर परेशान और पीड़ित है, वह मंदिर में जाकर आनंद को उपलब्ध नहीं हो सक
ता, क्योंकि वह आदमी तो वही का वही है। दुकान थोड़ी परेशान कर रही है। मका
न थोड़ी परेशान कर रहा है मंदिर थोड़ी आनंद देगा। वह आदमी जैसा है, अपने सा
थ ही ले जाएगा। यह बड़े आश्चर्य की बात है, अपने से भागना संभव नहीं होता।
कोई अपने से नहीं भाग सकता। आप सारी दुनिया को छोड़कर भाग जाए लेकिन अ
ाप तो अपने साथ होंगे और आप जैसे आदमी हैं, ठीक वैसी दुनिया जहां आप होंगे
फिर आप पैदा कर लेंगे। इसलिए जब गृहस्थ भागकर संन्यासी हो जाते हैं तो वे नय
ी गृहस्थियां बसाने लगते हैं, शिष्यों की, शिष्याओं की नयी दुनिया बसनी शुरू हो जा
ती हैं। जब वे घर को छोड़कर भाग जाते हैं तो आश्रम बसने लगते हैं। इधर का र
ाग छोड़ते हैं तो वहां का नया राग पैदा कर लेते हैं। इधर एक तरफ से जो छोड़क
र गए हैं नयी शक्लों में फिर का फिर वही खड़ा हो जाता है। और वह बिलकुल स्व
ाभाविक है। इसमें कोई अस्वाभाविकता नहीं कि आदमी वे, वे ही के वे हैं जो कि
घर थे, जो कि दुकान में थे।

इसलिए जब कोई आदमी दुकान को छोड़कर संन्यासी होता है तो वह धर्म की नयी
दुकान शुरू कर देता है। और दुनिया में जो धर्म की दुकानें शुरू हुई हैं, वह उन दु
कानदारों के कारण हुई हैं जो कि दुकानदार थे और संन्यासी हो सके। उनकी बुद्धि,
उनके सोचने के ढंग, उनके गणित और हिसाब वही के वे हैं। उनकी वृत्ति, उनकी
पकड़, उनकी एप्रोच वही की वही है। वे, वे ही के आदमी हैं, और इसलिए जितने
ज्यादा दुकानदार संन्यासी होते जाते हैं उतना ज्यादा संन्यास दुकानदारी में परिणत
होता जाता है।

दुनिया में संन्यासियों की जरूरत नहीं है, दुनिया में संन्यास की जरूरत है, संन्यासियों
की कोई जरूरत नहीं। मैं आपसे कहूं, दुनिया में संन्यास की जरूरत है, संन्यासियों
की कोई जरूरत नहीं है। दुनिया में संन्यास जितना ज्यादा होगा, दुनिया उतनी बेहत
र होगी और दुनिया में संन्यासी जितना ज्यादा होंगे दुनिया उतनी मुश्किल में पड़ती

जाएगी। यह कल्पना करिए, सारे लोग संन्यासी हो गए हैं, इस दुनिया का क्या हो गा? इसलिए स्थिति कैसे बदतर हो जाएगी। लेकिन यह कल्पना करिए कि दुनिया में संन्यास बढ़ता जाता है, यह दुनिया बहुत बेहतर हो जाएगी।
तो मैं आपको नहीं कहता कि पलायन करें, लेकिन हमारी प्रवृत्ति हमेशा पलायन क रने की होती है। जहां हमें तकलीफ दिखायी पड़ती है, हम सोचते हैं, इस स्थान को बदल दें, हम इस जगह को छोड़ दें।लेकिन हमेशा खयाल रखें, स्थान कभी तकली फ नहीं देता, आपकी भीतर की स्थिति तकलीफ देती है। इसलिए स्थान को बदलने को जो सोचता है वह पागल है और जो स्थिति बदलने को सोचता है, उसको कोई समझ का अंकुरण शुरू हुआ। इसलिए मैं कहता हूं, पलायन नहीं, परिवर्तन। भागें म त, जहां हैं, अपने को बदलें। और जहां आप हैं, उससे बेहतर स्थिति दुनिया में आप को कहीं भी नहीं मिलेगी, जब तक कि आप बेहतर आदमी न हो जाए और जब अ ाप बेहतर आदमी हो जाएंगे तो जहां आप हैं, वहीं बेहतर स्थिति है।
एक विदेशी यात्री पूरब के मुल्कों में यात्रा को आया और उसने सोचा कि मैं देखूं अ ौर समझूं कि योग क्या है। उसने भारत के और तिब्बत के और जापान के, पूर्वी मु ल्कों में जाकर आश्रम देखे। फिर वह बर्मा गया और वहां लोगों ने तारीफ की कि एक आश्रम यहां भी है, उसे भी देखो। उसने जो आश्रम भारत में देखे थे, वे पहाड़ों पर थे, रम्य झीलों के किनारे थे, सुंदर उपवन थे, वहां थे। भारत में जो संन्यासी देखे थे, वे घर छोड़े हुए लोग थे, नए-नए वस्त्रों के लोग थे। उसने सोचा, वैसा ही कोई रम्य स्थल होगा। वह तीन सप्ताह का निर्णय करके बर्मा के उस आश्रम के लि ए गया। लेकिन जब जिस गाड़ी से वह गया और जब उसे पहुंचाया गया आश्रम के सामने, तो वह दंग रह गया। वह तो एक बाजार था, जहां आश्रम था और रंगून का सबसे रद्दी बाजार था और वहां तो बड़ी भीड़ भाड़ थी बड़ा शोर गुल था। और वहीं वह छोटी सी तख्ती लगी थी और एक गंदे रास्ते के अंदर जाकर एक आश्रम था।
आश्रम बड़ा था, पांच सौ भिक्षु वहां थे। लेकिन कोई सौ डेढ़ सौ कुत्ते वहां धूम रहे थे और लड़ रहे थे और बड़ा परेशान हुआ कि यह कैसा आश्रम है। और सांझ का वक्त था और सैकड़ों हजारों कौवे इकट्ठे हो रहे थे, झाड़ों पर। इतना शोरगुल वहां मचा था, उसने सोचा, यह आश्रम है या बाजार है। यहां रहने से क्या फायदा होगा। लेकिन आ गया था और जब रात भर रुकना ही पड़ेगा, सुबह के पहले वापस लौट ने के लिए कोई गाड़ी भी नहीं थी। तो उसने जाकर प्रधान से मिलना चाहा। प्रधान से कहा, मैं तो हैरान हो गया। मैं तो सोचता था, आश्रम किसी पहाड़ के किनारे य ा किसी झील के पास किसी सुंदर जगह में होगा। वह तो गंदा बाजार है और यहां इतने कुत्ते किस लिए हैं और यह कौवे इतने किस लिए इकट्ठे कर लिए हैं।
उस साधु ने कहा, यह कुत्ते जो हैं, यह हमारे पाले हुए हैं और कौवे जो हैं, हमारे आमंत्रित हैं। इन्हें हम रोज चावल देते हैं, इसलिए जाते हैं, और कुत्ते तो हमने पा ले हुए हैं। यह शोरगुल व्यवस्थित है। यह बाजार हमने चुना है, जानकर। जमीन बहु

त थी हमारे मुल्क में सुंदर, लेकिन बाजार हमने जानकर चुना है। क्योंकि हमारी म
ान्यता यह है कि जो इस भीड़ भाड़ में, इस उपद्रव में शांत हो सकता है, उसकी श
ांति ही सच्ची है। और जो पहाड़ के पास जाकर बैठकर शांत हो जाता है उस शांति
में, उसके पास कोई शांति नहीं है। वह सारी शांति पहाड़ की है, और पहाड़ से नी
चे उतरते अशांति शुरू हो जाएगी। इसलिए संन्यासी पहाड़ से बस्ती में आने से डरत
ा है। इसलिए संन्यासी अकेलेपन से भीड़ में आने से डरता है। इसलिए संन्यासी लोगों
से डरने लगता है कि उनके पास गया कि मेरी सब शांति नष्ट हो जाएगी।
अगर आप किसी संन्यासी से कहें, दुकान पर बैठो, वह घबड़ाएगा, वह कहेगा, मेरी
सब शांति नष्ट हो जाएगी। अगर आप किसी संन्यासी से कहें, नौकरी करो, वह क
हेगा, मैं घबड़ाऊंगा, मेरा परमात्मा छूट जाएगा। जो परमात्मा नौकरी करने से छूट
जाता हो और जो परमात्मा दुकान पर बैठ जाने से अलग हट जाता हो, ऐसे परमात
मा की कोई कीमत नहीं है। ऐसे परमात्मा का कोई मूल्य नहीं है। जीवन की सहज
ता में, और सामान्यता में जो उपलब्ध हो, वही सत्य है। जीवन की सत्य स्थितियों
में जो उपलब्ध हो, उन स्थितियों का परिणाम होता है, आपके चित्त का परिवर्तन न
हीं होता है। इसलिए आप जितने संन्यासियों को देखते है, उनको वापस ले आइए अ
ौर सामान्य जिंदगी में डाल दीजिए और फिर पहचानिए कि उनके भीतर क्या है तो
आप जाएंगे कि यह आदमी आपसे गए बीते, बदतर लोग हैं। यह आपसे नीचे सा
बत होंगे। जिंदगी में यह नहीं टिक सकते। वहां कसौटी है, वहां परीक्षा है। यह एक
कोने में बैठे हुए हैं। इनकी सारी शांति आरोपित और पलायन की शांति है इसलि
ए इनके भीतर भय और डर बना रहता है। इनके भीतर घबड़ाहट बनी रहती है। इ
नके भीतर हमेशा डर बना रहता है कि अगर मैं गया तो सब गड़बड़ हो जाएगा।
मैंने सुना है, एक संन्यासी पहाड़ पर था, हिमालय पर था, बीस वर्षों तक वहां, औ
र तब उसे लगा, अब तो मैं परम शांत हो गया हूं। कुछ भक्त भी उसके वहां आने
शुरू हो गए। फिर नीचे एक मेला था। बड़ा और उसके भक्तों ने कहा, नीचे चलें।
और मेले में लोगों को दर्शन दें। संन्यासी ने सोचा, अब तो मैं शांत हो गया हूं, अ
ब यहां रहने का प्रयोजन भी क्या? चलूं, और वह पहाड़ से उतर कर नीचे आया।
और जब वह उस मेले मग गया तो वहां तो उसे लोग जानते भी नहीं थे। भीड़ बहु
त थी, एक आदमी का जूता उसके पैर पर पड़ गया। जैसे ही उसके पैर में पैर दबा
, उसका सारा क्रोध, जिसे वह सोचता था, विलीन हो गया है बीस वर्ष पहले पहाड़
पर गया था। वह दंग रह गया कि क्रोध वापस खड़ा हो गया। अशांत फिर हो गया
है मन, और उसने कहा, आश्चर्य है, पहाड़ जो बीस वर्षों में न बता सके, वह आ
दमी के संपर्क ने एक क्षण मग बता दिया।
मैं आपको कहूंगा, पलायन से कोई आदमी धार्मिक नहीं होता है, परिवर्तन से आदम
ी धार्मिक होता है। इसलिए पलायन की प्रवृत्ति को छोड़ दें, स्थानों से भागें नहीं, अ
पने को बदलें, और देखें कि आपकी बदलाहट के साथ स्थान बदल जाते हैं। लोगों से
भागे नहीं, अपने को बदलें, और आप पाएंगे कि आपकी बदलाहट के साथ लोग ब

दल जाते हैं। जो पति पत्नी को छोड़कर भा रहा है, वह गलती में है। अपने को ब दले और पाएगा कि पत्नी विलीन हो गयी। अपने को परिवर्तित करे और पाएगा ि जस पत्नी से भागने का खयाल था, वह विलीन हो गयी है। वह अब कहीं भी नहीं है।

जीवन आत्म परिवर्तन से उपलब्ध होता है, स्थानों के बदलने से नहीं। लेकिन मारी जड़ता हमें कहती है, स्थान बदल लें तो मैं आपको कहूंगा कि जहां-जहां जीवन में जड़ता पैदा हो रही है, वहां कुछ आंतरिक प्रयोग हैं जो जड़ता को पैदा नहीं होने दें गे और आप निरंतर एक नयी ताजगी और एक इनोसेंस को एक निर्दोष चित्तता को बचाकर रख सकते हैं। और जो नहीं वैसा बचाएगा, उसके लिए धर्म में कोई गुंजा इश, कोई गति नहीं है। कैसे यह होगा? किस भांति मनुष्य के भीतर कुछ चीज डेड हो जाती है, मर जाती है, चेतना कैसे जड़ हो जाती है?

चेतना जड़ हो जाती है, क्योंकि अतीत का भार हम पर भारी हो जाता है। हम ऐसे लोग हैं जो निरंतर पीछे से दबे रहते हैं। आप हैरान होंगे, अगर आप चालीस साल जी लिए है या पचास साल, तो पचास साल का कचरा और धूल आपके चित्त पर इकट्ठी हो गयी है। मकान तो आप रोज साफ कर लेते हैं, लेकिन चित्त को रोज स ाफ नहीं करते। मकान से कचरा अगर कोई पचास साल से न फेंके, तो उस मकान की क्या गति होगी? वह आपके चित्त की हो गयी है।

हम रोज इकट्ठा करते जाते हैं, जो भी आता है, वह भीतर इकट्ठा होता है। उसके भार के नीचे चेतना की लौ दब जाती है, मद्धिम हो जाती है। फिर वह भार ही भा र रह जाता है और चेतना विलीन हो जाती है। वही व्यक्ति चेतना की लोको सजग रख सकता है जो सांझ को जो भी इकट्ठा हुआ है, उसे फेंक दे, खाली हो जाए। ब ीते कल से खाली हो जाए, और जब सुबह उठे तो नए दिन में उठे--नयी सुबह और नया सूरज और नए लोग हों और भूल जाए कि कल भी कुछ था। और वह जो भ ी प्रतिक्रियाएं करे, जो भी कर्म करे, कल से प्रभावित न हो, बिलकुल सहज स्फूर्त ह ो, आज से प्रभावित हो। अगर कल एक आदमी गाली दे गया है और आज सुबह, आज को मिलता है तो आप उस आदमी को थोड़ी देखते हैं जो अभी मिल रहा है। वह आदमी कल वाला जिसने गाली दी थी, बीच में जाता है। और यह जो आदमी सामने खड़ा है, वह दिखाई नहीं पड़ता है। वह आदमी दिखायी पड़ता है, जिसने ग ाली दी थी। वह आदमी मर चुका, उसे हटा दें बीच से और इस आदमी को देखें ज ो सामने खड़ा है। हो सकता है, वह पश्चात्ताप करके आया हो। हो सकता है, वह र ात भर में बदलकर आया हो। हो सकता है, वह दुखी होकर आया हो। लेकिन आप के बीच में वह आदमी खड़ा हो जाएगा जिसने गाली दी थी। वह मृत छाया बीच में आ जाएगी और इस आदमी से आप जो भी व्यवहार करेंगे, वह इस आदमी से नह ीं कर रहे हैं, वह उस आदमी से कर रहे हैं, जो कल आपको दिखायी पड़ा था।

बुद्ध के ऊपर एक आदमी ने आकर थूक दिया। थूककर वह चला भी गया, फिर बा द में पछताया और दुखी हुआ, क्योंकि बुद्ध ने तो उस थूक को सिर्फ पोंछ लिया था

, और उस आदमी से कहा था, कुछ और कहना है? किसी भिक्षु ने पूछा, आप कह ते हैं, कुछ और कहना है? और उस आदमी ने थूका है। बुद्ध ने कहा, कोई बात इ तनी प्रगाढ़ रूप से कहना चाहता होगा जिसे शब्द कहने में समर्थ नहीं हो सके, इसि लए थूककर उसने जाहिर किया है। गुस्सा तेज है, उसने गुस्से को जाहिर किया है। इसलिए मैं पूछता हूं कुछ और कहना है? यह तो समझ गया। लेकिन वह आदमी कुछ कह नहीं सका, वापस चला गया, पछताया, दूसरे दिन क्षमा मांगने आया। उस ने बुद्ध के पैर छुए और उसने कहा, मुझे माफ कर दें। मुझसे कल भूल हो गई थी। बुद्ध ने कहा, वह भूल उतनी बड़ी नहीं थी जितनी बड़ी भूल यह है कि तुम अब तक उसे याद रखे हो। बुद्ध ने कहा वह भूल उतनी बड़ी नहीं थी। तूने थूका, मैंने प ोंछ दिया, बात समाप्त हो गयी मामला ही क्या है, दिक्कत कहां है, कठिनाई क्या है उसमें, लेकिन यह कि तुम अभी तक उसे याद रखे हो चौबीस घंटे बीत गए, यह तो बहुत बड़ी भूल है। यह तो वह बहुत बड़ी भूल है। मैं तुम्हें वही आदमी नहीं म ानता हूं, जो थूक गया था, यह दूसरा आदमी है जो मेरे सामने आया है, क्योंकि यह तो कह रहा है कि मुझसे भूल हो गयी है, मुझे क्षमा कर दो यह वह आदमी न हीं है जो थूक गया था, बिलकुल दूसरा आदमी है। मैं किसको क्षमा करूं, जो थूक गया था वहे तो अब कही है नहीं और जो क्षमा मांग रहा है उसने मुझ पर थूका न हीं था।

बुद्ध ने कहा, जिसने मुझ पर थूका था, वह अब है नहीं, कही भी इस दुनिया में। ख ोजने पर भी नहीं मिलेगा, और जो क्षमा मांग रहा है, उसने मुझ पर थूका नहीं। मैं किसको क्षमा करूं और तुम किससे क्षमा मांग रहे हो? जिस पर थूक गए थे, वह तो बह गया। जैसे नदी बही जा रही है, हम सोचते हैं वही गंगा है, जिस पर हम कल भी आए थे। गंगा बह गयी। बहुत पानी बह गया, जब आप कल आए थे। अब यह बिलकुल दूसरा पानी है, जिसको आप कल की गंगा समझ रहे हैं। और जैसे गं गा बह जाती है, वैसे आपको चित्त भी बह रहा है। वह प्रति क्षण बहा जा रहा है, कुछ भी ठहराव नहीं है उस चित्त में। बुद्ध ने कहा, तुम किससे क्षमा मांगते हो? व ह आदमी तो गया, मैं कैसे क्षमा करूं। तो बुद्ध ने कहा, इतना ही स्मरण रखो जो हो गया, उसे जाने दो, बह जाने दो, जो है, उसमें जागो।

हम, जो बीत गया है उसमें इतने चिपटे रहते हैं कि जो उसमें नहीं जाग पाते। हम सारे लोग मुर्दा लाशों को लिए रहते हैं, इसलिए जिंदा आदमी नहीं हो पाते। अती त को मर जाने दें तो आपको जीवन मिलेगा। और जो आदमी जितने अतीत को म र जाने देगा और रोज नया हो जाएगा, रोज ताजा हो जाएगा, वह ऐसे जागेगा जैसे पहली बार दुनिया में पैदा हुआ है। उस आदमी के भीतर जड़ता इकट्ठी नहीं होगी।

क्या आपको स्मरण है, पहले दिन जब आप अपनी पत्नी को मिले थे, उसी भांति अ ब भी मिलते हैं? अब वह सब जड़ हो गया। अब बीस वर्षों की स्मृतियां बीच में ख. डी हो गयी हैं और यह बीस वर्षों की स्मृतियां आपकी पत्नी को आपसे बहुत दूर ि

क दे रही हैं, आप बहुत दूर हो गए हैं। और इसलिए, जो आनंद पहले क्षण में मि लकर आपको अपनी पत्नी से मिला वह आज नहीं मिलेगा। लेकिन अगर यह बीस वर्षों की स्मृतियां बीच से गिर जाए और आप नए होकर और नयी पत्नी को देख पाए तो शायद वही आनंद का क्षण फिर उपलब्ध हो जाएगा।

आप रोज सुबह सूरज को देखते हैं। समझते हैं, वही सूरज फिर उग रहा है? वही सूरज दुबारा नहीं उगता। और आप फूलों के पास से गुजरते हैं, सोचते वही फूल ि फर खिले हैं? कोई फूल दुबारा नहीं खिलते और कोई तारे दोबारा नहीं निकलते। सब नया है। अगर आपको स्मृति का भार न हो तो जीवन आपको प्रतिक्षण नया मा लूम होगा। और जब आप इस नवीन के प्रति जाग सकेंगे और अपनी जड़ता को छो. ड देंगे तो आपको कुछ अनुभूतियां मिलनी शुरू होंगी, जिन अनुभूतियों की समग्रता का नाम परमात्मा है। तब आपको कुछ अनुभव होना शुरू होगा। जो अतीत से दबा है, वह कभी परमात्मा को नहीं जान सकता है, क्योंकि परमात्मा प्रतिक्षण मौजूद है। परमात्मा अतीत नहीं है, परमात्मा प्रतिक्षण वर्तमान है। जो अतीत से दबा है, वह वर्तमान को नहीं जान सकता। आपकी सारी जड़ता अतीत पैदा करता है।

एक साधु ने अपने शिष्य को कहा था, तुम जाओ, जो तुम मेरे पास नहीं समझ सके , वह मेरा एक मित्र है, उसके पास जाकर समझो। वह उसके मित्र के पास गया है। देखकर हैरान हुआ कि जहां उसे भेजा गया है, वह तो एक सराय का रख वाला है। जाते से उसका मन यह हुआ कि सराय के रखवाले से मैं क्या सीखूंगा। लेकिन ि फर भी भेजा गया हूं तो वह रुका। उसके गुरु ने कहा था कि तुम सुबह से शाम त क देखना कि वह क्या करता है। उसकी पूरी चर्या को समझना। उसकी पूरी चर्या उ सने समझी। वह तो सराय का नौकर था, सराय का काम मरता था। दो चार दिन बाद वापस लौटने लगा। वह तो पाने को कुछ भी नहीं था। लेकिन उसने सोचा कि मुझे पता नहीं कि रात को सोते वक्त कुछ करता हो। सुबह अंधेरे में जाग आता ह ो। उस वक्त कुछ करता हो।

उसने चलते वक्त उससे पूछा कि क्या मैं यह पूछूं कि रात को सोते समय आप क्या करते हैं? और सुबह जागकर क्या करते हैं? उसने कहा, दिन भर से सराय के ब र्त गंदे हो जाते हैं, रात सोते वक्त उनका झाड़ पोंछ कर साफ करके रख देता हूं। फिर रात भर में धूल जम जाती है। सुबह उठकर फिर उनको साफ कर देता हूं। उ सने सोचा कि कहां के पागल के पास मुझे भेज दिया। जो केवल सराय का रखवाला है और बर्तन साफ करता है। वह वापस लौट आया। उसने अपने गुरु को कहा। गु रु ने कहा कि उसकी बात तो पूरी थी, अगर तुम समझते। उसने कहा कि दिन भर में बर्तन गंदे हो जाते हैं, सांझ में साफ कर लेता हूं, रात भर में फिर थोड़ी बहुत धूल जम जाती है। सुबह फिर साफ कर लेता हूं। यही तो कुल जमा करना है।

वह चित्त हमारा दिन भर में गंदा हो जाता है। उसे रात सोते वक्त साफ कर लें, उसे पोंछ डालें और सुबह सपने फिर रात भर में कुछ गंदा कर देंगे। सुबह फिर उसे पोंछ डालें। कैसे पोंछेंगे? क्योंकि मकान पोंछना तो हमें मालूम है, लेकिन चित्त को

कैसे पोंछेंगे? चित्त को कैसे साफ करेंगे? कौन सा जल है जो चित्त के बर्तन को स
ाफ करेगा?

मैं आपको कहूं, मौन—मौन चित्त को साफ करता है। जो जितना ज्यादा मौन में प्रवि
ष्ट होता है, उतना उसके चित्त का बर्तन साफ हो जाता है। मौन के जल से चित्त
के बर्तन धोए जाते हैं। लेकिन हम मौन रहना भूल गए हैं। हम एक दम बोले जा र
हे हैं, दूसरों से या अपने से। हम चौबीस घंटे बातचीत में लगे हुए हैं, अपने से या
दूसरों से। सोते समय तक भी बातचीत करते हैं, उठते ही हम फिर बातचीत में ल
ग जाते हैं। हम बातों से घिरे हुए हैं। मौन हम भूल गए हैं। इस संसार में अगर को
ई चीज खो गई है तो मौन खो गया है और जहां मौन खो जाएगा, वहां जीवन में
जो भी श्रेष्ठ है, वह खो जाएगा क्योंकि सब श्रेष्ठ मौन से जन्मता है, साइलेंस से पैद
ा होता है।

रात को सोते वकत घड़ी भर को बिलकुल साइलेंस में उतर जाएं, बिलकुल चुप हो
जाए। सब तरह से मौन हो जाए सुबह उठते वक्त सब भांति मौन होकर थोड़ी देर
पड़े रहे और फिर उठें। और दिन में भी चौबीस घंटे यह खयाल रहे कि जहां तब
बन पड़े मेरे भीतर मौन हो। जो अति आवश्यक है, वह बोला जाए। जो अति आवश
यक है, वह सोचा जाए, अन्य था मेरे भीतर मौन होगा। और अगर कोई सजग हो
कर इसे स्मरण रखे कि मेरे भीतर मौन हो तो धीरे-धीरे मौन का अवतरण शुरू हो
जाता है।

अगर रास्ते पर चलते वक्त आप यह खयाल रखें कि मैं मौन चलूं—पहले तकलीफ ह
ोगी, जीवन भर की आदत है, शायद अनेक जीवन की आदत है, लेकिन धीरे-धीरे स
मरणपूर्वक, अगर भोजन करते वक्त स्मरण रखें कि मैं मौन रहूं। मौन का अर्थ यह
नहीं है कि ओठ बंद हों। मौन का अर्थ है, भीतर चलन हलन बंद हो। भीतर वहां
चुप्पी हो। जब भी मौका मिले, मौन हो जाएं। जिस क्षण आप मौन में हैं, उसी क्षण
आप मंदिर में हैं। चाहे फिर वह दुकान हो, चाहे फिर वह बाजार हो, चाहे वह द
फ्तर हो।

जीवन का अधिकतम क्षण मौन में व्यतीत हो, इसका स्मरण रखें और आप क्रमशः
एक नए आदमी अपने भीतर आते हुए अनुभव करें। क्रमशः आपके भीतर एक नए
मनुष्य का जन्म होने लगेगा और आप बिलकुल नयी चेतना को अनुभव करेंगे, और
आपके भीतर जड़ता टूटनी शुरू हो जाएगी। एक समय आएगा, आपके भीतर कोई
जड़ता नहीं होगी और केवल चैतन्य रह जाएगा।

जिस क्षण पूर्ण मौन में स्थापित व्यक्ति, अपनी चेतना में प्रवेश करता है, उसी क्षण
उनके भीतर शरीर विलीन हो जाता है और केवल परमात्मा का अनुभव शेष रह ज
ाता है। जिस क्षण आप पूरे मौन में हैं, उसी क्षण आप संसार में नहीं हैं, परमात्मा
में हैं। इसको मैं संन्यास कहता हूं। ऐसा व्यक्ति, जो सारी भीड़ के बीच मौन है, संन
्यासी है। ऐसा व्यक्ति जो सारे कर्मों के बीच मौन है, संन्यासी है। ऐसा व्यक्ति, जो
सब करते हुए मौन है, संन्यासी है। जिसके भीतर मौन है, वह संन्यास को पा गया।

क्योंकि मौन ही द्वार खोलता है, परमात्मा का। मौन ही द्वार खोलता है, अनंत चेत ना का। मौन ही द्वार खोलता है, पदार्थ के पार जो है उसके लिए।

स्मरण रखें, जो भी साधने जैसी बात है, जो भी पाने जैसी बात है, जो भी उपलब्ध करने जैसी बात है, वह है साइलेंस, वह है मौन। संसार चौबीस घंटे आपके भीतर मौन को तोड़ रहा है। आप चौबीस घंटे अपने मौन को तोड़ रहे हैं। फिर चाहे आप शास्त्र पढ़ें, ग्रंथों को याद करें, तत्व ज्ञान को स्मरण कर लें, वह भी मौन को तोड़ रहता है। उससे भी आप मौन में नहीं जा रहे हैं। वह सब तत्व ज्ञान भी आपके भी तर बातचीत बन रहा है।

चुप हो जाएं, इससे बेहतर और कुछ भी नहीं है। और चुप्पी को अनुभव करें अपने भीतर और उस घड़ी में जब आपके भीतर कोई भी नहीं बोलता होगा, जब निपट सन्नाटा होगा, जैसे कोई दूर एकांत वन में सब शांत हो, कोई पक्षी भी जब न बोल ता हो वैसा जब निपट सन्नाटा आपके भीतर होगा तो आप अनुभव करेंगे, आप साम ान्य व्यक्ति नहीं हैं। आप देह के घेरे में बंधे हुए व्यक्ति नहीं हैं, आपकी चेतना तब आकाश को छूने में समर्थ हो जाती है। उस मौन में आपको दिखायी पड़ता है अनु भव होता है, सुनायी पड़ता है, वही जो परमात्मा का है।

इस मौन को ही मैं प्रार्थना कहता हूं, इस मौन को ही ध्यान कहता हूं, इस मौन को ही समाधि कहता हूं। और इसे साधने के लिए किसी के पास सीखने जाने की जरू रत नहीं है। क्योंकि जो भी आप सीखेंगे वह आपके भीतर बात चीत बन जाएगा। इ स साधने के लिए किन्हीं ग्रंथों को पढ़ने की जरूरत नहीं है और इसे साधने के लिए किन्हीं पहाड़ों पर जाने की जरूरत नहीं है। आप जहां है, वहां ही स्मरणपूर्वक इतन ा ही ध्यान रखें कि मेरे भीतर व्यर्थ की बातचीत न चले। और जब भी व्यर्थ की बा तचीत चले तब शांत होकर उसे देखें, और कुछ न करें। और आप हैरान होंगे, अग र आप अपने भीतर चलती हुई बकवास को शांत होकर देखेंगे तो आपको भीतर ए क नए तत्व का अनुभव होगा जो केवल देख रहा है। बातचीत चल रही है और व ह दूर खड़ा है।

और तब, आपको यह अनुभव होगा कि चित्त बातचीत में लगा हुआ है लेकिन आत मा अभी भी मौन है और शांत है। वह जो देखने वाला तत्व है, वह आपकी आत्मा है वह निरंतर मौन में और निरंतर साइलेंट में है।

उसका थोड़ा सा अनुभव जैसे-जैसे गहरा होगा, बातचीत गिरती जाएगी, बातचीत ि वलीन होती जाएगी। एक समय आएगा, आपके भीतर कुछ भी विचार चलते हुए ह नीं हर जाएंगे, और जब कोई विचार हनीं चलते हैं तो विचार शक्ति का जन्म होत ा है। और तब तक विचार चलते हैं तब तक विचार शक्ति का जन्म नहीं होता। ि जतने ज्यादा विचार हो जाएंगे आप उतने विक्षिप्त हो जाएंगे, पागल के विचार ही ि वचार रह जाते हैं, विवेक बिलकुल नहीं रह जाता

इसलिए दुनिया के बहुत बड़े-बड़े विचारक पागल होते देखे जाते हैं। यह इस बात का सबूत है कि विचारक सत्य का अनुभव नहीं करता है। और आज तक दुनिया में

किसी विचारक ने सत्य का अनुभव नहीं किया है और न कभी कर सकेगा। जब ह म बुद्ध को महावीर को विचारक कहते हैं तो हम गलती करते हैं। यह विचार नहीं हैं। इन्होंने तो विचार को छोड़ दिया। यह तो सब विचार को छोड़कर चुप हो गए हैं, यह द्रष्टा हैं। और जो द्रष्टा हो जाता है, वह सब पा लेता है। एक छोटी सी क हानी, अपनी चर्चा को मैं पूरा करूंगा—

उपनिषदों के समय में एक युवक सत्य की तलाश मग गया। उसने अपने गुरु के चर णों में सिर रखा और कहा, सत्य को पाना चाहते हो या सत्य के संबंध में कुछ पा ना चाहते हो? उसके गुरु ने कहा, सत्य को जानना चाहते हो या सत्य के संबंध में कुछ जानना चाहते हो। अगर सत्य के संबंध में कुछ जानना है तो फिर मेरे पास रुक जाओ, अगर सत्य को जानना है तो फिर मामला कठिन है। उस युवक ने कहा, मैं सत्य को जानने आया, संबंध में जानने को नहीं आया। संबंध में ही जानना होत ा तो मेरे पिता खुद बड़े पंडित थे। सभी शास्त्र वे जानते थे। लेकिन जब मैंने उनसे कहा कि मैं सत्य को जानना चाहता हूं तो उन्होंने कहा, मैं असमर्थ हूं, तू कहीं और खोज। मैं सत्य के संबंध में जानता हूं। मैं शास्त्रविद हूं, मुझे सत्य का कोई पता न हीं। मैं सत्य को ही जानने आया हूं।

उसके गुरु ने कहा, तब ऐसा करो, इस आश्रम में जितने गाय बैल हैं, वे चार सौ के करीब हज, इन सबको ले जाओ, दूर ऐसे जंगल में ले जाना, जहां कोई आदमी न हो, और जब यह गाय बैल हजार हो जाए, इनके बच्चे होंगे, और यह हजार हो जाएंगे, तब तुम लौट आना। और तब एक शर्त याद रखो, जो भी बात करनी हो, इन्हीं गाय बैलों से कर लेना, जो भी बात करनी हो इन्हीं से कर लेना। किसी आ दमी से मत बोलना जो भी तुम्हारे दिल में आए, इन्हें से कह लेना। इतने दूर चले जाना कि कोई आदमी न हो, और जब यह हजार हो जाए तो वापस लौट आना।

वह युवक, उन चार सौ गाय बैलों को खदेड़कर जंगल में गया। दूर से दूर गया, ज हां कोई भी नहीं था। वहां वे जानवर और वह अकेला रह गया। उनसे ही बातें कर नी पड़ती है। जो भी कहना होता है, उन्हीं से कहना होता है। उनसे क्या कहता? उनसे क्या बात करता? उनकी आंखों में तो कोई विचार न थे। गाय की आंख कभ ी देखी है? जब आपकी भी आंख वैसी हो जाए तो समझना कि कहीं पहुंच गए। उ स आंख में कोई विचार नहीं है, खाली और शून्य। उन आंखों में देखता, उन्हीं के प ास रहता और उन्हीं को चराता, पानी पिलाता और अकेला उन्हीं के बीच सा जाता ।

वर्ष आए और गए। कुछ दिन तक पुरानी घर की स्मृतियां चलती रही। लेकिन नया भोजन न मिले तो पुरानी स्मृतियां मर जाती हैं। हम रोज नई स्मृतियां को भोजन दे देते हैं, इसलिए रिप्लेस होती चली जाती हैं। पुरानी मरती हैं, नयी भीतर पहुंच जाती है। अब नए का तो कोई कारण नहीं था। गाय बैल थे, उनके बीच रहना था, कोई नयी स्मृति का कारण न था। नई स्मृतियां पैदा न हुई, पुरानी को भोजन न ि मला, वह क्रमशः मरती गयी, वह गाय बैल के पास रहते-रहते खुद गाय बैल हो ग

या। वह तो संख्या ही भूल गया। गुरु ने कहा था, हजार जब हो जाए तो इनको लि
वा ले आना, लेकिन वह तो भूल ही गया। बड़ी मीठी कहानी है, उन गायों ने कहा,
हम हजार हो गए। वापस लौट चलो। यह तो काल्पनिक ही होगा, लेकिन इसका
मतलब केवल इतना था कि उसे पता नहीं था कब गाय बैल हजार हो गए। और ज
ब गायों ने कहा हम हजार हो गए लौट चलो, गुरु ने दूर से देखा, वह हजार गाय
बैल का झुंड आता था। उसने अपने शिष्यों को कहा, देखो, एक हजार एक—एक ह
जार एक गाय बैल आ रहे हैं। शिष्य बोले एक हजार एक? और बीच में वह जो यु
वा है? उसने कहा, उसकी आंखों में देखा। अब वह आदमी नहीं रहा। अब वह आद
मी नहीं है। और जब वह करीब आया तो गुरु ने उसे गले लगा लिया और गुरु ने
कहा, कहो मिल गया? वह युवक चुप रहा। उसने कहा, केवल आपके चरण छूने अ
ाया हूं। उसने गुरु के चरण छुए और वापस लौट गया।
उस मौन में, उसने जान लिया जो जानने जैसा था। अब तक, जो सदगुरु है वह मौ
न देता है और जो असद गुरु है, वह शब्द देता है। जो सदगुरु है, वह आपके ग्रंथ
छीन लेता है, जो असद गुरु है वह आपको ग्रंथ दे देता है, जो सदगुरु है, वह आप
के विचार अलग कर लेता है, जो असदगुरु है, वह आपके भीतर विचार डाल देता
है। यही होता रहा है। और अगर सत्य को जानना हो, सत्य के संबंध में नहीं, तो
मौन हो जाएं, चुप हो जाएं और चुप्पी को साधें, मौन को साधें। हमने स्मरणपूर्वक
नहीं साधा। इसलिए नहीं साध पाए हैं। साधेंगे, निश्चित ही साधा जा सकता है। क्य
ों? क्योंकि विचार को साधना ही कठिन है, मौन तो हमारा स्वभाव है। अगर हमने
थोड़ा सा भी प्रयास किया तो स्वभाव के झरने फूट पड़ेंगे, जड़ता टूट जाएगी, बह ज
ाएगी और चैतन्य का प्रवाह हो जाएगा।
तो स्मरण रखें, जब चैतन्य का प्रवाह होता है तो सारा जीवन आमूल परिवर्तित हो
जाता है। तब जो भी होता है वह शुभ है। तब कोई डिसीप्लीन, कोई अनुशासन अ
पने ऊपर से नहीं लादना पड़ता, कोई चर्चा ऊपर से नहीं लादनी पड़ती। तब जो भी
होता है, वह शुभ और सद होता है। चैतन्य की धारा को जड़ता से न रोकें। जीव
न ऐसा है कि वह जड़ कर रहा है। आपको प्रयास करना होगा कि जीवन की जड़त
ा आप पर आरोपित न हो। अगर आप इस प्रयास में संलग्न हैं तो आप एक धार्मिक
आदमी हैं। हिंदू, मुसलमान, ईसाई होने से आप धार्मिक नहीं हैं। जड़ता के विरोध
में अगर अपने भीतर लड़ रहे हैं तो आप धार्मिक हैं। और चैतन्य की आशा में, अपे
क्षा में और प्रार्थना में अगर संघर्ष शील हैं तो धार्मिक हैं।
ईश्वर करे, आपको धार्मिक बनाए, आप तथाकथित धर्मों से मुक्त हों और धार्मिक
बनें। आप तथाकथित मंदिर, शिवालय और मस्जिदों से मुक्त होंगे और धार्मिक बनें।
इस दुनिया में अगर धार्मिक आदमी का अवतरण हो जाए तो हम मनुष्य को बचा
ने में सफल हो जाएंगे, अन्यथा, थोड़े ही दिनों में सारे मशीन—मशीनें दिखायी पड़ेंगी
, कोई आदमी कहीं दिखाई नहीं पड़ेगा। आदमी मर रहा है और मशीनें जीती जा र
ही हैं। धीरे-धीरे हम सब मशीनों की भांति हो जाएंगे।और यह सब से बड़ी दुर्घटना

होगी। एटम बम और हाइड्रोजन बम इतनी बड़ी दुर्घटनाएं नहीं हैं। अगर वह गिर जाए तो कोई हर्जा नहीं है उतना शुभ, सब विलीन हो जाएंगे। इन सबका जन्म चैत न्य के विकास से होता है।

जड़ता को न आने दें अपने भीतर और चैतन्य को विकसित करें। चैतन्य विकास का नियम है, मौन को, शून्य को, ध्यान को, जागरूकता को अपने भीतर जो जितना ि वकसित करता है, वह उतना मौन को उपलब्ध हो जाता है।

परमात्मा आपके सब शब्द छीन ले, परमात्मा आपके सब विचार छीन ले, परमात्मा आपको निपट मौन कर दे, निरीह कर दे, आपको एक दम दरिद्र कर दे। आपकी आत्मा एक दम दरिद्र हो जाए विचारों से तो आप एक दम समृद्ध हो जाएंगे। और आपको अनंत संपत्ति के द्वार उपलब्ध हो जाएंगे। यही प्रार्थना करता हूं। मेरी बातों को इतनी गर्मी में बैठकर सुना है, इतने प्रेम से, उसके लिए बहुत अनुगृहीत हूं। सब के भीतर बैठे हुए परमात्मा को मेरा प्रणाम स्वीकार करें।

बेलेस्टी लाज, बंबई, दिनांक 15 नवंबर 1965

बूंद में सागर

मेरे प्रिय आत्मन,

बोलते समय, बोलने के पहले मुझे यह सोच उठता है हमेशा—किसान सोच लेता है ि क जिस जमीन पर हम बीज फेंक रहे हैं, उस जमीन पर बीज अंकुरित होने या नह ीं। बोलने के पहले मुझे भी लगता है, जिनसे कह रहा हूं, सुन भी सकेंगे या नहीं, उ नके हृदय तक बात पहुंचेगी या नहीं पहुंचेगी। उनके भीतर कोई बीज अंकुरित हो सकेगा या नहीं हो सकेगा। और जब इस तरह सोचता हूं तो बहुत निराशा मालूम होती है। निराशा इसलिए मालूम होती है कि विचार केवल उनके हृदय में बीज बन पाते हैं जिनके पास प्यास हो। और केवल उनके हृदय सुनने मग समर्थ हो पाते हैं जिनके भीतर गहरी अभीप्यसा हो। अन्यथा हम सुनते हुए मालूम होते हैं, लेकिन सु न नहीं पाते। अन्यथा हृदय पर विचार जाते हुए मालूम पड़ते हैं, लेकिन पहुंच नहीं पाते। और उनमें कभी संभव नहीं है।

प्यास के बिना कोई भी सुनना संभव नहीं है।

इसलिए जरूरी नहीं है कि जितने लोग बैठे हैं, वे सभी सुनेंगे। यह भी जरूरी नहीं है कि उन तक मेरी बात पहुंचेगी। लेकिन इन आशा में कि शायद किसी के पास पहुं च जाएगी तो होगा, निश्चित होगा। पर मैं आशा करूं कि सबके पास पहुंच सकेगी। और मैं विश्वास करूं कि सब प्यास लेकर इकट्ठे हुए होंगे।

हुआ ऐसा है कि दुनिया में प्यास सत्य के लिए, परमात्मा के लिए कम होती जा र ही है। सत्य के लिए, हमारी अभीप्सा कम होती जा रही है। यह मैं क्यों कह रहा हूं ? यह मैं इसलिए कह रहा हूं, धर्म के लिए, हमारी प्यास कम होती जा रही है, य ह मैं क्यों कह रहा हूं? यह मैं इसलिए कह रहा हूं कि अगर आपकी धर्म के लिए प् यास हो तो आप किसी धर्म के सदस्य नहीं हो सकते।

अगर आपकी धर्म के लिए प्यास हो तो आप हिंदू, जैन, मुसलमान और ईसाई नहीं हो सकते। जिसके भीतर प्यास होगी, वह खोज करेगा, वह साहस करेगा, अनुसंधान करेगा, वह साधना करेगा और सत्य तक पहुंचने के लिए संघर्ष करेगा। जिनके भी तर प्यास नहीं होती है, वह मां बाप जो विचार दे देते हैं उन्हें स्वीकार कर लेते हैं और उनको ढोते रहते हैं। जिनका धर्म जन्म से निश्चित होता है, जानना चाहिए उन्हें धर्म की कोई प्यास नहीं है। अन्यथा हम दूसरों के किए भोजन से तृप्त नहीं होते और हम दूसरों के पहने हुए कपड़ों को पहनने के लिए राजी नहीं होते, लेकिन हम दूसरों के उधार विचार स्वीकार कर लेते हैं। और हम परंपरा से सहमत हो जाते हैं और जन्म का आकस्मिक संयोग हमें जिस घर में पैदा कर देता है, हम उस धर्म को अंगीकार कर लेते हैं।

यह हमारे भीतर बुझी हुई प्यास के लक्षण हैं। जिनके भीतर परंपरा के प्रति संदेह नहीं उठता, जिनके मन में प्रचलित धारणाओं और मान्यताओं के प्रति जिज्ञासा और प्रश्न खड़े नहीं होते, उनके भीतर कोई प्यास नहीं है। अगर उनके भीतर प्यास हो तो प्यास की अग्नि उन्हें विद्रोह में ले जाएगी।

धर्म बुनियादी रूप से, या सत्य, या धर्म--और सत्य की बीज एक विद्रोह है। वह एसेंशियल रिवेलियन है। तो आपके भीतर अगर विद्रोह पैदा हनीं होता है और आप चुपचाप सबको स्वीकार कर लेते हैं, जो परंपरा ने और अतीत ने आपको दिया है, तो आप कभी धार्मिक नहीं हो सकते। महावीर ने वह स्वीकार नहीं किया, जो उन्हें दिया गया था और न बुद्ध ने स्वीकार किया था न क्राइस्ट ने। दुनिया में जो भी लोग सत्य को उपलब्ध हुए हैं, उन्होंने परंपरा से दिए गए सत्यों को स्वीकार नहीं किया। उन्होंने कहा, हम खोजेंगे, हम जानेंगे, हम पहचानेंगे। हम अनुभूति करेंगे तो स्वीकार करेंगे। अनुभूति के पहले जो स्वीकार करने को तैयार है उसकी प्यास झूठी है। और भी प्यास इसलिए झूठी मालूम होती है, अगर कोई आदमी कहे कि मुझे बहुत प्यास लगी है और पानी शब्द से ही तृप्त हो जाए तो हम क्या कहेंगे। हम कहेंगे, प्यास नहीं है।

हम आत्मा, और इन सारे शब्दों से तृप्त हो जाते हैं। इसका अर्थ है हमारे भीतर कोई जलती हुई प्यास नहीं है। अन्यथा प्यास हो तो पानी चाहिए। पानी शब्द से कोई कैसे तृप्त होगा। लेकिन मैं देखता हूं, जो धार्मिक दिखायी पड़ते हैं, वे शास्त्रों को पढ़ते हैं और तृप्त हो जाते हैं। यह प्यास जरूर झूठी है।

शास्त्र जिसकी प्यास को बुझा देते हों, वह प्यास सच्ची नहीं हो सकती, क्योंकि शास्त्र के सिवाय शब्दों के और क्या है? शास्त्र में सिवाय शब्दों के और कुछ भी नहीं है। सत्य तो मेरे और आपके भीतर है। सत्य तो जगत सत्ता के भीतर है। जो अपने भीतर और जगत सत्ता के भीतर प्रवेश नहीं करेगा, वह सत्य को उपलब्ध नहीं हो सकता। इसलिए जिसकी प्यास गहरी होती है, इसलिए जिसकी अभीप्सा तीव्र होती है, वह सहमत नहीं होता। वह किसी मान्यता से बंधता नहीं, सारी मान्यताओं को तोड़ देता है। और जब कोई मनुष्य सारी मान्यताओं को, सारी धारणाओं को तोड़

देता है तो उसके भीतर एक इतनी घबड़ाहट, इतनी बेचैनी, इतनी अशांति, इतने असंतोष का जन्म होता है कि जिसकी हम कल्पना भी हनीं कर सकते। और जब वैसा असंतोष भीतर पैदा हो जाए और भीतर लपटें जलने लगे खोज के लिए, जीवने के लिए तभी कोई व्यक्ति सामान्य चेतना के ऊपर उठकर परम चेतना से संबंधित हो पाता है। इसलिए अगर किसी ने कहा कि धर्म संतोष है, तो मैं कहना चाहता हूं, गलत है वह बात। धर्म बहुत गहरा असंतोष है। इसलिए अगर कोई सिखाता हो कि धार्मिक आदमी वह है जो संतुष्ट है तो मैं कहूंगा, बिलकुल ही, बिलकुल ही गलत बात है। धार्मिक आदमी वह है जो सबसे असंतुष्ट है, उसे कुछ भी संतुष्ट नहीं कर पाता है। और जब असंतोष तीव्र होता है तो उस तीव्र असंतोष की ज्वाला में ही उसकी चेतना ऊपर उठनी शुरू होती है। आरोहण गहरे असंतोष से शुरू होता है। पता नहीं आपके भीतर ऐसी प्यास और ऐसा असंतोष है या नहीं, लेकिन ईश्वर से मैं कामना करूंगा कि ऐसी प्यास पैदा हो। और अपने जन्म की बातों और विचारों से मुक्त हो जाएं। क्योंकि जो उनसे ही सहमत रहेगा, वह उनसे ही सहमत मर जाएगा। उसकी अपनी कोई अनुभूति नहीं हो सकती। कृपा करें परंपरा को दूर हटा दें। जो दूसरों ने दिया है उसे अलग रख दें, और पूछें अपने से कि मेरी उपलब्धि क्या है? अनुभूति के जगत में आपकी अपनी उपलब्धि क्या है।

मैंने सुना है, एक संन्यासी बहुत दिन तक अपने गुरु के आश्रम पर था। बहुत दिन उसने अपने गुरु की बातें सुनी। लेकिन उसकी बातों सुनकर उसे ऐसा लगने लगा कि यह तो वही-वही बातें रोज-रोज दोहरा देता है। कहीं और जाऊं और खोजूं। और उसके मन में जब यह संकल्प घना हो रहा था कि मैं कही और जाऊं और खोजूं, तभी एक और संन्यासी का आगमन उस आश्रम में हुआ। उस संन्यासी ने आते से ही इतनी सूक्ष्म और बारीक बातें की, इतनी तत्व चिंतन, इतने तत्व की गहरी-गहरी बातों का ऊहापोह किया कि उस युवा संन्यासी, जो आश्रम छोड़ने को था, उसके मन में हुआ कि अगर कोई गुरु हो तो ऐसा होना चाहिए। और उसका मन हुआ कि मेरा जो बूढ़ा गुरु है, वह यह बातें सुनकर कैसा संकोच, कैसी हीनता और कैसी दीनता नहीं अनुभव करता होगा।

कोई दो घंटे तक आगंतुक संन्यासी ने अपनी बातें समझायी, और जब अपनी बातें समझा चुका तो उसने अभिमान से सबकी तरफ देखा कि कैसा लगा, लोगों को कैसा लगा! उसने उस बूढ़े संन्यासी की तरफ देखा जिसका कि आश्रम था, वह बूढ़ा संन्यासी हंसने लगा। और उसने कहा वह मन मग रख लेने जैसा है। उसने कहा, मेरे मित्र, मैं दो घंटे तक संपूर्ण हृदय से तल्लीन होकर सुनता रहा कि तुम कुछ बोलो, लेकिन तुम तो कुछ बोलते नहीं। वह संन्यासी हैरान हुआ। उसने कहा आप पागल है। मैं दो घंटे तक बोलता ही था, और क्या बरता था। उस बूढ़े संन्यासी ने कहा, तुम बोले, मैं यह सुनता रहा, लेकिन तुम नहीं बोलते, तुम्हारे भीतर से दूसरे बोल रहे हैं। शास्त्र बोल रहे हैं, संस्कार बोल रहे हैं, परंपरा बोल रही है, समाज बोल रहा है, लेकिन तुम नहीं बोल रहे हो।

और निश्चित ही अपने भीतर खोजें कि जो भी आपको प्रतीत होती हैं बातें, जो आ पको सत्य मालूम होती हैं अनुभूतियां, वे आपकी हैं या दूसरे लोग बोल रहे हैं। और उसे आदमी से दरिद्र आदमी इस जमीन पर कोई भी नहीं है, जिसके भीतर अपना कोई स्वर न हो, सब स्वर पराए हो, और उस आदमी से कमजोर और दीन-हीन आदमी कोई भी नहीं है, जिसके पास अपनी कोई अनुभूति न हो, सब अनुभूतियां दू सरों की हों। ऐसे आदमी केवल एक प्रतिध्वनि मात्र है, जिसमें दूसरों को आवाजें गूं ज रही हैं और प्रतिध्वनित हो रही है। जिस पर मैं बोल रहा हूं, एक यंत्र पर बोल रहा हूं, मेरी आवाज को प्रतिध्वनित कर रहा है।
क्या आपको खयाल नहीं आता कि आपके भीतर भी महावीर, बुद्ध, कृष्ण, क्राइस्ट और मुहम्मद की आवाजें प्रतिध्वनित हो रही हैं? क्या आपकी अपनी कोई आवाज है , आपकी अपनी कोई ध्वनि है? अगर सब प्रतिध्वनियां हैं, तो आप कोरे हैं, खाली हैं और आप मुर्दा हैं और आप जीवित नहीं हैं। आपकी अपनी कोई अनुभूति ही आ पकी जीवन दे सकेगी। कोई शास्त्र जीवन देता है, न कोई गुरु जीवन देता है, अपनी अनुभूति ही जीवन देती है। और जिसके पास जितनी ज्यादा अनुभूतियां हों, वह उ तनी ही समृद्ध, वह उतना ही धनी, वह उतना ही संपदाशाली होगा। लेकिन हम ि कसी ऐसी संपदा की तलाश में नहीं है। हम तो उस संपदा की तलाश में हैं जिससे बड़े मकान बनते हैं, बड़ा यश बनता है, बड़े भवन बनते हैं, बड़े पद उपलब्ध होते हैं, हम उस संपदा की तलाश में हैं। हम क्षुद्र संपदा को तो खुद खोजते हैं, लेकिन ि वराट संपदा को दूसरों की मान लेते हैं। क्या यह इस बात की सूचना नहीं है कि ि वराट संपदा की हमें प्यास ही नहीं है?
हम यह नहीं मानते कि महावीर और बुद्ध के पास बहुत संपत्ति थी तो हमें क्या क रना है संपत्ति से। हम अपनी संपत्ति खोजते हैं। लेकिन जब सत्य का सवाल उठता है। तो कहते हैं, महावीर, बुद्ध, गीता और कुरान, बाइबिल। और हम कहते हैं, सत य उनमें हैं। जब सत्य का सवाल उठता है तो हम दूसरों के सत्य को मान लेते हैं, और जब संपत्ति का सवाल उठता है तो हम अपनी संपत्ति खोजते हैं। इससे ज्यादा बेईमानी और कोई मनुष्य अपने साथ दूसरी नहीं कर सकता है। अगर संपत्ति अपनी खोजनी है, क्षुद्र संपत्ति अपनी खोजनी है तो विराट और सत्य की संपत्ति भी अपनी ही खोजनी होगी। और यह खोज शुरू हो सके, इसके पहले यह समझना होगा कि मेरे पास कुछ है?
मैं देश के कोने-कोने में घूमा, मालूम कितने तत्वज्ञानियों को देखा और सुना और मैंने पाया, के सब शास्त्र बोल रहे हैं। उनके पास अपना कुछ भी नहीं है। उनसे बड़ी -बड़ी तात्विक बातें निकल रही हैं, लेकिन सब झूठी हैं, क्योंकि जो दूसरे से ली गय ी हैं, उनकी सचाई उस दूसरे आदमी के साथ रही होगी, आपके साथ नहीं है। जिस की आप प्रतिध्वनि कर रहे हैं, जिसे आप केवल प्रतिध्वनित कर रहे हैं, वह सत्य अ ापके लिए सत्य नहीं हो सकता। सत्य तभी सत्य होता है, जब वह मेरी अनुभूति हो । जब वह दूसरे की अनुभूति हो तो असत्य हो जाता है। और यही वजह है कि सा

रे धर्म, जब उन्हें जन्म मिलता है तो जीवित होते हैं। वे उस आदमी के साथ जीवि त रहते हैं, जिसके पास सत्य था। और उसके हटते ही मुर्दा होने शुरू हो जाते हैं और फिर लाशें रह जाती हैं। और फिर लकीरें रह जाती हैं, मुर्दा, जिन्हें हम पीटते रहते हैं।

दुनिया इस तरह के मुर्दा धर्मों से परेशान हो गई हैं। यह सब मरे हुए धर्म हैं। यह मरे हुए इसलिए हैं कि इनको मानने वाले के पास अपना सत्य नहीं है। अपना सत्य सबसे बड़ी बात है। और मैं, आपसे कहूं, वही सबसे बड़ी संपत्ति भी है। और जो ऐसे किसी सत्य को स्वयं उपलब्ध नहीं होता है, वह आज नहीं कल पछताएगा और तब उसे दिखायी पड़ेगा कि उसकी खोज किए हुए पद, उसकी इकट्ठी की गयी संप दाएं सब व्यर्थ हो गयी हैं। मृत्यु सब छीन लेती है, केवल सत्य को छोड़कर। मृत्यु सब छीन लेती है, केवल सत्य को छोड़कर और हम ऐसे पागल हैं कि जीवन भर में हम शेष सब खोजते हैं, केवल सत्य को छोड़कर।

मैंने सुना और मुझे प्रीतिकर रहा, और मैंने जगह-जगह लोगों को कहा। नानक एक गांव से निकले थे। उस गांव में एक रात रुके। उस गांव में जो बहुत समृद्ध और धनी-मानी व्यक्ति था, उसने आकर उनके चरणों में कहा कि मेरी सारी संपत्ति ले लें और इस सारी संपत्ति को किसी अच्छे काम में लगा दें। आपसे अच्छा आदमी औ र कौन मिलेगा, आप इशारा करें और मैं करूं। जो आज्ञा देंगे वह पूरा कर दूंगा। ना नक ने उसे नीचे से ऊपर तक देखा नानक नीचे ही देखते रहे। उस आदमी ने पूछा, आप कहते क्यों नहीं? नानक ने कहा, मुझे तुम्हारे पास कुछ भी दिखाई नहीं पड़त ा। तुम बिलकुल दरिद्र आदमी मालूम होते हो। उस आदमी ने कहा, मेरे कपड़ों को देखकर भूल में न पड़ें। मैं सीधा सादा आदमी हूं, इसलिए मेरी संपत्ति का पता नहीं चलता। इस इलाके में मेरे से ज्यादा संपत्ति और किसी के पास नहीं है। नानक ने कहा, मुझे तो कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता कि तुम्हारे पास कुछ भी हो। मुझे बहुत दरिद्र लोग मिले हैं, लेकिन तुम दरिद्रतम हो। फिर भी तुम नहीं मानते तो एक छो टा सा काम कर दो। अगर वह काम कर सके तो फिर और बड़ा काम बताऊंगा, प रीक्षा हो लेगी। और उसने कहा, आज्ञा दे, मैं कर दूंगा, चाहे मेरी समग्र संपत्ति क्यों न लग जाए। नानक ने अपने कपड़े से एक सुई निकाली, सीने की सुई और उस अ ादमी को कहा, इसे रख लो और जब हम और तुम दोनों मर जाएं तो इसे वापस लौटा देना। उस आदमी ने देखा, जरूर आदमी पागल है। मैं गलत आदमी के पास आ गया। पहले तो उसने कहा, दरिद्र हो तुम और अब यह कह रहा है कि यह सुई जब हम दोनों मर जाएं तो वापस लौटा देना। फिर भी एकदम से अभी वापस करूं , अभी मैंने कहा था, जो कहेंगे, कर दूंगा, ठीक नहीं मालूम होगा।

वह सुई लेकर वापस चला गया। उसने मित्रों से सलाह ली। उसने रात भर सोचा, वह तो समझ नहीं पाया। कोई रास्ता नहीं मिला। उसने सब तरह से मुट्ठी बांधने क ी कोशिश की उस सुई के ऊपर, लेकिन मुट्ठियां इसी पार रह जाती है। उसने सब भांति सुई को ले जाने के विचार किए, लेकिन सब विचार यहीं रह जाते हैं। कोई

पकड़ मृत्यु के भीतर नहीं जा सकती। सुबह-सुबह जल्दी वह आया और उसने नान
क के पैर छुए, ताकि इसके पहले कि लोग आ जाए, मैं अपनी दरिद्रता स्वीकार क
र लूं, यह सुई आप वापस ले लें। कहीं ऐसा न हो कि मैं मर जाऊं और सुई वापस
न कर सकूं, नहीं तो ऋण तो मेरे ऊपर रह जाए। इसे मैं मरने के बाद वापस नह
ीं लौटा सकूंगा, इसलिए जिंदगी में लौटा रहा हूं। नानक ने कहा, जिस चीज को मर
ने के पीछे न ले जा सको, उसे जिंदगी में इकट्ठा करने की भूल में मत पड़ना। और
जिसे जिंदगी में लौटाने का खयाल आता है कि मृत्यु के बाद नहीं लौटा सकेंगे उस
सब को लौटा दो, जिंदगी को वापस, उसे इकट्ठा मत करो। सुई ही मुझे मत लौटा
ओ, सब लौटा दो जो इकट्ठा हो, जो कि मृत्यु के पार जा सके।

असल में, हम समृद्धि के थोथे झूठे रूप में अपने भीतर की दरिद्रता छिपा लेते हैं। ि
जतना गरीब आदमी होगा उतनी संपत्ति की उसकी आकांक्षा होती है और जितना
नीचा आदमी होगा उतने बड़े पद पर होने की उसकी मंशा होती है। जो बहुत बड़े
पद पर होते हैं, वह बहुत साधारण, हीन लोग होते हैं। वे अपनी हीनता भुलाने को
बड़े पदों को खोजते हैं। और जो बहुत संपत्ति को खोज लेते हैं, वह बहुत दरिद्र ल
ोग होते हैं, अपनी दरिद्रता छिपाने को संपत्ति का आवरण इकट्ठा कर लेते हैं। इसलि
ए दुनिया में जो दरिद्र है, वह संपत्तिशाली दिखायी पड़ता है और जो बहुत दीन-ही
न है, वह बहुत बड़े पदों पर अनुभव होता हैं।

क्राइस्ट ने कहा है, धन्य है वे लोग जो अंतिम हो सकते हैं--क्राइस्ट ने कहा, धन्य हैं
वे लोग जो अंतिम हो सकते है, क्योंकि जरूर उनमें प्रथम होने की क्षमता है। धन्य
हैं वे लोग जो दरिद्र हो सकते हैं, क्योंकि निश्चय ही इस बात की दरिद्रता उनकी
सूचना है कि वे दरिद्र नहीं हैं, इसलिए उन्हें संपत्ति से अपनी दरिद्रता छिपाने का क
ोई कारण नहीं है। धन्य हैं वे लोग जो निम्न हो सकते हैं, क्योंकि उन्हें ऊंचे उठने
का कोई खयाल पैदा नहीं होता है। क्योंकि भीतर कोई नीचा है ही नहीं कि ऊपर
उठने का खयाल हो। इसलिए इस दुनिया में समृद्ध देखे जाते हैं और दरिद्र समृद्ध दे
ते जाते हैं। और भिखारी हुए हैं, जो सम्राट थे और सम्राट रहे हैं, जो कि भिखारी
थे।

नानक ने उस सुबह उससे कहा कि सोचो तुम्हारे पास क्या है। नानक ने उससे कहा,
मैं उस चीज को विपत्ति कहता हूं तो मृत्यु के पार जा सके और उसे संपत्ति कहत
ा हूं, जो मृत्यु के पार चली जाए।

मैं भी आपसे यह कहूं, वही संपत्ति है जो मृत्यु के पार चली जाए, और ऐसी संपत्ति
केवल सत्य की है, और कोई संपत्ति नहीं है। और कोई संपत्ति नहीं है, जिसे मृत्यु
की लपटें नष्ट कर देंगी। एक ही संपत्ति है सत्य की और वह आपकी उधार है, व
ह आपकी दूसरों से ली हुए हैं। वह आपकी महावीर, कृष्ण और क्राइस्ट से मिली हु
ई है। वह आपने गीता, कुरान और बाइबिल ली हुई है। वह संपत्ति आपकी नहीं है
जो कि संपत्ति है। और जिसे आप संपत्ति समझ रहे हैं, वह बिलकुल आपकी न है,
न हो सकती है। उसे आपको छोड़ ही देना होगा। जिसे छोड़ देना होगा उसे इकट्ठा

कर रहे हैं, और जो साथ हो सकती है, उसे अपने दूर रखे हैं और बड़े-बड़े नामों का सहारा ले रहे हैं।

स्मरण रखें, सत्य आपका हो, तो ही आपका हो सकता है। इसलिए समाज और परंपरा और शिक्षा आपको जो देती है, उसे सत्य मत मान लेना।

मैं एक गांव में गया। वहां एक अनाथालय मुझे दिखाने को ले गए। वहां उन्होंने कहा, हम छोटे-छोटे बच्चों को धर्म की शिक्षा देते हैं। मैं हैरान हुआ। क्योंकि मेरी बुद्धि कुछ बड़बड़ है। मुझे ऐसा लगता है कि धर्म की कोई शिक्षा हो नहीं सकती। और जब भी कोई शिक्षा होगी तो धर्म के नाम पर किसी न किसी गलत चीज की होगी। असल में धर्म की साधना होती है, शिक्षा होती ही नहीं। मैंने कहा, मैं हैरान हूं, धर्म की शिक्षा कैसे होगी। फिर भी मैं देखूं क्या शिक्षा देते हैं? उन्होंने कहा, आप इन बच्चों से कुछ भी पूछें, इन्हें सब उत्तर मालूम हैं। मैंने कहा, आप ही पूछें तो मैं सुनूं, क्योंकि मुझे यह भी ठीक पता नहीं कि कौन सा प्रश्न है, जो धार्मिक है। क्योंकि जितने प्रश्न हमें धर्म की किताबों में लिखे दिखायी पड़ते हैं, मुझे थोथे मालूम होते हैं। उनमें कोई भी प्रश्न धार्मिक नहीं मालूम होते। और उनके उत्तर तो उनसे भी ज्यादा थोथे होते हैं। मैंने कहा आप ही पूछें लड़कों से कि आत्मा कहां हैं? उन सारे लड़कों ने छाती पर हाथ रखे, कहा कि यहां। मैंने एक लड़के से पूछा कि यहां तुम कह रहे हो, क्या मतलब है। तुम्हारा? उसने कहा कि हमें बताया गया है कि आत्मा हृदय में और मैंने कहा, हृदय कहां है? वह लड़का बोला, यह हमें बताया नहीं गया। मैंने उनको कहा, इन बच्चों के साथ दुव्यवहार कर हरे हैं अन्याय कर रहे हैं। इन्हें एक साथ सिखा रहे हैं कि आत्मा यहां है, यह सीख लेंगे, और जब भी जीवन में इनके सामने प्रश्न खड़ा होगा, आत्मा कहां हैं? यह हाथ यांत्रिक रूप से छाती पर चला जाएगा और कहेगा, यहां। यह उत्तर बिलकुल झूठा होगा, यह दूसरों ने सिखाया है।

इस उत्तर के कारण इनका प्रश्न दब जाएगा, इनके भीतर जिज्ञासा पैदा न हो सकेगी कि आत्मा की खोज में ले जाए। इनके लिए उत्तर दे दिया, रेडीमेड, बना बनाया। यह उसे स्वीकार कर लिए, बालपन में, अबोध चित्त की अवस्था में जब कि कुछ सोच समझ और विवेक जाग्रत नहीं है, तभी दुनिया के सारे धार्मिक लोग निरीह, निर्दोष बच्चों के मन में अपनी शिक्षा डाल देना चाहते हैं। इससे बड़ा और कोई अनाचार, कोई बड़ा पाप नहीं है, न हो सकता है। क्योंकि उनके दिमाग में जो बातें आपने भर दी हैं, वे जीवन भर उन्हीं को प्रतिध्वनित करते रहेंगे और इस भ्रम में रहेंगे कि उन्हें ज्ञान उपलब्ध हो गया। जब कि ज्ञान उन्हें उपलब्ध नहीं हुआ। उन्होंने कुछ बातें और कुछ शब्द सीख लिए हैं।

आप भी शब्द सीखे हुए होंगे। खयाल करके देखें, किसी के सिखाए हुए शब्द हैं या यह अपनी अनुभूति है। और अगर ऐसा मालूम पड़े कि दूसरों के सिखाएं हुए शब्द है तो कृपा करना, उन्हें छोड़ देना और भूल जाना। इससे पहले कि कोई सत्य को उपलब्ध हो सके हो सके, सत्य के संबंध में जो सीखा है उसे भूल जाना अत्यंत अपरि

हार्य और अनिवार्य है। सत्य के संबंध में जो भी जानते हैं, उसे भूल जाना जरूरी है
।
अगर सत्य का जानना है, अगर परमात्मा को जानना है, तो परमात्मा के संबंध में जो भी जानते हैं,कृपा करें, उसे छोड़ दें। वह कचरे से ज्यादा नहीं है जो आपके मन को घेरे हुए है। और मन अगर सारे कचरे से मुक्त हो जाए, जो हमें सिखाया गया है तो उसका जन्म होगा, जो ज्ञान है। ज्ञान सिखाया नहीं जाता, वह हमारा स्वरूप है। जो सिखाया जाता है वह कभी ज्ञान नहीं हो सकता। जो बाहर से भीतर डाला जाता है, वह कभी ज्ञान नहीं होता, जो भीतर से बाहर आता है, वह ज्ञान होता है।
अगर ज्ञान हमारा स्वरूप है, अगर वह हमारी अंतर्निहित क्षमता है तो बाहर से नहीं डाली जाएगी, वह भीतर से आएगी और भीतर से आने मग वह सब, जो बाहर से डाला गया है बाधा हो जाता है। एक तो हौज में पानी भर देते हैं ऊपर से, वह भी पानी है। पंडित के मस्तिष्क में जो ज्ञान भरा होता है, वह हौज के पानी की तर ह है। और एक कुएं में भी पानी के जल स्रोत निकलते हैं, वह भी पानी है। लेकिन ज्ञानी का ज्ञान होता है, वह कुएं की भांति होता है। उसमें पानी ऊपर से नहीं डा ला जाता, मिट्टी, कंकड़ पत्थर बाहर निकाले जाते हैं और पानी नीचे पाया जाता है । और पंडित का जो ज्ञान होता है, उसमें ऊपर से पानी डाला जाता है। निकाला कुछ भी नहीं जाता।
तो जो ज्ञान आपके ऊपर से डाला जाता है वह हौज की तरह आकर भीतर भर जा एगा। वह कोई वास्तविक बात नहीं है। आपके जल स्रोत नहीं उससे खुलते हैं और भरा हुआ पानी जल्दी ही गंदा हो जाता है। इसलिए पंडित के मस्तिष्क से ज्यादा गं दा मस्तिष्क इस जमीन पर दूसरा नहीं होता। इसलिए पंडित सारी दुनिया में उपद्रव और जड़, उपद्रव की जड़ झगड़े फसादों की बुनियाद हैं। दुनिया में पंडितों ने जित ना उपद्रव करवाया है, उतना बुरे लोगो ने बिलकुल नहीं करवाया है। लेकिन बुरे ल ोग अपराधियों की तरह बंद हैं और पंडित पूजे जा रहे हैं। दुनिया में जितनी खून ख राबी हुई है, मनुष्य के साथ जितने अत्याचार हुई हैं, मनुष्य के और मनुष्य के बीच में जितनी दीवालें खड़ी की हैं, वे पंडित ने खड़ी की हैं। लेकिन वे अपराधी नहीं हैं , वे पूज्य हैं। वे समादृत हो रहे हैं। जरा मनुष्य के इतिहास को उठाकर देखें, उसमें जितने खून के धब्बे हैं, उसमें निन्यानबे पंडित के पास पड़ेंगे, एक प्रतिशत अपराधि यों के पास जाएगा। दुनिया में मनुष्य और मनुष्य के बीच जितना भी खाइयां और लड़ाइयां और उपद्रव खड़े किए हैं, वह पंडित ने खड़े किए हैं। और मैं मानता हूं उ सके पीछे कारण हैं। जो भी पानी ऊपर से भर दिया जाता है, वह गंदा हो जाता है । उसमें कोई जीवित स्रोत नहीं होते। तो पंडित चाहे वह किसी धर्म का हो उसके भीतर बाहर से भरा हुआ ज्ञान धीरे-धीरे गंदगी और सड़ांध पैदा कर देता है। और वह सड़ांध फिर नए-नए रूपों में निकलनी शुरू हो जाती है, घृणा और विद्वेष फैलाने के कारण हो जाती है। मनुष्य को मनुष्य से तोड़ने का कारण हो जाती है।

ज्ञान तो वास्तविक भीतर से आता है, बाहर से नहीं आता है।
और वह तभी आएगा जब बाहर के ज्ञान को हम अलग कर दें, क्योंकि वह कंकड़ पत्थर की तरह भीतर के ज्ञान को दबा लेता है। जो भी हमने बाहर से सीखा लिया है, वह हमारे आत्मा के जागरण के बाधा है। अब अगर हम बाहर से सीखे हुए क ो बाहर वापस लौटा दें तो वह जाग जाएगा जो हमारे भीतर है और निरंतर मौजूद है। उसकी स्फुरणा हो जाएगी।
सत्य को खोजने कहीं जाना नहीं है।
जो-जो असत्य हमने सीख लिया है उसे अलग कर लेना है। और सत्य हमारे भीतर होगा। परमात्मा को खोजने कहीं जाना नहीं है। जो-जो हमने अपने ऊपर आवरण ड ाल लिए हैं, वह अलग कर दें, और परमात्मा उपलब्ध हो जाएगा।
एक रात, एक बहुत सर्द रात को एक पहाड़ के पास, एक छोटे से मंदिर में जाकर, एक आदमी ने दस्तक दी। आधी रात होने को थी और बहुत ठंडी रात थी। अंदर से पूछा गया, कौन है, इतनी रात को? सुबह आओ। उस आदम ने कहा, मैं बहुत पापी हूं, मैं बहुत बुरा आदमी हूं। मैं बहुत बार सोचा कि दिन में आपके पास आऊं, लेकिन वहां और बहुत से लोग होते हैं, इसलिए मैं रात को आया हूं। वह मंदिर ए क साधु का था। दरवाजा खोला गया। वह साधु अंतिम सोने की तैयारी कर रहा था । उसकी सिगड़ी की आग भी बुझ गयी थी और आधी रात थी। उसने उससे पूछा ि क तुमने यह कैसे कहा कि तुम पापी हो? जरूर किसी पंडित ने तुम्हें समझाया होग ा कि तुम पापी हो। क्योंकि पंडित का एक ही काम है कि वह दुनिया में लोगों को समझाए कि वह पापी हैं। और मेरी दृष्टि में, किसी को यह समझा देना कि तुम पा पी हो इससे बड़ा कोई पाप नहीं हो सकता। क्योंकि उसके पापी होने की बुनियाद र ख दी गयी हैं।
ज्ञानी समझाता है, तुम परमात्मा हो, पंडित समझाता है, तुम पापी हो। ज्ञानी कहत ा है, तुम्हारे भीतर परमात्मा छिपा है, पंडित कहता है, तुम्हारे भीतर पाप ही पाप है। उस साधु ने कहा, जरूर किसी पंडित से तुम्हारा मिलन हो गया है। किसने तुम्हें कहा कि तुम पापी हो? मैं तो देखता हूं, तुम परमात्मा हो। उस आदमी की आंखें नीचे झुकी थी,उसने ऊपर उठायी। यह पहली दफा कोई आदमी मिला था जिसने कहा था कि तुम परमात्मा हो। उसने कहा, लेकिन मैं चोरी करता हूं, लेकिन मैं दू सरों की संपत्ति पर बुरी नजर डालता हूं। लेकिन मेरे मन में क्रोध आता है और मैं लोगों की हत्या तक के विचार कर लेता हूं।
उस साधु ने कहा कि तुम पागल हो कि पाप पाप की बातें कर रहे हो परमात्मा क ी तरफ नहीं देख रहे हो। देखो और पाप विलीन हो जाएगा। पाप इसलिए है कि पर मात्मा की तरफ दृष्टि नहीं है। पाप नहीं होगा, परमात्मा की तरफ दृष्टि भर होने की बात है। पापी से कहा बैठो। वह आदमी जो कह रहा था, मैं पापी हूं उससे कहां बैठाएं। उस आदमी कहा, लेकिन मुझे तो कोई परमात्मा दिखायी नहीं पड़ता, मेरे भीतर सब पाप ही पाप दिखायी पड़ता है। सिगड़ी रखी थी, आग बुझने के करीब थ

ी, सर्द रात थी। उस साधु ने कहा, देखो रात बहुत ठंडी है। शायद सिगड़ी में एका ध अंगारा हो। जरा उसे कुरेदो। उस आदमी ने देखा, उसने कहा, सब राख ही राख है।

वह साधु हंसने लगा। उसने कहा तुम्हारे देखने में ही गलती है, उसने राख को कुरेद ा, एक छोटे से अंगारे को निकाला, फूंका और चमकाया और उसने कहा, देखो, इस में इतनी हो आग है जितनी सूरज में आग हैं, क्योंकि एक बूंद में सारा सागर है अ ौर एक अग्नि की चिनगारी में सारा सूरज है। ऐसी भूल जैसी तुमने सिगड़ी में खोज ने में की, अपने बाबत, वह राख ही राख अपने को समझ रहे, पाप ही पाप समझ रहे हो। थोड़ा और ठीक से खोजो तो चिनगारी मिल जाएगी, जो कि सूरज की है। और उस सिगड़ी की आग तो बुझ भी सकती है, लेकिन मनुष्य के भीतर एक ऐसी आग जल रही है, जिसका बुझना असंभव है। कितने ही पाप, कितना ही अज्ञान उसे नहीं बुझा सकता है। कोई भी रास्ता उसे बुझाने का नहीं है, क्योंकि वह मनुष्य की अनंत सत्ता है और उसे मिटाने का कोई उपाय नहीं है।

मैं आपको कहूं, हरेक के भीतर वह सत्य की अग्नि है, और वह परमात्मा मौजूद है । उसे अगर जानना है तो जो बाहर से हमने सीख लिखा है, उस राख को झाड़ देन ा होगा। तो अंगारा उपलब्ध हो जाएगा। और जब भीतर का अंगारा उपलब्ध होता है तो जीवन एक ज्योति बन जाता है। और जब भीतर की अग्नि उपलब्ध होती है तो जीवन एक प्रेम बन जाता है और जब भीतर की अग्नि उपलब्ध होती है तो जी वन बिलकुल ही दूसरा जीवन हो जाता है।

हम उसी दुनिया में होते हैं, लेकिन दूसरे आदमी हो जाते हैं, उन्हीं लोगों के बीच ह ोते हैं, लेकिन दूसरे व्यक्ति हो जाते हैं। सारा रुख, सारी पहुंच, सारी दृष्टि परिवर्ति त हो जाती है, उस नए मनुष्य का जन्म जब तक भीतर न हो जाए तब तक हमें न जीवन का पता होता है, न आनंद का, न सौंदर्य का, न संगीत का। तब तक हम भटकते हैं, जीते नहीं हैं। तब तक हम मूर्छित, अर्द्ध निद्रा में चलते हैं, होश में नह ीं होते हैं। तब तक हमारा जीवन एक दुःस्वप्न है, एक नाइट मेयर है, उससे ज्यादा नहीं है। उसके बाद ही हमें पता चलता है कि क्या है जीवन, क्या है धन्यता। क्या है कृतार्थता, और तब जो ग्रेटीटयूड, तब जो कृतज्ञता का बांध पैदा है, वह धार्मि क मनुष्य का लक्षण है।

कैसे जो हमारे ऊपर बाहर से इकट्ठा हो गया है, वह हम अलग कर दें, कौन सा रा स्ता है, जो हमें सिखाया गया है हम उसे भूल जाए? कौन सा रास्ता है कि जो हमा रे चित्त पर धूल इकट्ठी हो गयी है, हम उसे झाड़ दें, और चित्त के दर्पण को स्वच्छ कर लें? रास्ता है। अगर धूल के इकट्ठे होने का रास्ता है तो धूल के अलग होने का भी रास्ता होगा, जिस भांति धूल इकट्ठी होती है, अगर हम उसके कारण को स मझ लें, तो उस कारण पर ही चोट करने से धुल अलग होनी शुरू हो जाएगी। धूल कैसे इकट्ठी होती है?

जीवन में धूल इकट्ठे होने को दो कारण हैं।

एक तो कारण है, हम होश में नहीं होते। जो भी आता है आ जाने देते हैं। जैसे क ोई धर्मशाला हो, आवारा धर्मशाला हो जिसमें कोई पहरेदार नहीं है। कोई भी आए और ठहरे और कोई भी जाए, कोई पूछने वाला नहीं है, कोई ठहराने वाला नहीं है, कोई बताने वाला नहीं है। हमारे चित्त को हम करीब करीब ऐसी धर्मशाला, ऐसी सराय बनाए हुए हैं कि कोई भी आया और ठहर जाए, हमें कोई मतलब नहीं है। कोई कचरा डाल दे, हमारे घर में तो हम नाराज हो जाते हैं और हमारे दिमाग में डाल दें तो हम धन्यवाद देते हैं कि बहुत अच्छी बातें बतायी हैं। घर में कचरे फेंक ने वालों पर हम गुस्सा करते हैं और मस्तिष्क में जो कचरा डालते रहते हैं उन पर हम बिलकुल गुस्सा नहीं करते।

चौबीस घंटे हमारे मस्तिष्क खुले हुए हैं और व्यर्थ के इन प्रश्नों को भीतर ले जा रहे हैं। हम भोजन में तो खयाल रखते है कि अशुद्ध भीतर न चला जाए, लेकिन मन के भोजन में कुछ भी खयाल नहीं रखते और कुछ भी भीतर चला जा रहा है। सुबह से उठ कर अखबार पढ़ रहे हैं, व्यर्थ की किताबें पढ़ रहे हैं, व्यर्थ की बातें कर र हे हैं, व्यर्थ की बातें सुन रहे हैं। जो कचरा दूसरे हमारे दिमाग में डाल रहे हैं, उस के कुछ न कुछ बांट और दान दूसरों को भी कर रहे हैं, और सारी दुनिया के मस्ति ष्क अजीब पागलपन और अजीब कचरे से भर गए हैं। और हर आदमी दूसरे के दि माग में डालता चला जा रहा है। इसके प्रति थोड़ी सजगता की जरूरत है, थोड़े हो श की जरूरत है। यह जानने की जरूरत है कि मेरे मस्तिष्क के भीतर व्यर्थ कुछ भी न डाला जाए। अगर इसका होश हो...

मैं अभी यात्रा में था। मेरे साथ एक सज्जन थे। उन्होंने बहुत चाहा कि वे मुझसे बा त चीत करें, लेकिन मुझे बिलकुल चुप देखकर—उन्होंने कई उपाय भी किए। मैं हो हूं करके चुप हो गया तो वे फिर उपाय किए। वे फिर थोड़ी देर चुप रहे, उन्हें बहु त बेचैनी थी। उन्हें बहुत परेशानी थी। कुछ पूछ,ना चाहते थे।

मुझसे उन्हें कोई मतलब न था, वे मुझसे कुछ निकालना चाहते थे। जब उनकी बेचै नी बढ़ गई तो मैंने उनसे कहा, अब आप जो कुछ कहना हो, शुरू कर दें। वह थोड़े हैरान हुए। यह कोई बातचीत का सिलसिला नहीं था। मैंने कहा, अब जो भी आप को कहना हो, शुरू कर दें। वह बहुत हैरान हुए। उन्होंने कहा, क्या मतलब आपका ? मैंने कहा, आप पूछें, छिपाए न। आपके भीतर कोई चीज उबल रही है और आप मेरे ऊपर फेंकना चाहते हैं, फेंके। आपको बिना उसे फेंके राहत नहीं मिलेगी। मैं सु नूंगा, मजबूरी है, आपके साथ हूं। वे कुछ हैरान हुए। मुझसे बोले, आपका मतलब क या है? मैंने कहा, चौबीस घंटे हम फेंक रहे हैं, एक दूसरे पर। न तो फेंकने वाले क ो होश है कि फेंक रहा है, न लेने वाले को होश है कि ले रहा है, इसलिए मस्तिष्क धीरे-धीरे क्षुद्र से क्षुद्र बातों से भरता चला जाता है। उसमें विराट के जन्म की संभ ावना क्षीण हो जाती है। मन जितना खाली और शांत और शून्य होगा उतना ही वि राट के अवतरण की संभावना पैदा होती है। नहीं तो विराट अवतरित नहीं होता अ ौर न विराट का भीतर से आविर्भाव होता है।

देखें, यह दुनिया जो है, यह हमारी दुनिया जो है, यह बीसवीं सदी जो है, अगर को ई चीज इस सदी के ऊपर लादी जा सकती है तो यह व्यर्थ विचारों की सदी है इत ने व्यर्थ विचार दुनिया में कभी नहीं थे, एक जमाना था, अजीब लोग थे।
मैंने सुना है चीन में लाओत्से एक बहुत बड़ा विचारक था और अदभुत द्रष्टा हुआ है। वह रोज सुबह-सुबह अपने एक मित्र के साथ घूमने जाता था। यह वर्षों क्रम च ला। अब रास्ते में वे दोनों जाते तो इतनी सी उनकी बात चीत होती। उसका मित्र आता, और कहता, नमस्कार। आधा घंटे बाद लाओत्से कहता, नमस्कार। दोनों जब घूमने जाते उसका मित्र कहता नमस्कार, तो आधे घंटे बाद लाओत्से कहता, नमस् कार। यह कुल बातचीत थी। एक दिन मेहमान उस मित्र के घर आया और वह उ सको भी घुमाने ले आया। घूमने के बाद वह मित्र आया, तो लाओत्से ने कहा, देखो उस मित्र को कल मत ले आना, बहुत बातचीत करने वाला मालूम होता है। उस आदमी ने क्या बातचीत की थी? उसने एक डेढ़ घंटे के बाद कहा था, आज की सु बह बहुत सुंदर है। लाओत्से ने कहा, उस आदमी को साथ मत ले आना। वह बहुत बकवासी मालूम होता है। उसने इतनी सी बात कही थी, डेढ़ दो घंटे के घूमने में ि क आज सुबह बड़ी सुंदर मालूम होती है। ऐसे लोग थे। ऐसे लोगों को अगर सत्य का अनुभव हुआ हो तो आश्चर्य नहीं है और हम जैसे लोग हैं, अगर में सत्य का अ नुभव न होता तो भी कोई आश्चर्य नहीं है।
महावीर बाहर वर्षों तक मौन थे। क्राइस्ट बहुत दिनों तक मौन थे। मोहम्मद पहाड़ पर जाकर बहुत दिनों तक चुप थे। दुनिया से मौन खत्म हो गया है। हम चुप रहना भूल गए हैं और जो मनुष्य चुप रहना और मौन रहना भूल जाएगा उसके जीवन में जो भी श्रेष्ठ है, वह नष्ट हो जाएगा, क्योंकि श्रेष्ठ का जन्म में जो भी श्रेष्ठ है, वह नष्ट हो जाएगा, क्योंकि श्रेष्ठ का जन्म ही मौन में होता है। सौंदर्य का और सत य का अवतरण मौन में होता है। इसलिए स्मरण रखें कि व्यर्थ के विचारों के प्रति सचेत हों। न तो दूसरों से लें, और कृपा करें, न दूसरों को दें। सचेत जितने आप ह ोंगे उसको ही क्रमशः आपको बोध होने लगेगा कि व्यर्थ के विचार आ रहे हैं, इन्हें नमस्कार कर लें, उन्हें भीतर ले जाने की कोई भी जरूरत नहीं है। इनसे कहें कि कृपा करें, और बाहर ठहरें।
अगर परिपूर्ण होश और बोध हो और चौबीस घंटे यह बोध बना रहे तो आप थोड़े ि दनों में व्यर्थ विचार के आगमन से मुक्त हो जाएंगे। और जब व्यर्थ विचार का आश्र व और आगमन बंद हो जाए तो फिर बड़ी घनीभूत शांति उत्पन्न होगी। लेकिन कुछ विचार आपने पिछले जीवन में और-और पिछले जन्मों में इकट्ठे कर लिए हैं, वे इ ससे बंद नहीं होंगे, वे तो भीतर घूमते ही रहेंगे। उनके लिए कुछ और करना होगा। बाहर से नए विचारों का आगमन, व्यर्थ के विचारों का भीतर संग्रह न हो, इसके लिए सचेत होना पड़ेगा, होश रखना पड़ेगा, सजग होना होगा, पहरेदार बनना होगा। और भीतर जो विचार इकट्ठे हो गए हैं, उनसे तादात्म्य तोड़ना होगा।

हमारे भीतर जो विचार चलते हैं, हम उनके साथ एक तरह की आइडेंटिटी, एक त रह का तादात्म्य कर लेते हैं। अगर भीतर आपके क्रोध आए तो आप कहते हैं, मुझे क्रोध आ गया। यह तो भूल की बात है, यह तो झूठी बात है। आपको कहना चाहिए मुझ पर क्रोध आ गया। भीतर आपके कोई विचार आए तो आपको यह नहीं कहना चाहिए कि मैं ऐसा विचार कर रहा हूं, आपको कहना चाहिए, मेरे सामने इस तरह के विचार घूम रहे हैं। वह मैं को जरा अलग करिए।

वे जो भीतर विचारों की और भावनाओं की दौड़ है, उससे अपने मैं को अलग करिए, वह अलग है। वह सदा दृष्टा मात्र है। भीतर जो विचारों का प्रवाह घनीभूत है, जो विचार इकट्ठे हैं, वह आपके पूरे अचेतन में बने हैं। आपका पूरा अनकांसेस उनसे भरा हुआ है। उनके प्रति सचेत हो जाइए और उनके प्रति अपनी आइडेंटिटी और अपना संबंध तोड़ लीजिए और समझिए, आप अलग हैं और वह अलग है और उनको देखिए, उनके साक्षी और दृष्टा बनिए। जब वे आए तो चुपचाप अलग खड़े हो जाइए और देखिए, जैसे कोई रास्ते पर जाती हुई भीड़ को देखता हो। या कोई आकाश में उड़ते हुए पक्षियों को देखता हो। या कोई रात में ऊग गए तारों को देखता हो। या जैसे कोई फिल्म के पर्दे पर चलती हुई तस्वीरों को देखता हो। ऐसा उनको देखिए और अपने को दूर कर लिजिए। आप केवल देखने वाले रह जाए और आप के सारे विचार अलग हो जाए तो आप हैरान हो जाएंगे, जैसे-जैसे विचारों के साथ संबंध क्षीण होगा, जैसे-जैसे विचारों की पृथकता स्पष्ट होगी, वैसे-वैसे विचार भीतर भी मरने शुरू हो जाते हैं।

बाहर के विचारों का आगमन बंद हो, भीतर के विचार क्रमशः मृत हो जाए, एक घड़ी, एक बिंदु पर आप पाएंगे, आप परिपूर्ण शून्य खड़े हैं और जिस क्षण आपको शून्य उपलब्ध होगा, उसी क्षण आप पूर्ण को अनुभव कर लेंगे, उसी क्षण सत्य का आविर्भाव हो जाएगा। उसी क्षण आप जानेंगे, परमात्मा क्या है। फिर शास्त्रों की जरूरत न होगी। शास्त्रों में जो लिखा है, वह सामने आ जाएगा। शास्त्रों में जो कहा है, वह प्रत्यक्ष हो जाएगा। महावीर और बुद्ध को जो अनुभव हुआ होगा, वह आप को अनुभव हो जाएगा।

प्रत्येक आदमी हक रखता है, प्रत्येक का अधिकार है, उसे अनुभव कर ले। हम अपने हाथ से खोए हुए हैं। अगर हम थोड़े सजग हो, थोड़े जागरूक हों, थोड़े प्रयत्नशील हों, थोड़ी साधना में लगें तो निश्चित ही हम भी उन्हीं सत्यों को उन्हीं अनुभूतियों को पा सकते हैं, जो किसी भी मनुष्य ने कभी भी पायी हों। जो एक बीज हो सकता है, वह हरेक बीज हो सकता है। और जो एक मनुष्य में संभव हुआ है, वह हर मनुष्य में संभव हो सकता है।

लेकिन, विचार बाधा है, व्यर्थ विचारणा बाधा है। सीखी हुई शिक्षा और संस्कार बाधा हैं। उन्हें अलग कर देना होगा और निर्दोष होना होगा और शांत और शून्य और मौन होना होगा। अगर यह हो सके तो आपके भीतर एक अभिनव सौंदर्य का जन्म होगा, एक अभिनव सत्य का संचरण होगा। कोई आपके भीतर एक नयी शक्ति अ

ौर एक नयी ऊर्जा अनुभव में आएगी और वह आपका जीवन बन जाएगी। वह आप का सब कुछ बन जाएगी। वह संपत्ति होगी, जो मृत्यु के पार जाती है और उसे को ई भी नहीं मिटा पाता। स्मरण रखें, जो मृत्यु के पार जाती है वही जीवन है। क्योंि क जीवन अकेला है जिसकी मृत्यु नहीं हो सकती।

आपके पास अभी जीवन नहीं है, क्योंकि सत्य नहीं है आपके पास सत्य नहीं है, क्य ोंकि आप शांत और शून्य नहीं है। आप शांत और शून्य नहीं हैं, क्योंकि आप अपने मन को न तो बाहर से रोक रख रहे हैं कि उसमें कुछ भी भर जाए और न भीतर चलते हुए विचारों को अपने तादात्म्य से तोड़ रहे हैं।

अगर ठीक से कोई कारण को समझे। अगर ठीक से पूरे काजल चेन को समझे कि क्या है जो हमारे मस्तिष्क को बांधना और ग्रसित करता और जमीन पर रखता है और उठने नहीं देता है। कौन सी जंजीरें हैं जो हमें बांध लेती हैं संसार के तट पर और सत्य तक नहीं जाने देतीं, तो निश्चित ही उसे कारण दिखायी पड़ जाएंगे। औ र जिसे कारण दिखाई पड़ जाएं, अगर वह संकल्प करे और कारणों के विरोध में च ले तो निश्चित ही वहां पहुंच सकता है जहां पहुंचना जीवन का लक्ष्य है।

शास्त्र जहां नहीं ले जा सकेंगे, वहां स्वयं का सत्य ले जाएगा और जब स्वयं का सत य उपलब्ध होगा तो सब शास्त्र सत्य हो जाएंगे, और जब स्वयं के भीतर अनुभूति जगेगी तो सारे तीर्थंकर और सारे पैगंबर और सारे अवतार, सारे ईश्वर पुत्र उस अ नुभूति में प्रमाणित हो जाएंगे और तब दिखायी पड़ेगा जो उन्होंने कहा है, वह सत्य है। और तब यह नहीं दिखाई पड़ेगा कि क्राइस्ट ने जो कहा है, वह सत्य है और जो महावीर ने कहा है, वह गलत है। तब यह नहीं दिखायी पड़ेगा कि मोहम्मद ने जो कहा है, वह सत्य है और राम ने जो कहा, वह गलत है। जब तक ऐसा दिखाय ी पड़े तब समझना कि शास्त्र बोल रहे हैं, सत्य नहीं बोल रहा है। तब दिखाई पड़ेग ा कि महावीर ने जो कहा है, मोहम्मद ने जो कहा है, बुद्ध ने जो कहा है, क्राइस्ट ने, कंफ्यूशियस ने जो कहा है, राम, कृष्ण ने जो कहा है, वह सब सत्य है, और व ह सत्य एक ही है। जब सत्य उपलब्ध होगा तो सब शास्त्र सत्य हो जाएंगे और जब तक सत्य उपलब्ध नहीं होगा तब तक एक शास्त्र सत्य होगा और शेष शास्त्र असत य होंगे।

और जब तक आपको ऐसा दिखता रहे कि मैं हिंदू हूं तब तक जानना, अभी आप धार्मिक नहीं हुए। और जब तक आपको लगता रहे, मैं जैन हूं तब तक समझना धा र्मिक नहीं हुए, क्योंकि धर्म तो एक है। जब सत्य उपलब्ध होगा तो आप सिर्फ धार्मि क होंगे, तब कोई विशेषण, कोई शास्त्रीय विशेषण नहीं रह जाता है।

ईश्वर करे, ऐसे सत्य में आपको जगाए, जो सबका है। ऐसे सत्य में आपको जगाए जो आपके भीतर तो मौजूद है, लेकिन आप उसकी तरफ आंख फेरे हुए हैं। ईश्वर ऐसी प्यास दे और असंतोष दे, यह कामना करता हूं।

मेरी बातों को इतने प्रेम और इतनी शांति से सुना, उससे बहुत अनुगृहीत हूं--बहुत आनंदित हूं, और अंत में अपना धन्यवाद करता हूं, और प्रणाम करता हूं, सबके भीतर बैठे परमात्मा को, मेरे प्रणाम स्वीकार करें।
बंबई, 15 नवंबर 1965

अजन्मा संगीत
मेरे प्रिय आत्मन,
फूल किसी से पूछते नहीं कि कैसे खिलें। तारे किसी से पूछते नहीं कि कैसे जलें। आदमी को पूछना पड़ता है कि कैसे वह वही हो जाए, जो होने को पैदा हुआ है। सहज तो होना चाहिए परमात्मा में होना, लेकिन आदमी कुछ अदभुत है।
में होना चाहिए, उससे चूक जाता है और जहां नहीं होना चाहिए, वहां हो जाता है। कहीं कोई भूल है। और भूल भी सीधी है। आदमी होने को स्वतंत्र है। इसलिए भटकने को भी स्वतंत्र है। शायद यह भी हो सकता है कि बिना भटके पता ही न चले--बिना भटके पता ही न चले क्या है हमारे भीतर। शायद भटकना भी मनुष्य की प्रौढ़ता का हिस्सा हो। मैं एक छोटी सी कहानी से समझाऊं--फिर हम समाधि के प्रयोग के लिए बैठेंगे।
एक आदमी था, बहुत धन था उसके पास, लेकिन शांति न थी, जैसा कि अक्सर होता है। धन की तलाश करता है आदमी कि शांति मिलें। धन तो मिल जाता है, पर शांति जितनी दूर थी, शायद उससे भी ज्यादा दूर हो जाती है। सब पा लिया था, लेकिन आनंद की कोई खबर न मिली और वह बूढ़ा होने आ गया था। तो उसने बहुत से लाखों करोड़ों के हीरे जवाहरात अपने घोड़े पर ले लिए और खोज में निकल पड़ा। खोजने नहीं, कहना चाहिए आनंद को खरीदने निकल पड़ा। जो आनंद दे दे, उसे ही सारे हीरे जवाहरात दे देना चाहता था। बहुत लोगों के पास गया है। जहां-जहां खबर सुनी वहां-वहां गया। लेकिन किसी को आनंद की कोई खबर न थी। लोगों ने आनंद की बात तो की, लेकिन उसने कहा, बात नहीं, मुझे आनंद चाहिए, और मैं सब कुछ देने को तैयार हूं।
लेकिन हर जगह उसे लोगों ने सलाह दी कि तुम कुछ ऐसा काम करने निकले हो कि सिर्फ एक फकीर है फलां-फलां गांव में, अगर वह कर दे तो कर दे, और कोई न कर पाए। फिर आखिर वह उस गांव में भी पहुंच गया। सांझ का समय था, अमावस की रात थी, सूरज चल गया था। गांव के बाहर ही एक वृक्ष के नीचे वह फकीर मिल गया। उस अमीर आदमी ने घोड़े से उतर कर थैली उस फकीर के पैरों के पास पटक दी और कहा, करोड़ों रुपए के हीरे जवाहरात हैं। मुझे आनंद चाहिए, एक झलक मिल जाए, मैं सब देने को राजी हूं।
उस फकीर ने कहा, पक्का इरादा करके आए हो? उस आदमी ने कहा, पक्का। महीने से घूम रहा हूं और उदास हो गया हूं। तुम पर ही आशा टिकी है उस फकीर ने

कहा, सच में ही आनंद चाहिए, और दुखी हो? उस आदमी ने कहा, दुख का कोई हिसाब नहीं। आनंद की कोई किरण भी नहीं मिलती। यह बात ही चलती थी कि अचानक उस अमीर ने देखा कि यह क्या हुआ? उस फकीर ने झोली उठाई और भाग खड़ा हुआ। एक क्षण तो अमीर सकते में आ गया।

अमीर सिर्फ उन फकीरों का विश्वास करता है, जो पैसे न छुएं। इसलिए अमीर उन की पूजा करता है, जो पैसे से बिलकुल दूर रहे, क्योंकि अमीर उनसे शाश्वत रहता है। इसके कोई खतरा नहीं है। यह फकीर कैसा है कि झोले को ही ले भाग गया! एक क्षण तो उसकी समझ में भी न आया। फिर वह चिल्लाया कि मैं लूट गया, मैं मर गया। मेरी सारी जिंदगी की कमाई लिए जा रहे हो। तुम चोर हो, तुम कैसे ज्ञानी हो? और पीछे भागा, क्योंकि अंधेरी रात थी और सन्नाटा था गांव के बाहर। लेकिन फकीर खुद ही गांव में चला गया भागता हुआ और अमीर पीछे गया। गली-गली में फकीर भागने लगा और अमीर पीछे चिल्लाने लगा कि पकड़ो, चोर है, बेईमान है और मैं समझा था कि ज्ञानी है। मैं लूट गया, मैं मर गया। मैं बहुत दुखी हो गया हूं, मेरा सब छिन गया है।

गांव के लोग भी सम्मिलित हो लिए। गांव के लोग भी भागने लगे। लेकिन फकीर के रास्ते जाने माने थे और अमीर रास्ते जानता न था, पराया गांव था। इसलिए फकीर ने बहुत चक्कर दिए। फिर आखिरी फकीर उसी झाड़ के पास वापस लौट आया। झोले को पटक दिया, जहां से उठाया था वही और झाड़ के पीछे। अंधेरे में खड़ा हो गया। अमीर आया पीछे हांफता हुआ, भागता हुआ, चिल्लाता हुआ, लुट गया, मर गया। हे भगवान, मेरा सब छिन गया। झोले को देखा, उठा लिया, छाती से लगा लिया। उस अमीर की आंखों में उस समय आनंद की झलक थी। फकीर बाहर निकला और उसने कहा, मिला कुछ आनंद! यह भी एक तरकीब है, आनंद को पाने की। उस अमीर ने कहा, बड़ी शांति मिली, बड़ा आनंद मिला। इतना सुखी मैं कभी न था। लेकिन यह थैली इसके पास पहले भी थी और यह कहता है, इतना सुखी मैं पहले कभी न था। और कहता है, बड़ी शांति मिली। और यह थैली पूरी की पूरी इसके पास थीं, घड़ी भर पहले भी।

इस घड़ी भर में क्या हो गया? इस घड़ी भर में इसने खोया। जब तक हम खो न दें उसे, जो हमारे पास है, हम उसे पा नहीं सकते। जब तक हम खो न दें उसे, जो हमारे भीतर है, तब तक हम उसे पहचान नहीं सकते। शायद इसलिए मनुष्य को खोना पड़ता है स्वयं को, ताकि वह पा सके।

हम सब ने खो दिया है। हम उस फकीर ने और अमीर की कहानी में उस जगह हैं, जहां थैली फकीर ले भागा है। भला फकीर था। थैली पटक गया। हमारा मन भी ले भागा है, सब कुछ। पता नहीं, पटकेगा, नहीं पटकेगा। लेकिन पटक सकता है। थोड़ी तैयारी हमें दिखानी पड़े।

उस फकीर ने थैली कब पटकी? जब अमीर ने और दौड़ने की हिम्मत छोड़ दी। जब अमीर बिलकुल थक गया, तो उस फकीर ने झोली पटक। अगर हम भी बिलकुल

थक गए हों, तो हमारा मन झोली पटक सकता है। और हम उसे उपलब्ध हो सकते हैं, जो संपदा है, समाधि है। जो सत्य है, जो परमात्मा है। अगर जिस दिन हम उसे पा लेंगे, उस दिन कहेंगे, बहुत आनंद मिला और साथ यह भी कहेंगे, बड़ी आश्चर्य की बात है। लेकिन जो मिला है, यह सदा से मेरा ही था, बिलकुल मुझे कभी पता न था।

समाधि उसकी खोज है, जो हमें मिला ही हुआ है। समाधि पुर्नस्मरण है, रिमेंबरिंग है। याद है उसकी, जो हमारा ही है। लेकिन यह खो देना भी जरूरी है।

क्या करें, इस समाधि को लाने के लिए? बहुत कुछ नहीं किया जा सकता। इतना ही कर सकते हैं कि अपने को रिसेप्टिव बना लें, अपने को खुला छोड़ दे और अगर आता हो सत्य तो आ जाए, और परमात्मा अगर आता हो तो आ जाए। इतना ही करें।

मैंने सुना है कि एक आदमी, एक रात एक झोपड़े में बैठकर, छोटे से दिए को जला कर, कोई शास्त्र पढ़ रहा था। फिर आधी रात गए थक गया। फूंक मार के दिया बुझा दिया। और तब बड़ा हैरान हो गया। जब तक दिया जल रहा था, पूर्णिमा का चांद बाहर ही खड़ा था, भीतर न आया। जब दिया बुझ गया, उसकी धीमी सी टिमटिमाती लो खो गयी, तो चांद की किरण भीतर भर आयी द्वार, खिड़की खिड़की, रंध्र रंध्र से—चांद भीतर नाचने लगा। वह आदमी बहुत हैरान हो गया। उसने कहा, एक छोटा सा दिया इतने बड़े चांद को बाहर रोके रहा।

हमने भी बहुत छोटे-छोटे दिए जलाए हैं, अपने अहंकार के, मैं के, उनकी वजह से परमात्मा का चांद बाहर ही खड़ा रह जाता है। समाधि का अर्थ है, फूंको और बुझा दो इस दिए को। हो जाने दो अंधेरा। मिटा दो यह ज्योति, जिसे समझा है मैं। और तत्काल चारों तरफ से वह आ जाता है, सब तरफ से आ जाता है। जो हमारे इस छोटे से अहंकार ने, मैं ने, रोक रखा है। इसलिए समाधि के तीन चरण मैंने आपसे कहे—अंधकार, अकेला होना और मिट जाना। बुझ जाए दिया, प्रकाश परमात्मा का तत्काल मिल जाता है।

पहला चरण है अंधकार। अगर कोई पहले चरण को हो पूरा कर ले, तो सब बात हो जाए। अगर कोई पूरे अंधकार में ही डूब जाए पूरी तरह, तो खुद भी मिट जाए अंधेरा ही रह जाए। पहला चरण भी पूरा हो गया, तो सब बात हो जाए, लेकिन वह पूरा नहीं हो पाता है, इसलिए दूसरा करना पड़ता है। दूसरा भी पूरा हो जाए जाए कि सच में ही मुझे ज्ञात हो जाए कि मैं बिलकुल अकेला हूं, तो वह हमें मिल जाएगा और सदा से अकेला ही है, लेकिन वह भी नहीं हो पाता है। इसलिए तीसरा चरण उठाना पड़ता है। मिट गया हूं, अगर मिट जाऊं पूरा, तो अभी मिल जाए यह जिसकी तलाश है। वह खुशी, जो मुझे कभी न मिली, क्योंकि मैं ही तो दुख का कारण था, मुझे खुशी मिलेगी भी नहीं। रोशनी जो मुझे दिखायी न पड़ी क्योंकि मैं ही तो टिमटिमाता दिया था, जिसने कि बड़े सूरज का रोक दिया। वह स्वर, वह संगीत, जो मुझे कभी सुनायी न पड़ा, अभी सुनायी पड़ जाए, लेकिन मेरे मैं की धुन

बहुत मजबूत है। और उसी में हम लीन हैं। वहां भीतर मैं और मैं और मैं कह चले जा रहे हैं।

कबीर ने कहा है—कि देखो था एक बकरा जो मैं मैं मैं मैं किया जाता था। फिर मर गया वह बकरा। उसकी चमड़ी से किसीने तानपूरे के तार बना लिए, और मैं उस रास्ते से गुजरता था मैंने उस तानपूरे पर ऐसा गीत सुना, जो मैंने कभी न सुना। तो मैंने रोका उस आदमी को और कहा कि कहां से पाए यह तानपूरे? उसने कहा, देखा नहीं, एक बकरा था यहां जो मैं, मैं, मैं किए जाता था। वह वही है, मर गया, मैं करने वाला। तानपूरे का तार हो गया। अब बड़ा संगीत पैदा हो रहा है। लेकिन जब तक मैं मैं पैदा होती थी, तब तक संगीत पैदा नहीं होता था।

वह मैं मैं भीतर हम कहे जा रहे हैं। तो हम वीणा नहीं बन पाते परमात्मा की कि उसमें वह संगीत पैदा हो जो। लेकिन हो सकता है। कबीर खूब हंसने लगे कि यह तो खूब रही जिंदा बकरा संगीत न गा सका, मैं मैं करता रहा, और मरा बकरा संगीत पैदा कर रहा है! कबीर ने लौट के अपने साथियों से कहा कि क्या अच्छा न हो कि हम भी मर जाएं? छोड़ दें मैं मैं, मर जाएं। अभी मैं देखकर आ रहा हूं चमत्कार। एक जिंदा बकरा कभी गीत न गा सका, मर के गीत गा रहा है। तो हम भी मर जाए न!

वही मैं कह रहा हूं कि मिट जाएं, न तब फिर रह जाए संगीत, हमारे मिटते ही रह जाता है। मिटने के तीन चरण हम उठाएंगे—

पहले चरण में पांच मिनिट तक परिपूर्ण अंधकार का भाव करेंगे—ध्यान रखें, कोई किसी को छू न रहा हो। अगर छू रहा हो, तो थोड़ा हटकर बैठ जाएंगे। कोई भी किसी को छुआ हुआ नहीं हो।

आंख बंद...कर लें...शरीर ढीला छोड़ दें...शरीर ढीला छोड़ दें...आंख बंद कर लें... और देखें, अंधकार ही अंधकार हैं, चारों ओर अंधकार ही अंधकार है। अनंत अंधकार है...सब और...सब दिशाओं में...अंधकार ही अंधकार है। भाव करें...देखें...अनुभव करें...अंधकार ही अंधकार है...सब मिट गया, बस अंधकार ही अंधकार रह गया। चारों और धुप्प अंधकार है...इस अंधकार को पांच मिनट तक अनुभव करते रहें...अंधकार ही अंधकार है...न कुछ सूझता...न कुछ दिखाई पड़ता...बस, अंधकार ही अंधकार है...और जैसे-जैसे अंधकार गाढ़ा होगा...और जैसे-जैसे अंधकार घना होगा...और जैसे-जैसे अंधकार ही अंधकार रह जाएगा...वैसे-वैसे अपूर्व शांति सब तरफ से उतरने लगेगी...रोएं-रोएं में...हृदय की धड़कन धड़कन में...श्वास-श्वास में...शांति उतर आएगी...देखें...अनुभव करें...अंधकार ही अंधकार है...अंधकार ही....अंधकार है। एक पांच मिनट के लिए...बस अंधकार को ही देखते रहें...और देखते-देखते ही मन शांत हो गया...।

अंधकार ही...अंधकार है...अहंकार ही....अंधकार है। अनंत अंधकार है...सब ओर...अहंकार है...अंधकार ही...अंधकार है। और मन शांत हो रहा है।...मन शांत हो रहा है ...मन शांत हो रहा है...मन शांत हो रहा है... बिलकुल शांत हो गया...

मन शांत हो गया...मन शांत हो गया...मन शांत हो गया...अंधकार ही अंधकार है... अंधकार है...चारों ओर अंधकार है...अंधकार के अतिरिक्त तो कुछ भी नहीं...मन श ांत हो गया है...मन शांत हो गया है...अंधकार ही अंधकार है...बस केवल अंधकार है...और मन शांत हो गया...मन शांत हो गया...मन शांत हो गया...

मन शांत हो गया है...मन बिलकुल शांति हो गया है...मन शांत हो गया है...मन शां त हो गया है...मन शांत हो गया है...मन शांत हो गया...मन शांत हो गया...

अंधकार ही...अंधकार है...चारों ओर...अंधकार है...अनंत अंधकार है...और मन, और मन...बिलकुल शांत हो गया...मन शांत हो गया है...मन शांत हो गया...मन शांत हो गया, मन शांत हो गया है...

इस अंधकार को ठीक से पहचान लें...समाधि का पहला चरण है...परिपूर्ण अंधकार। जहां कुछ देखने को नहीं...जहां कुछ देखने को नहीं—अंधकार...केवल अंधकार है।...अ ौर मन शांत हो गया...।

अब धीरे-धीरे आंखें खोल लें...जैसी शांति भीतर है, वैसी ही बाहर भी दिखायी पड़े गी। धीरे-धीरे आंख खोलें...बाहर भी सब शांत है... धीरे-धीरे आंख खोल लें...

फिर दूसरा चरण समझें, और उसके लिए बैठें।

समाधि का दूसरा चरण है, अकेले होने का बोध। अकेले होने से ज्यादा सुंदर कुछ भ ी नहीं है।

मैंने सुना है कि किसी देश में, किसी गरीब माली के घर में बहुत से सुंदर फूल खि लते हैं। सम्राट तक खबर पहुंच गयी...सम्राट भी प्रेमी था फूलों का।...उसने कहा, मैं भी आऊंगा कल सुबह, जब सूरज उगेगा—तेरी बगिया में फूल देखने मुझे भी आना है। माली ने कहा, स्वागत है आपका। दूसरे दिन सुबह सम्राट पहुंचा। वजीरों ने कह ा, मित्रों ने कहा, हजारों फूल खिले हैं। लेकिन जब सम्राट पहुंचा तब बहुत चकित रह गया। सारे बगीचे में बस डंठल पर एक ही फूल था। सम्राट ने माली से कहा था , मैंने तो सुना था, बहुत फूल खिले हैं। वे सब फूल कहां हैं?

वह माली हंसने लगा, उसने कहा, भिड़ में सौंदर्य कहां? एक को ही बचा लिया है। क्योंकि सुना है जानने वालों से कि अकेले के अतिरिक्त और सौंदर्य कहीं भी नहीं है। पता नहीं वह सम्राट समझा या नहीं समझा। लेकिन निश्चित ही यह माली फूलों का माली न रहा होगा, वह आदमियों का भी माली रहा होगा।

जीवन में जो भी सुंदर है, वह अकेले में ही खिलता है, फूलता है, सुगंधित होता है। जीवन में जो भी श्रेष्ठ है, वह अकेले में ही पैदा हुआ है। भीड़ ने कुछ भी महान को जन्म नहीं दिया। न कोई गीत, न कोई सौंदर्य, न कोई सत्य, न कोई समाधि, नहीं, भीड़ में कुछ भी पैदा नहीं हुआ है। जो भी जन्मा है, एकांत, अकेले में जन्मा है। लेकिन हम अकेले होते ही नहीं। हम सदा भीड़ में घिरे हैं—या बाहर की भीड़ से घिरे हैं, या भीतर की भीड़ से घिरे हैं। भीड़ से हम छूटते ही हनीं। क्षण भर को अकेले नहीं होते।

इसलिए जो भी महत्वपूर्ण है जीवन में, वह चूक जाता है। समाधि में तो केवल वे ही जा सकते हैं, जो बाहर की ही भीड़ से ही नहीं भीतर की भीड़ से भी मुक्त हो जाते हैं। बस अकेले रहें। निपट अकेले, टोटली अलोन। कुछ नहीं, बस अकेला हूं, अकेला हूं, अकेला हूं। सत्य भी यही है। अकेले ही जन्मते हैं, अकेले ही मरते हैं, अकेले ही होते हैं। लेकिन भीड़ का भ्रम पैदा कर लेते हैं। क्योंकि चारों तरफ भीड़ है। उस भीड़ के बीच इस भांति खो जाते हैं कि कभी पता ही नहीं चलता कि मैं कौन हूं।

दूसरा चरण है—अकेले हो जाने का मात्र। पांच मिनट तक हम अकेले हो जाने का भाव करेंगे। आंख बंद कर लें—शरीर को ढीला कर दें—आंख बंद कर लें, शरीर को ढीला छोड़ दें...एक मिनट तक अंधकार का भाव करें...चारों ओर अंधकार ही अंधकार है...अनंत अंधकार है...अंधकार, अंधकार, अंधकार...न कुछ दिखायी पड़ता है, न कुछ सूझता है...बस, अंधकार ही अंधकार है...

कुछ भी दिखायी नहीं पड़ता...लेकिन मैं हूं, अंधकार है और मैं हूं, और मैं बिलकुल अकेला हूं। न कोई संगी है, न कोई साथी है...अकेला हूं, बिलकुल अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...श्वास-श्वास में...शरीर के रोएं-रोएं में...मन के कोने-कोने में ...बस एक ही भाव बैठ जाने दें कि मैं अकेला हूं...अकेला हूं...मैं अकेला है...और जैसे-जैसे यह भाव गहरा होगा, वैसे-वैसे अपूर्व शांति जन्म ले रहेगी, भीतर सब शांत हो जाएगा...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...न कोई संगी...न कोई साथी...रास्ता सुना है ...निर्जन है...पांच मिनट के लिए...बिलकुल अकेले हो जाएं...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...

मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...

मन बिलकुल शांत हो गया है...मन बिलकुल शीतल और शांत हो गया है...। मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...

मन शांत हो गया है...मन बिलकुल शांत हो गया है...मन शांत हो गया है...मन शांत हो गया है...मैं अकेला हूं...डूब जाए, बिलकुल डूब जाएं...अंधेरा है...मैं अंधेरा हूं... मैं अकेला हूं...कोई नहीं है...कोई नहीं...कोई संगी नहीं...साथ नहीं...मैं अकेला हूं...और अकेले होते-होते सब शांत हो जाता है।

मन शांत हो गया...मन शांत हो गया।

मन शांत हो गया है...मन शांत हो गया है...मन बिलकुल शांत हो गया...मन शांत हो गया है...मन शांत हो गया...मन शांत हो गया...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं... मैं अकेला हूं,...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...और जैसे-जैसे अकेले हो जाएं वैसे-वैसे ही शांत हो जाएंगे...श्वास-श्वास शांत हो गयी है...रोएं-रोएं शांत हो गए हैं...मन शांत हो गया...

मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...

देखिए, भीतर देखिए, सब कैसा शांत हो गया है...सब कैसा शांत हो गया। इस अके
ले होने को ठीक से पहचान लें। समाधि का दूसरा चरण है, ठीक से पहचान लें कि
न होना क्या है...यह अकेले होने की शांति क्या है।
मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...और मन शांत हो गया...
मन शांत हो गया है...मन शांत हो गया है...मन शांत हो गया है...
अब धीरे-धीरे आंख खोलें। जैसी शांति भीतर है...वैसी ही शांति बाहर है। और जो
भीतर अकेला होना पहचान ले, वह फिर बाहर की भीड़ में ही अकेला है। देखें, आं
ख खोलें, बाहर देखें...कितने लोग हैं चारों ओर, लेकिन फिर भी मैं तो अकेला हूं।
धीरे-धीरे आंख खोलें...देखें, कितने लोग हैं चारों और...फिर भी, मैं तो अकेला हूं...
अब तीसरे प्रयोग...को समझें—फिर उसे करें।
तीसरा प्रयोग है मरने को, मिटने का, न कुछ हो जाने का।
जाता था कोई बुद्ध के पास। पूछता था, ज्ञान कहां पाए। बुद्ध कहते, चले जाओ मर
घट में। चौंकता वह आदमी। सोचता, सुनने में भूल रह गयी। फिर पूछता, समझा न
हीं। आनंद पाना है, सत्य पाना है। कहां जाऊं, कैसे पाऊं? बुद्ध कहते, मरघट में।
तब भूल की गुंजाइश न रहती। सोचता, शायद मजाक करते हैं। लेकिन बुद्ध हंसते
और कहते, मजाक नहीं करता। जाओ, महीने दो महीने, चार महीने मरघट में ही
रह जाओ। अनेक भिक्षुओं को मरघट में रहने को भेजते थे। सोचें, तीन चार महीने
मरघट में रहना पड़े आपको, सुबह सांझ, सांझ से सुबह। सूरज भी वहीं निकले, सूर
ज वहीं ढले। रात वही आए, दिन वहीं आए, सांझ वहीं, सुबह वहीं। अंधेरा वहीं घि
रे, प्रकाश वहीं फैले, और दिन भर कोई आए, रोते हुए लोग आए, लाशें आए, अर्
थियां आए,आग पर चढ़ें, चिंताएं जलें, और दिन भर यही चले और आप देखते रहें
देखते रहें।
क्या यह असंभव है कि कुछ दिन में, किसी क्षण, आपको वह खयाल आ जाए कि
यह और कोई नहीं जल रहा है, मैं ही जल रहा हूं। समय का थोड़ा फासला है। आ
ज जो जल रहा है, कल मैं जलूंगा। क्या मुश्किल है मरघट पर खयाल न आ जाए!
और जिसे यह खयाल आ जाए कि मैं ही मरूंगा, उसकी जिंदगी में बड़ा फर्क पड़
जाता है। तब फिर वह वैसा ही हनीं जीता, जैसा कल तक जीता था। और जिसे य
ह खयाल आ जाए, मैं मरूंगा ही, उसे यह भी पता चल जाता है कि जो मरेगा ही,
वह मरा हुआ होगा ही, अन्यथा मरेगा कैसे? और जिसे यह खयाल आ जाए कि
कुछ है मेरे भीतर, जो मरेगा ही, उसकी यह खोज भी शुरू हो जाएगी कि होगा ज
रूर कुछ शायद हो या न हो। पता तो लगाएं, जो नहीं मरेगा। लेकिन इसका पता
तो बिना मेरे कैसे लगे? मरे तो पता लगेगा कि कुछ बचता है कि नहीं बचता है।
तो समाधि का गहरा से गहरा जो चरम है, वह है मर जाने का प्रतीक, मर गया हूं
...समाप्त हो गया हूं।
और जैसे ही कोई देख ले, अपने को मरा हुआ, पड़ा हुआ वैसे ही उसे उसकी पहचा
न भी हो जाती है, जो देख रहा है। खुद को ही मरा हुआ जो देखता है, वह मैं नह

ीं हूं। वह वहीं है, जो है, या ऐसा कहें वही मैं हूं, जो असली मेरा मैं है। जो देखता है, वह जानता है। जो मरते समय यह भी देखेगा कि मैं मर रहा हूं।

सुकरात मरा था—जहर दिया था उसे। लेट गया था जहर पीकर। मित्र रो रहे थे, चारों तरफ। सुकरात कहता था, रोओ मत। देखो मैं मर रहा हूं। लेकिन उन्हें कहां फुर्सत थी, देखने की। सुकरात कहता था, देखो मेरे पैर तक, मैं मर गया हूं। घुटने तक मर गया हूं, अब घुटने तक मुझे पता नहीं चलता कि शरीर है, लेकिन बड़ा आश्चर्य। घुटने तक मैं मर गया हूं, लेकिन मैं तो जितना था उतना अब भी मालूम हो रहा हूं। फिर सुकरात कहने लगा कि कमर तक मर गया हूं—अब कमर तक मुझे पता नहीं चलता। लेकिन सुनो, आश्चर्य, मैं तो उतना ही हूं जितना था। फिर सुकरात कहने लगा, हाथ भी शिथिल हो गया। हाथ भी मर गया। अब हाथ हिला नहीं सकता, लेकिन मैं तो अब भी हूं। जो हाथ को हिलाता था, वह अब भी है। तब सुकरात कहने लगा, जल्दी ही हृदय की धड़कन भी बंद हो जाएगी। शायद मैं तुमसे कहने को न बचूं कि अब भी हूं। लेकिन जब पैर मरने पर मैं नहीं मरा, जब हाथ के मरने तक नहीं मरा। जब कमर तक सब समाप्त हो गया, मैं नहीं मरा—मगर मेरी आंखें नहीं खुल रहीं और मैं हूं, तो शायद जब मेरा हृदय भी बंद हो जाएगा, तब भी मैं होऊंगा। लेकिन मैं शायद बचूं न कहीं।

ध्यान की, समाधि की गहरी प्रतीतियां ऐसा ही होगा, लगेगा, यह रहा शरीर, मर गया। यह पड़ा है शरीर, यह धड़कन चल रही है, दूर हमसे मिलों फासले पर। यह श्वास भी चल रही है, लेकिन जैसे कोई और लेता हो, और यह रहा मैं, और देखता हूं, जानता हूं, साक्षी हूं, मैं कुछ और हूं, और जिसे मैंने समझा था कि मैं हूं, वह मैं नहीं हूं। लेकिन, तीसरा प्रयोग गहरे में खयाल में उतरे बिना नहीं आ सकता है। इसलिए अब हम तीसरा प्रयोग करें, फिर चौथे प्रयोग में तीनों प्रयोगों को इकट्ठा करेंगे।

आंख बंद कर लें, शरीर को ढीला छोड़ दें।

आंख बंद कर लें, शरीर को ढीला छोड़ दें। एक मिनट देखें, अंधकार ही अंधकार है ...चारों ओर अंधकार ही अंधकार है...चारों और अंधकार ही अंधकार है...अनंत अंधकार है।

एक मिनट जाने, मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं।...मैं अकेला हूं।

और तीसरा प्रयोग करें—मैं मर गया हूं...भाव करें, मैं मर रहा हूं...यह शरीर, यह श्वास, यह प्राण, यह दर्शन यह सब जा रही है, सब जा रही है...मैं मर रहा हूं, मैं मर रहा हूं...में मिटता जा रहा हूं...मैं मर रहा हूं...मैं मिट रहा हूं...मैं समाप्त हो रहा हूं...मैं मर गया हूं, मैं हूं ही हनीं...मैं मिट गया हूं,...मैं नहीं हूं...पांच मिनट के लिए न होने में डुब जाएं।

मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं। और जैसे-जैसे डूबेंगे, वैसे ही अपूर्व शांति सब तरफ से घेर लेगी।

मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं हूं ही नहीं...

मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...
मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं, और मैं बिलकुल शांत हो गया है...
मन शांत हो गया है...मन शांत हो गया है...
मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हू मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...
मन शांत हो गया है...मन बिलकुल शांत हो गया है...मन शांत हो गया है...मन शांत हो रहा है...मन शांत हो गया है...मन शांत हो गया है...मन शांत हो गया है...मन शांत हो गया है।
मन शांत हो गया है...मन शांत हो गया है...मन बिलकुल शांत हो गया है...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...
मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं।
मन शांत हो रहा है...मन शांत हो गया है...मन शांत हो गया है।
मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं बिलकुल नहीं हूं।
मन शांत हो गया है...मन शांत हो गया है...मन शांत हो गया है...मन शांत हो गया है...मन शांत हो गया है...
मैं नहीं हूं, वही रह गया है जो सदा है...मैं नहीं हूं, वही बच रहा है जो सदा है...मैं नहीं हूं...लहर खो गयी...सागर ही रह गया। लहर खो गयी...सागर ही रह गया...
इस भाव को ठीक से पहचान लें, समाधि का तीसरा चरण। इसको ठीक से प्राणों में सम्हाल लें। मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...वही रह गया है...वही रह गया है...जो है...जो सदा है...जो सब में है।
फिर धीरे-धीरे आंख खोलें—देखें, सदा देखा है, मैं था, ऐसे आंख खोलें। ऐसे देखें, जैसे मैं नहीं हूं। तब भीतर से वही देखता है, जो बाहर भी दिखायी पड़ता है। धीरे-धीरे आंख खोलें। देखें ऐसे, जैसे मैं नहीं हूं। सब वही है भीतर और वही है बाहर। वही है देखने वाला, वही है जो दिखायी पड़ रहा है। धीरे-धीरे आंख खोलें।
यह तीन चरण हैं—समाधि इन तीनों को इकट्ठा प्रतिफलन, इकट्ठा जोड़ है। एक ही साथ अंधेरा, अकेला होना और फिर मिट जाना। इन तीनों को इकट्ठा करेंगे और जब तीनों इकट्ठा करें तो परिपूर्ण भाव से कर जाएं...पूरे भाव से छोड़ ही देना है, अपने को। कुछ बचाना ही नहीं...छोड़ देना, छोड़ ही देना...सब छोड़ देना। ताकि वही रह जाए जिसे हम छोड़ना ही चाहें, तो नहीं छोड़ सकते।
आंख बंद कर लें...शरीर को ढीला छोड़ दें और समाधि मग प्रवेश करने की तैयारी करें। शरीर को ढीला छोड़ दें। आंख बंद कर लें। शरीर गिरे तो गिर जाए, चिंता न करें, झुके तो झुक जाए, चिंता न करें। ढीला छोड़ दें, आंख बंद कर लें।
पहला चरण—अंधकार ही अंधकार है...बस अंधकार ही अंधकार है। चारों ओर अंधकार ही अंधकार है...
छोड़ दें...बिलकुल अंधेरे में छोड़ दें...चारों ओर अंधकार ही अंधकार है, अंधकार ही अंधकार है। शरीर शिथिल होता जाएगा...छोड़ें दें, शरीर शिथिल हो रहा है...शिथि

ल हो रहा है...सब शिथिल हो जाएगा...अंधकार ही अंधकार है...और सब शांत हो गया है। श्वास भी धीमी और शांत हो जाएगी...उसे भी छोड़ दें...मैं अकेला हूं...मैं ि बलकुल अकेला हूं...कोई संगी नहीं है, कोई साथी नहीं है...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...

और मैं भी खोता जा रहा हूं...जैसे बूंद सागर में गिर और खो जाए...मैं भी खो रहा हूं...मैं भी मिट रहा हूं...मैं भी मर रहा हूं...सब समाप्त होता जा रहा है। मैं मर र हा हूं, मैं सर रहा हूं... मैं मिट रहा हूं।...न यह शरीर हूं मैं, न यह श्वास हूं मैं...न यह मन हूं मैं...यह सब मिट रहा है...यह सब समाप्त हो रहा है...यह सब मर रहा है...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...छोड़ दें, अपने को बि लकुल छोड़ दें...मिट जाए...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं—और भीतर और भीत र, और गहरे में छोड़ दें अपने को...कहीं कोई पकड़ न रखें, मिट ही जाएं...मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं।

सब शांत...सब मौन हो गया है...सब शांत, सब मौन हो गया है...सब शून्य हो गया है। इसी शून्य में जागता है, इसी शून्य में उठता है आनंद...सब तरह से घेर लेगा शांति और आनंद, सब तरफ बरसने लगेंगे। मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं मिट गया हूं.. .मैं समाप्त हो गया हूं...।

एक अपूर्व शांति अपूर्व आनंद की लहर दौड़ने लगेगी।

मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं, वही रह गया जो सदा है...वही रह गया है जो मे रे पहले था और बाद भी होगा। मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं। मैं नहीं हूं...

मन शांत हो गया... प्राण शांत हो गया...सब शांत हो गया है...आत्मा की झील पर कोई लहर नहीं...सब शांत हो गया है। आत्मा लहर पर...आत्मा के सागर पर एक भी लहर नहीं है, सब शांत हो गया है।

और पहचानें, देखें और भीतर कैसा आनंद...पहचानें भीतर कौन है यह जो जान रह ा, देख रहा, कौन है यह साक्षी, जो स्वयं को ही मरा हुआ देख रहा है...कौन है? भीतर, और भीतर और भीतर देखो...कौन है, जो जान रहा...कौन है जो ज्ञाता है... कौन है, जो द्रष्टा है...

यही है...यह है सत्य...

आत्मा आनंद में फर्क नहीं है।

अब धीरे-धीरे दो चार गहरी श्वास लें...प्रत्येक श्वास शांति से, आनंद से भरी हुई लगेगी। धीरे-धीरे दो चार गहरी श्वास लें...धीरे-धीरे दो चार, गहरी श्वास लें...प्रत्ये क श्वास शांति और आनंद से भर गयी है...फिर धीरे-धीरे आंख खोलें...जो भीतर है , वही बाहर भी है।

इस प्रयोग को रात सोते समय करें और करते करते ही सौ जाएं और ऐसा न सम झें कि मेरे साथ दो चार दिन कर लिया तो हो गया। इसे रोज करते रहें, रात सोते वक्त। धीरे-धीरे गहरे से गहरे उत्तर जाएगा...और आप कब दूसरे आदमी हो गए, यह आपको पता ही न चलेगा। कब कली पूर्ण बन गयी, कहां पता चलता है? कब

पक्षी उड़ गया और पंख फैला दिया आकाश में, कब पता चलता है? लेकिन जब फैल जाते हैं आकाश में पंख, तो सब बदल जाता है। एक जिंदगी है जमीन से सरक ने की और एक जिंदगी है मुक्त आकाश में उड़ने की और जब खिल जाती है कली , शोर नहीं होता है, आवाज नहीं होती है। किसी को पता नहीं चलता है, कहीं ख टका नहीं होता है। लेकिन सुगंध बिखर जाती है चारों ओर और धन्य हो जाता है फूल खिलकर पूरा—आनंद से विभोर और प्रभु के चरणों में समर्पित हो जाता है।
धीरे-धीरे रोज करते रहें रत सोते समय—कभी भी, कभी भी घटना घट सकती है।
और कल के लिए एक सूचना—तीन रात हमने ध्यान किया। हम समझ गए कि क्या करना है। कल एक चौथा अलग ही प्रयोग करेंगे। लेकिन कल सिर्फ वे ही लोग आ एंगे जो तीन दिन आए हैं, किन्हीं नए मित्रों को न ले आएं। कल होगा मौन, पूरे घं टे भर। साइलेंस कम्युनिकेशन, शब्द से बहुत कुछ कहता हूं। लेकिन जो कहने योग्य है, वह शब्द से नहीं कहा जा सकता है। तीन दिन हम चुप बैठे हैं। कल घंटे भर मे रे पास चुप बैठेंगे, न मैं बोलूंगा कुछ, न आप बोलेंगे कुछ। लेकिन फिर भी मैं बोलूंग ा इसी मौन से, और फिर भी आप सुनेंगे इस मौन से। चुप चाप बैठ के सुनने को प्र तीक्षा भर करना, शांत हो जाना। जैसे हम ध्यान करते हैं, ऐसा ही चुपचाप घंटे भर कल बैठेंगे। मैं मौजूद रहूंगा। किसी के भीतर अचानक लगे कि मेरे पास आना है तो वह चुपचाप मेरे पास जाएगा। दो मिनट मेरे पास बैठेगा और अपनी जगह लौट आएगा। लेकिन कोई आ रहा है दूसरा, यह देख के कोई न आए। किसी को आने जैसा लग जाए, तो आ जाए और किसी को आने जैसा लगे तो संकोच में रुके भी न, आ ही जाए।
21 मार्च 40, पूना

एकाकी भाव

एक फकीर के पास तीन युवक आए सत्य को जानने के लिए अपने को जानने के ि लए। उस फकीर ने कहा कि इसके पहले कि तुम अपने को जानने की यात्रा पर नि कलो, एक छोटा सा काम कर लाओ। उसने एक-एक कबूतर उन तीनों युवकों को दे दिया और कहा कि ऐसी जगह में जाकर कबूतर की गर्दन मरोड़ डालना जहां को ई देखने वाला न हो। पहला युवक रास्ते पर गया। दोपहर थी, रास्ता सुनसान था। लोग अपने घरों में सोए थे। देखा कोई भी नहीं है, गर्दन मरोड़कर भीतर आकर, फ कीर के सामने रख दिया। कोई भी नहीं था, रास्ता सुनसान है, लोग घरों में सोए हज, किसी ने देखा नहीं, कोई देखने वाला नहीं था। दूसरे युवक ने सोचा कि अगर रास्ते पर गर्दन मरोड़ूंगा तो पता नहीं, कोई बीच से निकल आए कोई खिड़की से झांक ले, वह एक गली में गया, लेकिन अभी दिन था। उसने सोचा रात तक रुक जाऊं, पता नहीं, कोई एकदम से गली में आ जाए। जहां मैं आ सका हूं वहां कोई दूसरा भी आ सकता है। उसने रात तक प्रतीक्षा की, जब अंधेरा हो गया तो उसने गर्दन मरोड़ी और गुरु के पास जाकर दे दिया।

लेकिन तीसरे युवक को पंद्रह दिन हो गए, वह अभी भी नहीं लौटा, अभी भी नहीं लौटा। दोनों युवकों को खोजने भेजा। वे कहीं से उसे पकड़कर लाए। वह बड़ी मुश्किल में था। वह अंधेरी रात में भी गया था। अंधेरी रात, गहरे से गहरे अंधेरे में भी बहुत कुछ था, जो उसे देख रहा था। चांद तारे देख रहे थे। तो उसने सोचा, नीचे एक तलघर में चला जाऊं। एक तलघर में गया। वहां चांद तारे तो न थे। लेकिन जब गहरे अंधेरे में जाकर उसने कबूतर की गर्दन पर हाथ रखा, तो कबूतर देख रहा था, उसकी दो आंखें चमक रही हैं। तो उसने फिर कबूतर की आंखें बांध दीं, ताकि कबूतर न देख सके और जब वह उसकी गर्दन को मरोड़ रहा था तब खयाल आया कि गहन अंधकार था, कोई भी न था, कबूतर की आंखें बंद थीं, लेकिन उसे खयाल आया कि मैं तो देख ही हरा हूं, और गुरु ने कहा था, कोई भी न देखता हो। तब वह मुश्किल में पड़ गया, और जब उसके साथी उसे पकड़ कर लाए, तो उसने कबूतर वापस लौटा दिया। उसने कहा, यह न हो सकेगा, क्योंकि मैं कितने ही अंधकार में चला जाऊं, कोई न देखे, कम से कम मैं तो देखूं, और आपने कहा था, जहां कोई भी न देखता हो। उस गुरु ने दो युवकों को तो विदा कर दिया कि तुम जाओ। तुम बहुत गहरी खोज न कर सकोगे। तीसरे युवक को रोक लिया, क्योंकि एक बहुत गहरे अनुभव पर वह पहुंचा था कि गहनतम अंधकार में भी, मैं तो शेष रह ही जाता हूं, देखने वाला।

समाधि का भी पहला चरण जहां अंधकार है, क्योंकि जब सब तरफ अंधेरा हो जाता है, तो चेतना को बाहर जाने का उपाय नहीं रहता। चेतना अपने पर वापस लौट आती है। इसलिए तो रात हम सोते हैं। अगर प्रकाश ही तो नींद में बाधा पड़ती है। क्योंकि चेतना को बाहर जाने के लिए मार्ग होता है। अंधकार हो तो चेतना अपने पर वापस लौट जाती है। अंधकार में मार्ग नहीं है कि सी ओर को देखने का, क्योंकि अपने को ही देखने की एक मात्र संभावना शेष रह जाती है। पर अंधकार के प्रति हमारा भय है। इसलिए हम अंधेरे में कभी भी नहीं जीते। अंधेरा हुआ कि तुम फिर सो जाएंगे। उजाला हो तो हम जी सकते है। इसलिए पुरानी दुनिया सांझ होते सो जाती थी, क्योंकि उजाला न था। अब नयी दुनिया के पास उजाला है कि वह रात को भी दिन बना ले। तो अब दो बजे तक एक दिन चलेगा। बहुत संभावना है कि धीरे-धीरे रात खत्म ही हो जाए, क्योंकि हम प्रकाश पूरा कर लें। अंधेरे में फिर हमें सोने के सिवाय कुछ भी नहीं सूझता, क्योंकि कहीं जाने का रास्ता नहीं रह जाता। लेकिन काश! हम अंधेरे में जाग सकें, तो हम समाधि में प्रवेश कर सकते हैं। पहले पांच मिनट हम गहन अंधकार में डूबेंगे। एक ही भाव रह जाए मन में कि अंधकार है, अंधकार है, चारों तरफ अंधकार है। सब तरफ अंधकार घिर गया और हम उस अंधकार में डूब गए, डूब गए। पूर्ण अंधकार रह गया है, और हम है। और अंधकार है। तो पांच मिनट पहले इस अंधकार के प्रयोग को करेंगे। फिर मैं दूसरा प्रयोग समझाऊंगा, फिर तीसरा और अंत में तीनों को जोड़कर हम ध्यान के लिए, समाधि के लिए बैठेंगे।

तो सबसे पहले तो एक दूसरे से थोड़ा-थोड़ा फासले पर हट जाए। चिंता न करें, बि छावन की, अगर नीचे भी बैठ जाएंगे, तो उतना हर्ज नहीं है जितना कोई छूता हो। क्योंकि कोई छूता हो, तो कोई मौजूद रह जाएगा। अंधेरा पूरा न हो पाएगा। तो ि बलकुल कोई न छूता हो, और इसका भी खयाल न रखें कि दूसरा हट जाए। दूसरा कभी नहीं हटेगा। स्वयं को ही हटना पड़ेगा। तो हट जाएं, वह जमीन पर चले जा ए, चाहे पीछे हट जाए। लेकिन कोई किसी को किसी भी हालत में छूता हुआ न हो ।

इतने धीरे न हटें, जमीन पर बैठ जाए तो क्या हर्जा हुआ जाता है। सहजता से हट जाए, एक भी व्यक्ति छूता न हो।

मैं मान लूं कि आप हट गए। कोई किसी को नहीं छू रहा है। अगर अब भी कोई छु आ हो, तो उठकर बाहर आ जाए और अलग बैठ जाए।

अब आंख बंद कर लें। आंख बंद कर लें, शरीर को ढीला छोड़ दें। शरीर ढीला छो. ड दिया हो, आंख बंद कर ली है। और देखे भीतर...अनुभव करें...अंधकार, महा अं धकार है...विराट अंधकार फैल गया है। चारों तरफ सिवाय अंधकार के और कुछ न हीं...अंधकार है...अंधकार है...बस, एकदम अंधकार ही अंधकार है। जहां तक खयाल जाता है, अंधकार, अंधकार, अंधकार...पांच मिनट के लिए इस अंधकार में डूबते जाएं, बस अंधकार ही शेष रह जाए। छोड़ दें, अपने को अंधकार में...और पांच मि नट के अंधकार का अनुभव मन को बहुत शांत कर जाएगा। समाधि की पहली सीढ़ ी खयाल में आ जाएगी। मृत्यु की भी पहली सीढ़ी खयाल में जा जाएगी।

अनुभव करें अंधकार का—बस अंधकार ही अंधकार है। चारों ओर मन को घेरे हुए सब तरफ अंधकार है...दूर-दूर तक घनघोर अंधकार है...कुछ भी दिखायी नहीं पड़ता ...कुछ भी नहीं सूझता...हम हैं और अंधकार है...पांच मिनट के लिए मैं चुप हो जा ता हूं। आप गहरे अंधकार को अनुभव करते हुए, अंधकार में डूब जाएं।

बस, अंधकार शेष रह गया है...अंधकार और अंधकार महा अंधकार...सब अंधेरा हो गया है...कुछ भी नहीं सूझता अंधकार है...जैसे अंधेरी रात ने चारों ओर से घेर लि या...मैं हूं, और अंधकार है।

अंधकार ही अंधकार है...डूब जाएं, छोड़ दें, बिलकुल अंधेरे में डूब जाए...अंधकार ह ी अंधकार शेष रह गया...अंधकार है, बस अंधकार है...अंधकार ही अंधकार है...अनु भव करते-करते मन बिलकुल शांत हो जाएगा...अंधकार ही अंधकार है...अंधकार ही अंधकार है...मन शांत होता जा रहा है...मन बिलकुल शांत हो जाएगा...अंधकार ह ी अंधकार है...छोड़ दें, अपने को अंधकार में बिलकुल छोड़ दें।

अंधकार ही अंधकार मैं...महान अंधकार ही अंधकार है...छोड़ दें, अंधकार मैं...महान अंधकार चारों ओर रह गया...मैं हूं और अंधकार है। न कुछ दिखायी पड़ता...कुछ भी दिखायी नहीं पड़ता...बस, अंधकार ही अंधकार मालूम होता है...डरें नहीं छोड़ दें , बिलकुल छोड़ दें...अंधकार ही अंधकार शेष रह गया है। और मन एकदम शांत ह

ो जाएगा...अंधकार परम शांतिदायी है। मन का कण कण शांत हो जाएगा...मस्तिष्क का कोना-कोना शांत हो जाएगा...अंधकार में डूब जाए...अंधकार ही अंधकार है... अंधकार ही अंधकार है...अंधकार ही अंधकार है...मन बिलकुल शांत हो गया है। मन शांत हो गया...मन शांत हो गया...अंधकार ही अंधकार है...चारों ओर अंधकार है ...मैं हूं, और अंधकार है। कुछ भी नहीं सूझता...कोई और दिखायी नहीं पड़ता...अंधकार है...अंधकार है...

मन शांत हो गया...मन बिलकुल शांत हो गया।

अब धीरे-धीरे आंखें खोले। बाहर भी बहुत शांति मालूम पड़ेगी। धीरे-धीरे आंखें खोलें फिर दूसरा प्रयोग समझें और उसे पांच मिनट के लिए करें।

समाधि की पहली सीढ़ी है, अंधकार का बोध। धीरे-धीरे आंख खोलें। बाहर भी बहुत शांति मालूम पड़ेगी। अब दूसरा चरण समझ लें--फिर पांच मिनट उसे हम करेंगे। जब कोई मरता है तो गहन अंधकार में चारों ओर से घिर जाता है। मृत्यु के पहले चरण पर अंधकार घेर लेता है। वह सारा जगत, जो दिखायी पड़ता था, जो जाता है। वे सब प्रियजन, मित्र, अपने पराए, वे जो चारों तरफ थे, सब खो जाते हैं और अंधकार का पर्दा चारों तरफ से घेर लेता है। लेकिन हम अंधकार से इतना डरते हैं कि उस डर के कारण बेहोश हो जाते हैं। काश, हम अंधकार को भी प्रेम कर पाएं, तो मृत्यु में बेहोश होने की जरूरत न रह जाए। और समाधि में जिन्हें जाना है, उन्हें अंधकार को प्रेम करना सीखना पड़ेगा। अंधकार का आलिंगन करना सीखना पड़े। अंधकार में डूबने की तैयारी दिखानी पड़े। इसलिए पहले चरण में पांच मिनट अंधकार को अपने चारों ओर घेरा हमने देखा।

अब दूसरी बात समझ लेनी चाहिए। मृत्यु का, या समाधि का दूसरा चरण है, एकाकीपन का बोध--मैं अकेला हूं। मृत्यु का दूसरा चरण है, एकाकीपन का बोध--मैं अकेला हूं। मृत्यु के दूसरे चरण में अंधकार के घिरते ही पता चलता है कि मैं अकेला हूं। कोई भी मेरा नहीं, कोई भी संगी नहीं, कोई भी साथी नहीं। लेकिन जीवन भर हम इसी ढंग से जीते हैं कि लगता है, सब है मेरे--मित्र हैं, प्रियजन हैं, अपने हैं। अकेला हूं, इसका कभी खयाल भी ही आता। अगर खयाल आए भी किसी को तो जल्दी किसी को अपना बनाने निकल पड़ता है, ताकि अकेलेपन का खयाल न आए। बहुत कम लोग बहुत कम क्षण पर, अकेले होने का अनुभव कर पाते हैं। और जो मनुष्य अकेले होने का अनुभव नहीं कर पाता, वह अपना अनुभव न कर पाए। जो व्यक्ति ऐसा निरंतर सोचता है कि दूसरे से जुड़ा हूं, दूसरे से जुड़ा हूं, दूसरे हैं संगी हैं, साथी हैं, उसकी नजर कभी अपने पर नहीं जा पाती। मृत्यु का भी दूसरा अनुभव जो है, वह अकेले का अनुभव है। इसलिए मृत्यु हमें बहुत डराती है। क्योंकि जिंदगी भर हम अकेले न थे और मृत्यु अकेला कर देगी। असल में मृत्यु का डर नहीं है, डर है अकेले होने का। अभी अकेले हो के हम डरते हैं। कोई साथ हो तो डर नहीं और मजा यह है कि दो आदमी साथ हैं, वे दोनों अकेले में डरते हैं। दोनों मिल जाएंगे, तो डर दुगुना होगा कि आधा होगा। दो आदमी दोनों अकेले में डरते हैं, लेि

कन दोनों मिलकर सोचते हैं कि दूसरा है, डर नहीं है। दूसरा भी सोचता है, दूसरा है। डर हनीं है। डर सिर्फ दुगुना हो गया है। लेकिन एक दूसरे के साथ हम सोच लेते हैं।आदमी अंधेरी गली में से निकलता है, तो डरता है। तो जोर से गीत गाने लगता है, भगवान का नाम लेने लगता है। अपनी ही आवाज सुनकर ऐसा लगता है कि कोई है।

अकेले का भय—लेकिन जो अकेले होने को राजी नहीं, टोटली अलोन वह समाधि में नहीं जा सकता है, क्योंकि समाधि में कौन साथ देगा? पत्नी कैसे समाधि में साथ देंगी, पिता कैसे साथ जाएगा, पति कैसे साथ जाएगा, गुरु कैसे साथ जाएगा, दोस्त कैसे साथ जाएगा। समाधि में तो कोई भी नहीं जाएगा। समाधि में तो बिलकुल अकेले जाना होगा। इसलिए जो जितना एक्सट्रोवर्ट है, जो अपने से बाहर के लोगों से, जितना जोड़ रखता है, अपने को, कभी अकेला नहीं होता, वह आदमी समाधि में पहुंचने में, उतनी ही मुश्किल अनुभव करता है। अगर कभी हम अकेले छूट भी जाए सौभाग्य से, तो जल्दी से अपने को भर लेते हैं, रेडियो खोल लेंगे, अखबार पढ़ने लगेंगे, कुछ न कुछ करने लगेंगे, सिगरेट पीने लगेंगे। यह सिर्फ अकेलेपन से बचने के उपाय है। यहां तक कि लोग अकेले ही बैठ के ताश खेलने लगेंगे, अकेले ही आदमी हैं, दोनों तरफ से बाजियां चलने लगेंगी, दूसरे को कल्पित कर लेगा कि कोई है। अकेला होने से हम इतना भयभीत हैं, तो फिर हम समाधि में प्रवेश नहीं कर सकते।

और अकेले होने का सौंदर्य अदभुत हैं। मेरा मतलब यह नहीं कि कोई समाज से भाग जाए। समाज से जो लोग भाग जाते हैं, वह भी अकेले नहीं है, क्योंकि जिसे वे छोड़ के भागते हैं वह उसके मन में साथ चला जाता है। वे जंगल पहाड़ पर बैठ कर, आपकी ही याद कर रहे हैं। क्योंकि अगर आपको वह भूल सकते, तो यहीं भूल सकते थे। जंगल पहाड़ जाने की कोई भी जरूरत न थी। अकेले होने का मतलब भाग जाना नहीं है, अकेले होने का मतलब, इस सत्य को जानना है कि मैं अकेला हूं। अकेला रहता हूं, अकेला हूं, अकेला जाऊंगा। साथी हूं, संगी हैं, रास्ते पर, राहगीर की तरह मिले हुए मित्र हैं। साथ थोड़ी देर हम हैं और विदा हो जाएंगे। साथ होना बुरा नहीं है, लेकिन इतना साथ हो जाना कि अपने होने का बोध ही मिट जाए, मंहगा है। साथ जरूर हों, पत्नी हो, पति हो, बेटे हो, मित्र हों, समाज हो, यह सवाल नहीं है, लेकिन सबके बीच निरंतर अपने को अकेला जाना जा सके, पहचाना जा सके, तो फिर भीड़ में भी अकेले हो सकते हैं। और अकेले होने की कला मालूम न हो, तो जंगल में भी अकेले नहीं हो सकते हैं। वहां भी भीड़ मौजूद रहेगी।

दूसरा प्रयोग है अकेले होने का—जैसा अभी हमने अंधकार का भाव किया। तो पहले हम अंधकार का भाव करेंगे, एक मिनट। जब अंधकार घिर जाएगा तब हम दूसरा भाव करेंगे कि मैं बिलकुल अकेला हूं, अकेला हूं, एकदम अकेला हूं, कोई भी साथी नहीं है, कोई भी संगी नहीं है, कोई मित्र नहीं है, कोई है ही नहीं, मैं बिलकुल अकेला हूं। यह अकेले होने का भाव जितना गहरा होगा, उतना मैं अपन निकट जाऊं

गा। जब तक मैं दूसरे को खोज रहा हूं, जब तक अपने से दूर जा रहा हूं, तो समाधि का दूसरा चरण—मृत्यु का भी दूसरा चरण है, अकेले पन का बोध।

अब हम आंख बंद करें। दूसरे प्रयोग के लिए शरीर को ढीला छोड़ के बैठे। आंख बंद कर लें, शरीर को ढीला छोड़ दें—आंख बंद हो गयी...शरीर ढीला छोड़ दिया...घने अंधकार को चारों तरफ घिरा हुआ अनुभव करें...अंधकार है, अंधकार है...चारों तरफ अंधकार है...कोई दिखायी नहीं पड़ता, कुछ सूझता नहीं...। बस अंधकार ही अंधकार है...छोड़ दें अंधकार में अपने को...

अंधकार ही अंधकार है...और मैं अकेला हूं...दूसरा भाव करें...मैं अकेला हूं...प्राण के कोने-कोने में यह खबर पहुंच जाए कि मैं अकेला हूं। श्वास-श्वास तक यह खबर पहुंच जाए कि मैं अकेला हूं। मन के कण-कण तक यह खबर पहुंच जाए कि मैं अकेला हूं।

मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं बिलकुल अकेला हूं...अकेला आता हूं, अकेला जाता हूं, मैं अकेला हूं...पांच मिनट के लिए इस भाव में, गहरे से गहरे में उतर जाए कि मैं अकेला हूं। मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं बिलकुल अकेला हूं...कोई भी तो नहीं है...मैं बिलकुल अकेला हूं...मैं अकेला हूं...कोई भी तो नहीं है, संगी, साथी, प्रियजन, कोई भी तो नहीं है...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं बिलकुल अकेला हूं, पांच मिनट के लिए एक ही भाव में डूब जाए—मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं बिलकुल अकेला हूं, पांच मिनट के लिए एक ही भाव में डूब जाए—मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...और विराट शांति उतर आएगी। मैं अकेला हूं...

मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...चारों तरफ घनघोर अंधकार है, और मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...

जैसे ही बिलकुल अकेले रह जाएंगे, सब शांत हो जाएगा, ऐसा शांत जैसा कभी नहीं हुआ, मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...

मैं अकेला हूं...मैं बिलकुल अकेला हूं...चारों तरफ अंधकार, और मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...चारों तरफ अंधकार और में अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...। मन शांत हो जाएगा...मन बिलकुल शांति हो जाएगा। मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...कोई कहीं, कोई नहीं, बस अंधकार है...और मैं अकेला हूं...

मैं अकेला हूं...चारों ओर अंधकार, अंधकार...और में अकेला हूं...मैं बिलकुल अकेला हूं...

अकेला हूं...अकेला हूं...अकेला हूं...चारों ओर अंधकार और मैं अकेला हूं। मन बिलकुल शांत हो जाएगा। सब अशांति दूसरे के साथ है...सब अशांति दूसरे के साथ है...मैं अकेला हूं, तो कैसी अशांति है...मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...सब शांत हो गया है।

अकेला हूं...अकेला हूं...अकेला हूं...अंधकार है,...अंधकार है और मैं अकेला हूं। मन शांत हो गया है। समाधि की दूसरी सीढ़ी है, अकेले होने का भाव। इस भाव को ठी क से पहचान लें। मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं...

फिर धीरे-धीरे आंख खोलें। चारों तरफ लोग दिखायी पड़ेंगे, फिर भी लगेगा, मैं अके ला हूं...लोग हैं चारों तरफ, लेकिन मैं अकेला हूं। धीरे-धीरे आंख खोलें, चारों तरफ बड़ा सागर है, लेकिन मैं अकेला हूं।

फिर तीसरा प्रयोग समझें--और पांच मिनट के लिए तीसरे प्रयोग को करें।

अंधकार मृत्यु का पहला अनुभव है, अकेले होने का, निपट अकेले होने का अनुभव, मृत्यु का दूसरा अनुभव है, और तीसरा अनुभव है उस आदमी के मिट जाने का ि जसे मैंने अब तक जाना था कि मैं हूं। जिसे मैंने समझा था कि मैं हूं, नाम था जिस का, मकान था जिसका, इज्जत थी, पता ठिकाना था जिसका। मृत्यु का तीसरा अनु भव है, उस आदमी का मिट जाना, जिसे मैंने जाना था कि मैं हूं। जरूर जिसे हम जानते हैं, उसके पीछे भी कोई है जो कभी नहीं मिटता। लेकिन उसे हम नहीं जान पाएंगे नहीं पहचान पाएंगे। जब तक यह पर्त न मिट जाए, जिसे हम जानते हैं अपन ा होना। इसलिए तीसरा प्रयोग है इस बात के अनुभव का कि मिट गया मैं, वह जो था, नाम था, ठिकाना था। मिट गया, मिट गया मैं मिट गया हूं, क्योंकि मैं अपने को जैसा जानता हूं, वह मृत्यु में मिट जाएगा। समाधि में इस तीसरे अनुभव को ती व्रता से उतारना है कि मैं मिट गया हूं, मैं मर गया हूं, मैं मर गया हूं। तीसरा अनु भव मिटने का अनुभव है। जब अंधकार पूरा हो जाएगा और मैं बिलकुल अकेला रह जाऊंगा, तब मिटना बहुत आसान होगा। और जब मैं मिट भी जाऊंगा जब जो शे ष रह जाएगा वही है, दी रिमनिंग, वह जो पीछे बच जाता है। जिसे अंधकार डुबा नहीं पाता, जिसे अकेले होने से कुछ टूटता नहीं, और जिसके मर जाने से भी कुछ मिटता नहीं, फिर जो पीछे रह जाता है, वह है।

तीसरा प्रयोग है मिटने का--और जब आप मिट जाएं, मिट गए हों, तो आप कुछ भ ी नहीं कर सकते हैं। आपके करने का कुछ बाकी नहीं रह जाता है। फिर आप रह जाते हैं, जो रह जाएगा, रह जाएगा, जो खो जाएगा वह खो जाएगा। इस तीसरे प्र योग को सर्वाधिक केंद्र पर समझना चाहिए समाधि में मिट जाने का।

एक फकीर लोगों को समाधि के संबंध में समझाता था। लेकिन वह कहता था, जो थोड़ा जानता हो वही मेरे पास आए। एक युवक उसके पास गया है। उसे युवक ने कहा है, मुझे सीखनी है समाधि। उसने कहा, कुछ थोड़ा जानते हो तो आओ। लेकि न वह युवक कुछ भी न जानता था। उस फकीर ने उसे द्वार के बाहर करके द्वार बं द कर लिए। उस युवक ने सोचा कि मैं कैसे बताऊं कि मैं कुछ जानता हूं, मैं कुछ जानता नहीं। उसने पास पड़ोस में, लोगों से जाकर पूछा कि क्या कहने से फकीर उ से स्वीकार कर लेगा। तो उन लोगों ने कहा, जहां तक हमें पता है फकीर सिखाता है समाधि, यानी मर जाना। तो तुम जाकर जब फकीर कहे कि कुछ जानते हो, तो गिर पड़ना और मर जाना। उसने कहा, ऐसे कैसे मरूंगा? गिर पड़ सकता हूं, लेकि

न मरूंगा कैसे? तो उन्होंने कहा,तुम तो आंख बंद करके पड़ जाना। तो फकीर सम झेगा कि थोड़ा तो जानते हो। वह युवक गया। सीख के आया था।
सीखा हुआ सदा झूठा होता है। दूसरे से सीखा हुआ कैसे काम पड़े। जैसे ही उस गुरु ने पूछा कि जानते हो? वह तत्काल गिरा और मर गया, यानी आंख बंद करके हा थ पैर ढीले छोड़ के पड़ रह गया। गुरु ने कहा, बिलकुल ठीक, बिलकुल ठीक, लेकि न, कम से कम, एक आंख खोलो तो उस युवक ने सोचा, शायद यह जरूरी होगा ि क समाधि में एक आंख खोल लें। पर एक आंख खुलती नहीं। एक खोल ली, तो दो नों आंखें खुल गयी। उस गुरु ने कहा उठो, और बाहर निकल जाओ। किससे सीख के आए हो? कहीं मुर्दा आदमी आंख खोलता है? अगर मर ही गए थे, तो मर ही जाना था, आंख क्यों खोली? मरा हुआ आदमी कुछ भी नहीं करता है।
तीसरा जो प्रयोग है कि मर ही गए, उसका मतलब है कि फिर पांच मिनट आपको कुछ नहीं करना है। अगर शरीर गिरे तो गिर जाए, झुके तो झुक जाए, जो हो, ह ो। अगर बाहर कोई रही है, सुनते रहें। मरा हुआ आदमी कुछ नहीं कर सकता। य ह भी तो नहीं कह सकता कि कार आवाज नहीं करनी चाहिए। कर रही है, मरा हु आ आदमी क्या करेगा? मरा हुआ आदमी पड़ा हुआ रहेगा। जो सुनायी पड़ रहा है, सुनायी पड़ेगा नहीं सुनायी पड़ रहा है, नहीं सुनायी पड़ रहा है। चीजें जैसी हैं वैसी ही स्वीकार कर लेगा। मरा हुआ आदमी कुछ भी तो नहीं कर सकता।
एक फकीर के संबंध में मैंने सुना है कि वह फकीर सदा दूसरे से पूछा करता था। उ सने, एक दिन गांव में एक ज्ञानी आया और उससे पूछा कि किसी दिन मैं मर जाऊं , तो मुझे कैसे पता चलेगा कि मैं मर गया। तो मुझे कोई तरकीब बता दें कि जिस से मैं जांच करूं कि मर तो नहीं गया हूं। तो उस ज्ञानी ने कहा, यह भी कोई जांच करने की बात है। जब मरोगे तो हाथ पैर बिलकुल ठंडे हो जाएंगे। ठंड के दिन थे, बर्फ पड़ रही थी। वह फकीर जंगल में कुछ लकड़ी काटने गया। हाथ ठंडे हो गए, उसने हाथ छुआ, उसने देखा, मालूम होता है मौत आ रही है। उसने कुल्हाड़ी नीचे पटक दी। एक वृक्ष पर लेट गया, क्योंकि मरे हुए आदमी को लेट जाना चाहिए। नि यमानुसार वह लेट गया। हाथ ठंडे होते गए, लेट जाने से और जल्दी ठंडा हो गया। कुल्हाड़ी चलाता था तो थोड़ी गर्मी भी थी। जब बिलकुल ठंडा होगा गया, तो उसने कहा कि अब मर ही गए।
पड़ोस से कुछ लोग निकलते थे, रास्ते पर उन्होंने देखा, बेचारा कोई मर गया है। त ो वह उसकी अर्थी बनाकर, परदेशी लोग थे, मरघट ले जाने लगे। अब उस फकीर ने कहा, हम क्या करें? जब मर ही गए हैं, तो मरघट ले ही जाए जाएंगे। तो वह कुछ भी न बोला। वह अर्थी पर सवार हो गया। अर्थी चली लेकिन अजनबी लोग थे, परदेशी लोग थे। उनको पता न था कि मरघट का रास्ता कौन सा है? चौरस्ते पर आकर वह सोचने लगे कि कोई यात्री निकले, तो हम पूछ लें कि मरघट का रास्त ा कौन सा है। फकीर को तो पता था कि रास्ता कौन सा है। लेकिन उसने कहा कि

पता नहीं मुर्दे बताते हैं कि नहीं बताते हैं। मगर यह वह ज्ञानी से पूछना भूल गया था कि मुर्दों से अगर कोई ऐसा अवसर आ जाए तो कुछ बता सकते हैं कि नहीं? लेकिन बड़ी देर हो गयी, कोई नहीं आया, तो वे चारों बड़े परेशान हो गए, जो उठा के ले गए थे। उन्होंने कहा, बड़ी देर हुई जाती है। तो फिर इसको यही छोड़ जाए और हम अपने रास्ते पर जाएं। दूसरा पहुंचा देगा। फकीर ने कहा, घबड़ाओ मत। रास्ता मुझे मालूम है। जब मैं जिंदा हुआ करता था, तो बाईं तरफ के रास्ते से लोग मरघट जाते थे। जब मैं जिंदा हुआ करता था, तब बाएं तरफ के रास्ते से लोग मरघट जाते थे। तब तो वे चारों घबड़ाकर भाग खड़े हुए कि यह क्या हो गया है। उस फकीर ने कहा, तुम बिलकुल पक्का मानो, मैं मरा हुआ आदमी हूं, सिर्फ यह ज्ञानी से पूछना भूल गया कि मरा हुआ आदमी कुछ बता सकता है कि नहीं बता सकता है। इतनी भर भूल है।

मरे हुए होने का जो पांच मिनट हम अनुभव करेंगे, उसमें कुछ भी नहीं करना है। जो हो जाए उसे होने देना है। रास्ता भी नहीं बताना है। रास्ते से कोई गुजरता हुआ हो, हार्न तो यह भी नहीं सोचना है कि लोग शोर क्यों कर रहे हैं? कोई आपके ऊपर गिर भी जाए, तो भी हनीं सोचना है कि यह क्यों गिर गया है? मुर्दे को स्वीकार कर लेना चाहिए जो हो रहा है, हो रहा है। पांच मिनट के लिए मुर्दा होने का प्रयोग करें, फिर हम ध्यान के लिए बैठेंगे।

शरीर को ढीला छोड़ें और आंख बंद कर लें—शरीर को ढीला छोड़ दें, आंख बंद कर दें। आंख बंद कर लें...शरीर को बिलकुल ढीला छोड़ दें। अभी छोड़ सकते हैं, अभी मर नहीं गए। मर गए तो कुछ भी न कर सकेंगे, बिलकुल ढीला छोड़ दें। शरीर ढीला छोड़ दिया है...आंख बंद कर दी है...एक मिनट के लिए अंधकार को लौटा दें ... चारों ओर अंधकार ही अंधकार है...चारों ओर अंधकार ही अंधकार है...अहंकार ही अंधकार है...

फिर दूसरा भाव कर लें, मैं अकेला हूं, कोई संगी साथी नहीं है...मैं बिलकुल अकेला हूं—मैं अकेला हूं...मैं बिलकुल अकेला हूं।

और अब तीसरा अनुभव करें...मैं मर रहा हूं...मैं खो रहा हूं...मैं मिट रहा हूं...मैं मिटा जा रहा हूं...मैं मर रहा हूं...मैं समाप्त हो रहा हूं...मैं मर रहा हूं...मैं मिट रहा हूं ...मैं समाप्त हे रहा हूं...पांच मिनट के लिए मैं मर रहा हूं...मैं मिट रहा हूं...मैं समाप्त हो रहा हूं। मिट जाए...बिलकुल मिट जाए...जैसे हैं ही नहीं...मर जाए, जैसे बचे ही नहीं...फिर जो बचेगा, बच रहेगा...वह आप नहीं हैं, वह जो बचा है, वह परमात्मा है। वह जो बचेगा वह आप नहीं है, वह जो बचा है, वह आत्मा है।

मिट जाए...बिलकुल मर जाए...मैं हूं ही नहीं,...मैं मर गया हूं...मैं मर गया हूं..मैं मर गया हूं...बिलकुल मिट जाए...शरीर गिरे, गिर जाए...शरीर आगे झुके, झुक जाए...अब मरा हुआ आदमी कुछ भी नहीं कर सकता, जो हो रहा है, हो रहा है। मैं मर गया हूं...मैं मर गया हूं...मैं बिलकुल मिट गया हूं...मर ही जाए...मिट ही जाए... कुछ भी नहीं बचा...पांच मिनट के लिए खो जाए, समाप्त हो जाएं।

मैं मर गया हूं...मैं मर गया हूं...मैं हूं ही नहीं...मैं मिट गया हूं...मैं समाप्त हो गया हूं...मैं मर गया हूं...मैं मिट गया हूं...मैं समाप्त हो गया हूं।

मैं मिट गया हूं...मैं मर गया हूं...मैं हूं ही नहीं...छोड़ दें...बिलकुल मिट जाए...अपने को छोड़ दें...हूं ही नहीं...मिट गया हूं...समाप्त हो गया हूं...और एक अपूर्व शांति प्राणों पर छा जाएगी...एक अलौकिक शांति मन पर छा जाएगी...मैं मर गया हूं...मैं मिट गया हूं...अब कुछ भी नहीं कर सकता हूं...हूं ही हनीं...छोड़ दें, छोड़ दें...बिलकुल मिट जाए...मैं मर गया हूं...मैं मिट गया हूं...मैं हूं ही नहीं...

मैं हूं ही नहीं...जो है, वह है...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...जो है, वह है ही...मैं नहीं हूं...मैं मिट गया हूं...और देखें, कैसी शांति...कैसी शांति सब तरफ से उतर आती है। मैं मर गया हूं...मैं मिट गया हूं...मैं हूं ही नहीं...मैं बिलकुल मिट गया।

मैं मिट गया हूं, मैं मिट गया हूं...मैं हूं ही नहीं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं बिलकुल नहीं हूं।

मन शांत हो गया है...मन बिलकुल शांत हो गया है...

मैं मिट गया हूं...मैं मर गया हूं...मैं हूं ही नहीं...

मैं बिलकुल मिट गया...मैं मर गया हूं...

इस भाव को ठीक से पहचान लें। यह समाधि का केंद्र है। इस भाव को ठीक से पहचान लें...मैं मिट गया हूं...मैं समाप्त हो गया हूं...मैं हूं ही नहीं...और मन बिलकुल शांत हो गया...

अब धीरे-धीरे आंखें खोलें...तो भीतर सब कुछ मिट गया है...धीरे-धीरे आंखें खोलें...अब जो आंखों से देखता है, वह मैं नहीं हूं।

यह तीन सूत्र हैं समाधि के लिए—पहला, अंधकार। दूसरा अकेला होना। तीसरा समाप्त हो जाना। अब हम अंतिम, दस मिनट के लिए इन तीन प्रयोगों को एक साथ करेंगे। यह तीन मैंने समझाने के लिए अलग-अलग आपको प्रयोग कराए, ताकि आपको खयाल में आ जाए। अब इन तीनों का सम्मिलित प्रयोग दस मिनट के लिए हम करेंगे। उसमें बिलकुल अपने को छोड़ देना है, जैसे खो ही गए, बचे ही नहीं। आवाज आती रहेगी, बाहर मशीन चलती है, कोई सड़क से गुजरेगा और कहीं कोई पक्षी आवाज करेगा। उसे चुपचाप सुनते रहना है। जो हो रहा है, हो रहा है और हम समाप्त हो गए हैं।

अब, अंतिम प्रयोग के लिए बैठे। आंख बंद कर लें, और शरीर को ढीला छोड़ दें। आंख बंद कर लें, और शरीर को ढीला छोड़ दें।

चारों ओर अंधकार है—चारों ओर अंधकार है...मैं बिलकुल अकेला हूं...कोई संगी नहीं, साथी नहीं...ढीला छोड़ दें बिलकुल, मिटने की तैयारी करनी है...बिलकुल ढीला छोड़ दें...अनुभव कर...शरीर शिथिल हो रहा है, शरीर बिलकुल शिथिल होता जा रहा है। अंधकार है घना...चारों तरफ अंधकार ही अंधकार है...मैं बिलकुल अकेला हूं...कोई संगी नहीं, साथी नहीं...और मर रहा हूं, मिट रहा हूं...समाप्त हुआ जा रहा

हूं—जैसे कोई बूंद किसी सागर में मिट जाती है। उस मिटने के लिए तैयार हो जाए। शरीर को बिलकुल ढीला छोड़ दें।

अनुभव करें—शरीर शिथिल हो रहा है,...शरीर शिथिल हो रहा है...बिलकुल ढीला छोड़ते जाए...मिटना ही है...बिलकुल ढीला छोड़ दें...शरीर शिथिल हो रहा है...गिरे गिर जाए, झुके झुक जाए...जो हो, हो...शरीर शिथिल हो रहा है...शरीर शिथिल हो रहा है...चारों ओर अंधकार ही अंधकार है...मैं बिलकुल अकेला हूं...एकदम अकेला हूं...शरीर शिथिल हो रहा है...शरीर शिथिल हो रहा है...श्वास शांत होती जा रही है...श्वास शांत होती जा रही है...मन शांत होता जा रहा है..मन शांत होता जा रहा है...

अब दस मिनट के लिए बिलकुल मिट जाए...जैसे हैं ही नहीं। मैं मर गया हूं...मैं नहीं हूं...मैं मर गया हूं...मैं नहीं हूं...आवाज सुनाई पड़ती रहेगी...सुनते रहेंगे...मरा हुआ आदमी कुछ भी नहीं कर सकता...जो हो रहा है, उसे जान लेता है...स्वीकार कर लेता है। दस मिनट के लिए बिलकुल मिट जाए, और इस मिटने से बिलकुल नयी शांति, नया आनंद और एक नया अनुभव जन्मेगा।

मिट जाए...मैं मर रहा हूं...मैं मर रहा हूं...मैं बिलकुल मिट गया हूं...

अंधकार ही अंधकार है...अंधकार ही अंधकार है...और मैं बिलकुल मिट गया हूं...मैं हूं ही नहीं...सब शांत हो जाएगा...भीतर एक अनूठा आनंद उठने लगेगा...

मैं मर गया हूं, मिट गया हूं...मैं बिलकुल मिट गया हूं...मैं हूं ही नहीं...मैं नहीं हूं। मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं... मैं हूं ही नहीं...मैं हूं ही नहीं...मैं हूं ही नहीं...सब शांत हो गया है...और एक गहरे आनंद की लहर भीतर उठने लगेगी...सब शांत हो गया है...मैं नहीं हूं...मैं मिट गया हूं...मैं मर गया हूं...

22 मार्च 1970 पूना